प्रसंग पारिजात

लेखक :

श्री स्वामी सेवक दास जी महाराज

प्रकट कर्ता :

परमहंस श्री राममंगल दास जी महाराज

गोकुल भवन, अयोध्या जी

जगद्गुरु श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज

प्रकाशक : श्री रामसेवक दास जी

अध्यक्ष :

परमहंस बेनी माधव राममंगल दास सेवा संस्थान

गोकुल भवन, अयोध्या

संस्करण : प्रथम १००० प्रति मात्र

प्रकाशन तिथि :

आषाढ़ गुरु पूर्णिमा, वि० स० २०४९, मङ्गलवार

१४ जुलाई, १९९२ ई०

पुस्तक प्राप्ति स्थान : गोकुल भवन अयोध्या जी

मुद्रक : श्री अशोक कुमार सिंह

न्योछावर ५१)०० रुपया मात्र

मुद्रण :

कृपा पुरुषोत्तम प्रकाशन एण्ड प्रिंटिंग प्रेस, गोकुल भवन, अयोध्या
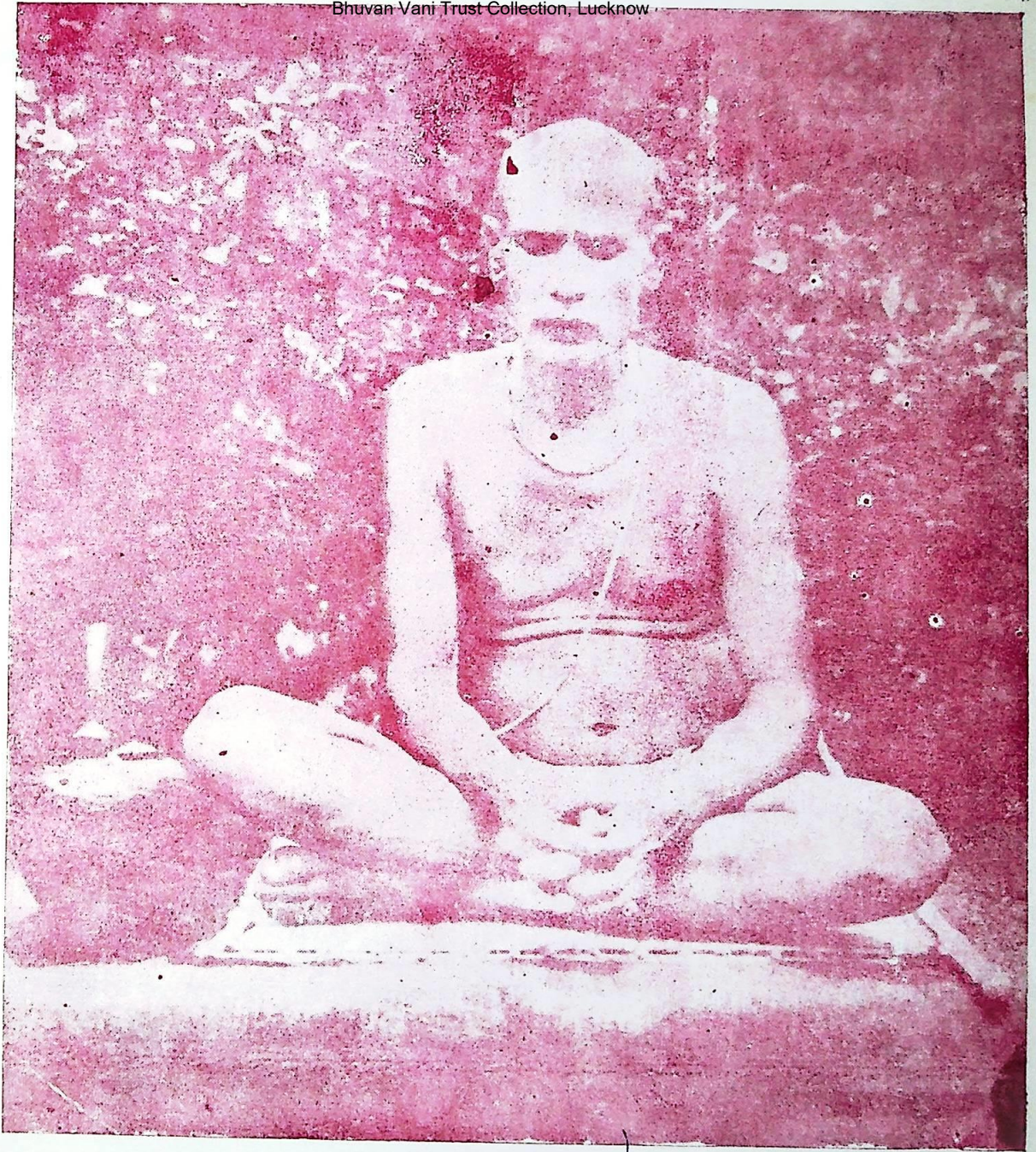
निखिल शास्त्र पारंगत, अध्यात्म ज्ञान वितरण दक्ष, नित्य, अनहद्द नाद रत, राजयोगी, सर्व धर्म समन्वय के प्रतीक कृपा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम मंगल दास जी महाराज, गोकुल भवन, अयोध्या जी

जन्म तिथि :–
फाल्गुन कृष्ण १०, वि० सं० १९४९
१२ फरवरी १८९३ ई०

निर्वाण तिथि :–
पौष शुक्ल ९, वि० सं० २०४१
३१ दिसम्बर १९८४ ई०

ग्रन्थ-परिचय

प्रस्तुत अनुपम ग्रन्थ 'प्रसंग पारिजात' हमारे वैष्णव जगत के आचार्य शिरोमणि प्रातस्मरणीय श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी का जीवन दर्शन है। प्रयागवासी विप्र दम्पत्ति की तपस्या और प्रीति से प्रसन्न हो स्वयं श्री भरत लाल जी ने उनके पुत्र होने का वरदान देकर सन्तुष्ट किया और बालक रूप से प्रगट हो स्वामी रामानन्द जी के नाम से जगत् विख्यात हुये। श्री भरत लाल जी के रूप में जैसे आपने प्रभु श्रीराम के चरणों में ही अपने जीवन को सर्वतोभावेन समर्पित कर रखा था वही निष्ठा, वही प्रीति, वही रहनी आपके इस रूप में भी देखने को मिलती है।

१५ वीं सदी में समस्त उत्तर भारत आचार्य श्री के तप: तेज से जाज्वल्यमान था। आपके द्वादस शिष्य सुविख्यात तपस्वी सन्त थे। अपने जीवन के अन्तिम काल में आचार्य श्री ने समस्त भारत का भ्रमण कर अपनी प्रखर आध्यात्मिक शक्ति के बल पर बड़े बड़े सम्राटों को प्रभावित किया, मुगल राजाओं को अत्याचार से विरत किया और शैवों द्वारा किये जा रहे वैष्णवों पर अन्याय को रोका। अलौकिक शक्ति सम्पन्न स्वामी जी ने ऐसे ऐसे अद्भुद कार्य किये कि जिनको पढ़कर सुनकर कोई भी आध्यात्म प्रेमी आचार्य श्री के चरणों में श्रद्धानत् हुये वगैर नहीं रह सकता।

आचार्य श्री के द्वारा सम्पादित होने वाले अलौकिक कार्यों का वर्णन भी वही कर सकता है जो कि स्वयं अलौकिक दृष्टि सम्पन्न एक सिद्ध पुरुष हो। अत: इस कार्य को तत्कालीन आचार्य श्री के शिष्य संघ के मध्य रहने वाले अलौकिक दृष्टि सम्पन्न परम श्रद्धेय सिद्ध सन्त श्री चेतन दास जी ने किया। आचार्य श्री द्वारा सम्पादित अनेकों गुप्त प्रगट बृत्तान्त माला देशवाड़ी प्राकृत में पिशाच (गण) भाषा के सांकेतिक शब्दों के योग से अदणा छन्द में दिव्य साहाय्य से संग्रथित किये गये। इस भाषा में लिखने का कारण यह था कि इसमें कुछ बृत्तान्त ऐसे हैं जो प्रकट नहीं किये जाने चाहिये और कुछ ऐसे हैं जिनको उस समय तक छिपाना था जब तक वह घटना घटित न हो जाय। भविष्य में घटने वाली घटना को पहले से ही जन समक्ष में प्रकट कर देने से महापुरुषों द्वारा होने वाले कार्य में व्यवधान उपस्थित करना है अत: इसे गुप्त रखने के आशय से ही इस भाषा में ग्रथित किया गया। इसी कारण सम्बत् १५१७ वि० से लेकर सम्बत् २००७ वि० तक लगातार सिद्ध जानुक द्वारा रक्षित और गुप्त रहा। ग्रन्थ के निर्देशानुसार इसे समाज के सम्मुख प्रकट करने का निश्चय उस समय के सिद्ध महापुरुष द्वारा किया जावेगा।

ग्रन्थ के इसी आशय को ध्यान में रखते हुये बीसवीं सदी के युगावतार, गुरुणां गुरु, परम श्रेष्ठ सिद्ध सन्त गोकुल भवन अयोध्या में नित्य सेवित, पूजित और महिमान्वित हमारे श्री गुरुदेव परमहंस श्री राममंगल दास जी महाराज ने समय आने पर इसे समाज के सम्मुख खोलने का निर्देश दिया। श्री महाराज जी आध्यात्म की ऐसी उच्च दशा को प्राप्त थे जिसमें उन्हें अहर्निशि ऐसी दिव्य आत्माओं से साक्षात्कार और वार्तालाप होता था जो कि भौतिक दृष्टि से गोचर नहीं थे । श्री महाराज जी के सान्निध्य में सूक्ष्म जगत में विद्यमान लगभग सभी देवी–देवताओं एवं हिन्दू मुस्लिम, सिख, इसाई महजबों के सिद्ध महापुरुषों का आगमन हुआ। उनसे जो कुछ श्री महाराज जी का वार्तालाप हुआ श्री महाराज जी ने उन्हें ग्रन्थ का रूप प्रदान कर आश्रम में संग्रहीत कर लिया । श्री महाराज जी सन् १९८४ ई० में अपनी इहलौकिक लीला को समेट कर अपने नित्य धाम में विराजमान हो गये परन्तु उनके द्वारा प्रदत्त दिव्य साहित्य आज भी गोकुल भवन अयोध्या में प्राप्य है ।

परम्परागत सिद्ध जानुक द्वारा रक्षित यह ग्रन्थ श्री महाराज जी को उस समय (सन् १९५० के लगभग) के एक श्रेष्ठ विद्वान सन्त श्री बालकराम जी विनायक के द्वारा प्राप्त हुआ था। श्री विनायक जी हमारे आश्रम गोकुल भवन के अंग स्वरूप भवन के एक कमरे में रहा करते थे । श्री विनायक जी वेदों के पारदर्शी विद्वान थे, सन्तों के कृपापात्र थे । उन्होंने ही श्री महाराज जी के निर्देश से इसका हिन्दी अनुवाद किया। इस ग्रन्थ का प्रकाशन एक बार श्री महाराज जी के शरीर रहते ही उनकी इच्छा के विपरीत हो गया था जिसका परिणाम यह हुआ कि पुस्तक में अनेकों अशुद्धियाँ हो गयीं । उस समय श्री गाँधी जी विद्यमान थे। इस ग्रन्थ में श्री गाँधी जी के जन्म की भविष्य वाणी विद्यमान है। इस कारण श्री महाराज जी ने उसे छापने से मना किया था ।

अब सन् १९९२–९३ ई० जब कि इसके प्रकट करने का उपयुक्त समय आया है, हमारे परमहंस बेनी माधव राममंगल दास सेवा संस्थान गोकुल भवन, अयोध्या के अध्यक्ष परम श्रद्धेय वीतराग सन्त श्री रामसेवक दास जी महाराज के सत्संकल्प स्वरूप, १४ जुलाई, दिन मंगलवार सन् १९९२ ई०, तदनुसार आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा वि० स० २०४९ को पूर्ण हुआ। इस ग्रन्थ के मुद्रण का कार्य हमारे आश्रम के कृपा पुरुषोत्तम प्रकाशन एण्ड प्रिंटिंग प्रेस के मालिक श्री अशोक सिंह ने बड़ी ही निष्ठा व लगन से पूरा कर लागत मूल्य में हम सबको उपलब्ध कराया है। इसके लिये वे महापुरुषों के आशीर्वाद के पात्र हैं।

ग्रन्थ की अमूल्य उपादेयता तो इस अर्थ में जन हितकारी है कि इसके पाठसे मनुष्य की चतुर्वर्ग जनित आकांक्षाओं की पूर्ति का इसमें विधान है लेकिन अष्टपदियों का अनुष्ठान करने से पहले उसकी विधिवत् जानकारी कर लेना परमावश्यक है अन्यथा अनुष्ठान करने पर भी उसकी फल प्राप्त नहीं हो सकता है। अतः इस हेतु अनुष्ठान करने के इच्छुक पाठक गणों से निवेदन है कि वे हमारे गोकुल भवन आश्रम के अध्यक्ष श्री स्वामी रामसेवक दास जी महाराज से अवश्य सम्पर्क कर लें।

सिद्ध महापुरुषों द्वारा वर्णित ग्रन्थ की महत्ता का वर्णन करने में सामान्य संसारी बुद्धि वाले प्राणी की वाणी में सामर्थ्य कहाँ? इसकी महत्ता तो पाठकगणों को स्वयं ही ग्रन्थ के पठन से विदित हो जायेगी।

१४ जुलाई, गुरु पूर्णिमा १९९२ ई०
दिन मङ्गलवार, वि० स० २०४९

प्रेमानन्द दास
गोकुल भवन

दो शब्द

श्री कृपा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम मंगल दासजी महाराज (गुरुदेव भगवान) के साकेत वास (१९८४) उपरान्त मुझे प्रेरणा हुई कि दिव्य साहित्य का क्रमशः प्रकाशन किया जाय। प्रयास स्वरूप अशोक सिंह ने गोकुल भवन में एक प्रेस स्थापित किया। तत्पश्चात श्री गुरु कृपा से परम पूज्य सन्त कार्ष्णि स्वामी श्री जगदानन्द जी महाराज, मोती झील बृन्दाबन एवं डा० श्री राजेन्द्र सिंह प्रबन्धक इलाहाबाद बैंक की प्रेरणा एवं आर्थिक सहयोग से इस "प्रसंग पारिजात" ग्रन्थ का प्रकाशन कार्य सफल हुआ। आप दोनों मूर्ति श्री महाराज जी के एक निष्ठ भक्त हैं।

इस दुरुह भाषायी ग्रन्थ के प्रकाशन कार्य में मेरे गुरु भाई श्री प्रेमानन्द दास जी का शारीरिक सहयोग भी (प्रूफ रीडिंग आदि) सराहनीय है।

मैं त्रिमूर्ति के सहयोग के लिए विशेष आभारी हूं और प्रार्थना करता हूं कि श्री गुरुदेव भगवान उन्हें आध्यात्मिक लाभ का पात्र अवश्य बनावें।

आशा है कि यदि भक्तों का उदार सहयोग मिलता रहा तो निकट भविष्य में सम्पूर्ण दिव्य साहित्य का प्रकाशन सम्भव होगा।

(गुरु पूर्णिमा १४ जुलाई, १९९२ई०)

राम सेवक दास
अध्यक्ष
परमहंस बेनी माधव राममंगल दास सेवा संस्थान
गोकुल भवन, अयोध्या

॥ राम राम राम राम ॥

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

श्री स्वामी चेतन दास कृत

प्रसंग पारिजात

श्री मौनिक महाराजोक्त अनिल नामक
हिन्दी अनुवाद सम्वलित

मंगलाचरण

राम नामामृतं पेयं ध्येयः सीता पतिर्विभुः ।
ज्ञेयो विशुद्ध तत्वज्ञो रामानन्दो जगद्गुरुः ॥

श्री रामो जयति

अदना छन्द

अष्ट पदी ॥१॥

हिम हिम हमन्ता हौलड़ी मद माघ मघवा मौलड़ी ।
तल तड़ित ताड़ण तौलड़ी घर घर घुरन्ता घौलड़ी ॥१॥
वत्स्या करींदी सरसई गंगा गलौला गड़रई ।
तिगंति तलछा मद मई आसार साणे वैथई ॥२॥
सारंग धर ठिप्पण ठिया वाजुराट विभु वैगुण विया ।
माधूम मत्सर मौलिया चिर छैभ जारण जाजिया ॥३॥
मव तूल सण्डित वाहुणी आमुल मलेच्छ मथागुणी ।
अणु फागुणी तणु पारूणी तुरकान दल दल दारूणी ॥४॥
ह्राहूम देसिक तिप्पिया भरदार वौड़ा किप्पिया ।
लोलिम नवारा लिप्पिया सिविका सणारा छिप्पिया ॥५॥
हृषि फाम फाता फैबड़ा सर सूत तोनिस तैवड़ा ।
घुण वास डीहम धैबड़ा हिंसक अहिंसक सैबड़ा ॥६॥
पालतू पैरामू जणस साबूत तैरम तोहमस ।
आयूष कैवम दौंद दस संकर जुसोरस वरस जस ॥७॥
आहूम तीवर चवरसा कैयूम वरवा हिच्छरा ।
जैं मूम क्रेसव धम्मदा सासूम सेणित बब्बहा ॥८॥

अर्थः— राज्य मद रूपी माघ का महीना है। जड़ता रूपी जाड़ा यौवन पर है, द्वेष रूपी इन्द्र का हिंसा भाव रूपी श्याम दूत मेघ अत्याचार रूपी वर्षा कर रहा है। धर्म ध्वंसिनी ताड़ना रूपिणी विजुली के प्रकोप से प्रजा त्रस्त है। घर घर हाहाकार मचा हुआ है। कोई किसी की सुधि नहीं लेता ॥१॥

वत्स्या (प्रयाग) तीर्थराज की पृथ्वी त्रिवेणी की तरी से उर्वरा हो कर सस्य सम्पन्न है सुहावनी मालूम होती है। पवित्र गंगा तट पर बूढ़े बूढ़े ब्राह्मण वेद पाठ करते हुये ध्यान में मग्न हो रहे हैं उनके तप से सुकृत का उदय हो रहा है ॥२॥

श्री मन्नारायण ने करवट बदली। लक्ष्मी ने चरण चुम्बन किया। शेष तो सजग थे ही, भूभार से व्याकुल हो रहे थे। पाञ्चजन्य बजा, राम नाम की ध्वनि गूँज उठी। मत्सरादि पक्षी उड़ गये। भगवान् संशय नाशक बचन बोले ॥३॥

धर्म रक्षक राजन्य वर्ग म्लेच्छों के अत्याचार से त्रस्त होकर अपने भुजबल को हार बैठे हैं। वे यह भी भूल गये हैं कि विधाता के बाहु से उनकी उत्पत्ति हुई है, तुरकों का दल धन धरनी हरण कर चुका और उन्माद रूपी घोड़े पर सवार कलि रूपी कर बाल हाथ में लिये धर्म रूपी बैल के पीछे पड़ा हैं ॥४॥

ब्राह्मण, साधु सन्यासी सेवड़ा हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। पोथी पत्रा लपेट कर रख दिए हैं। अपने प्राण रक्षा की ही चिन्ता उन्हें है। इसके लिये उन्होंने सबसे मुँह फेर लिया है। वे स्वयं धर्म के शत्रु बन गये हैं। द्वेष के कारण एक दूसरे के रक्त के प्यासे हो रहे हैं। उनकी विचित्र दशा है ॥५॥

हृषीकेश में भगवान् हृषीकेश के मन्दिर में सारस्वत दम्पत्ति सेवा पूजा करते थे। भरत जी उनके प्रेम के वश हो गये थे। बदरी वन में निस्सहाय अवस्था में स्वयं जाकर उनकी रक्षा की थी, अन्त में भगवान ने उनसे वर माँगने को कहा ॥६॥

उन्होंने प्राचीनों का मार्ग अवलम्बन करके यही वर माँगा कि आप जैसा ही मेरे पुत्र हो। भगवान ने स्वयं पुत्र रूप से जन्म लेना स्वीकार किया परन्तु केवल बारह वर्ष के लिये जैसे शंकर जी सोलह वर्ष के लिये अवतरित हुये थे ॥७॥

त्रिवेणी के तट पर उन्होंने कान्य कुब्ज वंश में जन्म लिया। उनका मनोरथ पूर्ण होने वाला है। भगवान् केशव धर्म ग्लानि दूर करने के लिये आचार्य रूप से अवतरित होने वाले हैं ॥८॥

अष्ट पदी ॥२॥

मस्तीण सुरबा डाहिबी आसीण औड़म थाहिवी ।
धी धी धिना नुप जाहिबी फी फी फिना सत साहिबी ॥१॥

कौडीम कोणथ करतरी उनत्रीस ओखर धर धरी ।
फातेस जस्ता जर जरी टाणेस टर वर भर भरी ॥२॥

णुंगार को दर कामरा खुम्मार खर खच चामरा ।
गुम्मार गोपण छामरा हुंणार पारद पामरा ॥३॥

मुसली पटम मुक्तावली तांजौर तौरम सासली ।
वृधन्तु तस्ता मावली मौणस मनन्ता दाकली ॥४॥

घनश्याम गस्ता गेरूणा पत पाम पस्ता पेरूणा ।
सर देस सिस्ता वेरूणा लाखोस किस्ता हेरूणा ॥५॥

मादार णौहर गर सहा सौमार सौहर सरसहा ।
तिस्कीण पैहर मरदहा पंथीण हैहर कड़कहा ॥६॥

जातूण बौना वैणसा मातूण दौना हैणहा ।
सातीर चौहा माहुमा वासीर गौहा साधुमा ॥७॥

चर पर घुणेटी टारसी भर भर वणैटी मारसी ।
तिस्मी तरैटी धारसी हिची हरैटी हारसी ॥८॥

अर्थः– शंख वार्ता रूपी दिव्य निनाद को सुनकर सर्पराज (शेष जी) ध्यान मग्न हो गये और लक्ष्मी रूपी मृगी आनन्दित हो गई। थकित हो गई। यह क्षीर सागर का समाचार है। भूतल में सम्पूर्ण वाद्यो में तथा गायकों के स्वरालाप में यही ध्वनि व्याप्त हो गई। जिसके कारण उनमें ऐसी दिव्यता आ गई कि प्रभुत्व शाली समस्त नर नारी तन्द्रा के वशीभूत होकर सुख मग्न हो गये ॥१॥

कौडिल्य आदि २९ सिद्धों की जमात सूर्योदय के पहिले अरुणोदय की भाँति प्रयाग में पहले ही से डेरा डाले पड़ी थी, वे भाग्य भाजन ब्राह्मण के घर की नित्य फेरी लगाते थे। तीर्थेश आश्रमी महर्षि भरद्वाज जी की अचल समाधि भंग हुई और वे विचारने लगे कि माजरा क्या है ॥२॥

जननी अपने जठर में स्थित भगवत् प्रकाश को देखकर अपूर्व दशा को प्राप्त हुई। संगमा देवी (त्रिवेणी) ने उन्हें सावधान किया और माधव ने पूजन के निमित्त आई हुई गर्भवती को दाहिनावर्त्त शख प्रसाद रूप में प्रदान किया जिसे पाकर विप्र वधूटी ऐसी प्रसन्नता को प्राप्त हुई जिस तरह रसायन शास्त्री परमेष्ठ पारद पाकर निहाल हो जाता है ॥३॥

मुमली पटम, मुक्तावली (दक्षिण भारत) तंजोर शैषुयाली अर्थात विन्ध्योत्तर, बृन्तरा (गुजरात) मावली (उत्कल प्रान्त) मार्तण्ड (काश्मीर) और दाकली (सिंध) के ज्योतिर्विद मकर मज्जन और अपनीविद्या का चमत्कार देखने के हेतु वहाँ पहुंच गये थे ॥४॥

काली घटा छाई हुई है। कल्पवासी लोग अपनी अपनी झोपड़ियों में बैठे थर थर कांपते हुए हरिहर की शरण पुकार रहे हैं। अग्निदेव अत्यन्त शीत से घबड़ा कर लोगों की गोद में छिप रहे हैं। क्षपाकर मुँह पर काला दुपट्टा डाले करवट बदल रहे हैं ॥५॥

तारकावली का पता नहीं कि कहाँ अथय गये। कहीं से कोई शब्द सुनाई नहीं देता। हाँ त्रिवेणी तट पर बैठा योगी इस समय भी अलख जगा रहा है। उसके कुत्ते उसके साथ अपना कर्कश स्वर मिलाकर मेघराज की गर्जना करते रहते हैं ॥६॥

जम्बुक का आज पता नहीं है वह मुँह छिपाकर अपनी माँद में बैठा होगा अथवा पृथ्वी में गड़े हुये म्लेच्छों के शव को खोदकर निकालने में लगा होगा। सबको साव-धान करने के लिये दौना पक्षी आकाश की ओर ताक रहा है ॥६॥

प्राकृति दृश्य के इस वर्णन के गूढ़ अभिप्राय को समझना चाहिये तब देशकाल का ज्ञान प्राप्त होगा। विना इसके विभव के आविर्भाव का रहस्य कैसे जाना जा सकता है। मर्मी मर्म को ताड़ जाते है ॥८॥ [इस अष्टपदी को पीपल अथवा मूर्ज पत्र पर लिखकर कच्चे सूत में सुन्दर मुहूर्त में गले में पहनने से गर्भ की रक्षा होती है]

इयं चापर्णास्टके तज्जी उंजी हासुणस तिहुरावो था भुंजीह मेतव लुपहा मा॥

अष्टपदी ॥ ३ ॥

धुवधी धरित्री णोसणी आमोह इन्ना वोमणी ।
चाथोसि तिग्गा तोषणी करतार नैसा दोषणी ॥१॥

चरिआ चिणग्गा चरपहा अरिया दुहण्णा जिनपहा ।
वारस्त मेडरा दरपहा ताणिस तपसा पहपहा ॥२॥

कौटिम कुरंटा करसुई सायुण मरंडा मतपुई ।
जाखिम जणावा हुत हुई णौरेसु वरणा कुह कुई ॥३॥

झाऊस वौरम बरतई ताऊस णीरूल तरतई ।
खेताण खरखस सरतई सौराण पीरा मरतई ॥४॥

फरदा फुरन्ता फेमहा णवणा परस्ता जेज़हा ।
तरतिस तुरीया बेबहा नौ नार लोभुक पेपहा ॥५॥

टरसा टिपंपा तौहरी डानूब जैरा जौहरी ।
खंसास वैरा पौहरी मरदूम मौनी मौहरी ॥६॥

मकनून मुरवी मंठरा के फाम क़ुरनी संठरा ।
पालैस पेहम खंठरा आलार अव्वम जंठरा ॥७॥

माणस जजीरा जैतुणा कसरा कनीना वैरूणा ।
चतता छांरिदा है हुणा दिस्ना ज़वारिस मैमुणा ॥८॥

अर्थ:- बुद्धिमान विवेकी लोग सजग हो गये। उनका मन उत्साह से भर गया क्यों कि देखते देखते सबको सुख देने वाला ब्राह्मी मुहूर्त आ गया था जिसके द्वारा विश्वकर्त्ता कायिक मानसिक और वाचनिक दोषों को दूर करता है ॥१॥

चिश्ती रूपी अरुण शिखा ने महत् पुराण पुरुष के आगमन की घोषणा की। अर्हन्ती जिन प्रभु रूपी शुक्रोदय हुआ। जिसके प्रकाश से नास्तिकों में भी आस्तिकता के चिन्ह दिखाई देने लगे। तपस्वियों ने चिमटे बजाकर पौ फटने की सूचना दी ॥२॥

कुटिल मन वाले काक भी मलिन वासना का त्याग करके भगवद्भाव से भूषित होकर अपनी काकली से शुभ शकुन की सूचना देने लगे। क्योंकि मेरू वासी अमर काक उनके पूर्वज वहाँ पहले ही से उपस्थित थे ॥३॥

घटनायें तितर बितर हो गईं और प्रेमी मोर नृत्य से थक कर विश्राम करने लगे। किसान जगे पुण्य पशुओं (गाय बैलों) की शुश्रूषा में लगे। उनके मरे हुए मन को जीवन दान मिला ॥४॥

कुहासा भी तरल हो पृथ्वी पर गिर पड़ा। सुकृती स्नानार्थी झुण्ड के झुण्ड घाट पर गये। योगियों को तुरीयावस्था का अनुभव कराने वाली विमल वारि धारा में मज्जन करके कृत कृत्य होने लगे ॥५॥

उदयाचल पर भुवन भास्कर पहुंच गये। उनका लाल लाल बिम्ब स्पष्ट दिखाई देने लगा। चान्द्रायणी, दुग्धाहारी, मौनी अपने अपने व्रत पर दृढ़ होने के लिए सूर्य नारायण को प्रणाम करने लगे ॥६॥

माता मुर्वी आँगन में बैठी हुई थीं। सूर्य की किरणावली की ओर उनकी दृष्टि आकर्षित हुई। उन्होंने देखा कि उसी किरणावली में से एक तेज पुंज पिण्ड चला आ रहा है। नेत्र चौंधिया गये, मुँह खुल गया ॥७॥

मुख द्वार से वह ज्योति-पिण्ड प्रवेश करके जठर में पहुंचा। चेतना जो लुप्त हो गई थी फिर आ गई और वे स्वस्थ होकर सँभल कर बैठ गईं और इस अपूर्व घटना को पति को बुलाकर कहने लगीं ॥८॥

इयं चार्पणाष्टकं पघीचा माचा पत्य वारिसा णूवा रस मोंतरी तुवासीत् ॥

इस अष्टपदी को नित्य १४ बार पाठ करै और दूब छींटता जाय और साठी खाय खिलावै तो सुन्दर गुणवान पुत्र हो।

अष्ट पदी ॥४॥

दस द्वंद महह भागौत ठा णाधौत सौमिस घाणदा ।
कामौत कुर्रा कम्महा चाँडूर माहर मुत्थहा ॥१॥

पासंत संत णुमैरवी दिग्गन्त जन्त पुसैरवी ।
तावेत तर तप तैरवी जोर्ता: जमाणुत पैरवी ॥२॥

कासार सत्तिमि टाड़रू अप्पाण आहुर बाड़रू ।
लावेट णुंका साड़रू तरताण तौरा थाड़रू ॥३॥

कलधौं पधौ पारीणधा मुस्ता मलापह गीणधा ।
पल्लू पिनापस रीणधा मालूस मत्ता पीणधा ॥४॥

खाकाश खुर्रस खेलड़ा वाहेस वल्ला वेणड़ा ।
डापास डिग्गी तेणड़ा करियार कोकिम केणड़ा ॥५॥

मालौस मोड़ी मत्तगी छर छास छौमी कत्तगी ।
मुक्कासणा णी वत्तगी सरधेस सीता सत्तगी ॥६॥

परणाख पोपर पारसण परमेंड़ जोड़िस कारसण ।
पम्भाण कारूं छारसण झोनूत झैंवट झारसण ॥७॥

ठरपक्क पेहम जर परस णाहूस देहम पाणुपस ।
सरपन्त साडर देरूमस मिसपात माडर धंधमस ॥८॥

अर्थः– शुभ अवसर जानकर द्वादश महाभागत वेद पाठी ब्राह्मण के रूपसे द्वार पर आये और नारायण सूत्र का गान करने लगे। उनके स्वर विन्यास से सुधी गृह स्वामी चकित हो गये। पशु प्राणी थकित हो गये। त्रेता युग का भव्य भाव सबके हृदयमें भर गया। चाणूर मर्दन की जय ॥१॥

फेरी लगाने वाले सिद्ध सन्त अरुणोदय के सहचर सदृश आये और नियमानुसार गृह की परिक्रमा करके द्वार पर बैठ गये पंण्डितराज यह सब देखकर आश्चर्य में पड़े कि क्या माजरा है। किस लिये प्रातः काल ही यह समारोह हो रहा है ॥२॥

मन में विचारने लगे कि आज माघ कृष्ण सप्तमी है। पर्व के यात्री होंगे। विश्राम करने के लिये यहाँ ठहर गये हैं किन्तु ऐसे ब्राह्मण और सन्त कहीं देखने में आते नहीं, सब शान्त हैं। किसी से कोई कुछ कहता सुनता नहीं जिससे इनका अभिप्राय कुछ प्रगट हो। इस समय इनका क्या सत्कार करूँ ॥३॥

इधर घर में माता कुलकरणी को प्रसव वेदना हुई। आँगन से घर में जाते जाते एक परम दीप्तवान दिव्य शिशु प्रगट हुआ जो समाधिस्थ था। माया पति की लीला को कौन लखै। माता ने समझा कि यही मृत शिशु पैदा हुआ है। वे रोने लगीं, क्रन्दन सुनकर बाजपेयी जी दौड़े आये ॥४॥

देखा कि शिशु पालथी मारे आसन से बैठा हुआ है। आँखे बन्द हैं स्वांस की गति जानी नहीं जाती परन्तु मुख पर अपार तेज विराजमान है। यह दशा देखकर उन्होंने अपनी गृहणी को यह कहकर चुप कराया कि शिशु मरा नहीं है ॥५॥

वे बाहर आये और प्रार्थना पूर्वक आगत ब्राह्मणों को और सिद्धों को भीतर लिवा ले गये। वे ऐसा चाहते ही थे। उनके पहुंचते ही शिशु की समाधि टूटी, विशाल नेत्र खुले। शिशु चक्षुओं से ऐसा तेज निकलता था कि सबकी आखें चौंधिया गईं ॥६॥

सिद्धों ने सोने के यव, राजादान पात्र और चन्दन का पासा चढ़ाया। विप्रों और महाभागवतों ने स्तुति की और सेवा में स्वीकृत किये जाने की प्रार्थना की। शिशु ने एक बार उनकी ओर देखा वे क्षण भर के लिये मूर्छित हो गये ॥७॥

मूर्च्छा की दशा में उनको पृथ्वी पर जन्म लेने का आदेश हुआ। वे सचेत हुए फिर स्तुति करके सिद्धों के साथ चले गये। इस प्रथम चरित्र से बाजपेयी दम्पति आश्चर्य में डूब गये। पर शिशु ने बालक्रन्दन द्वारा उन्हें मोह में डाल दिया ॥८॥

इस अष्टपदी से मरछहा शिशु को झाड़े (मोर पंखसे) जनार्दन धूप से आहुति दे तो योगिनी डाकिनी से रक्षा हो, जीवे।

इयं चार्पणांष्कं मीय भारू दागिणू कोइम राछरी भातेउ महगा जियाछीताम्।

अष्ट पदी ॥ ६ ॥

दिट्ठाभ अट्ठभ अट्टरी मिरमाणु कैवटु पट्टरी ।
धण धौल पेहण मट्टरी मावाण जाणस भट्टरी ॥१॥

कौकण्ड वेहुस श्यामड़ा ढक्काणु धर चम वामड़ा ।
मुट्ठालु णौहट आमड़ा चिन्ना चुडा ठण णामड़ा ॥२॥

भैसीणडी वानैथ ठर आप्पण औडत तैण हर ।
मुस पासु जैनब जेतु ढर वुम्मैट कण कस लाल लर ॥३॥

मुक्कण थई णावोस्ता धुक्कण डई खर खोस्ता ।
मन्तप मणावट चोस्ता रामाम जय जय घोस्ता ॥४॥

उप्पैण फीलुण फैलड़ा थारूण तिडडी तैलड़ा ।
वधवारू नोकण ऐलड़ सावित्ति शैशुण मैलड़ा ॥५॥

मंथाणु शंखा सौमली तैगूड गाणुत मौ मली ।
सरहीणु चापिड चौमली कासी करांच्छी जौमली ॥६॥
सुन्ठाणु तारूब तरजनी मंहूक गणि कग पहुधनी ।
गंगालु गंगा कै मनी निठणाणु पंगा सामनी ॥७॥
भारूत भैरव भारती वावासु पूणा पारती ।
शिव सेणु वैता फारती तापाणु तौली आरती ॥८॥

अर्थः– अष्टांग वेद, चार वेद, चार उपवेद अष्ट प्रकार के व्याकरण एवं अष्टांग योग, तत्वदर्शी वाजपेयी जी अपने सुपुत्र को अपने ही समान बड़ा विद्वान बनाने की कामना करते हुये श्री मद्रामायण के अनुष्ठान में तत्पर हुए। सुधीर बालक की श्रवण शक्ति एवं धारणा शक्ति ऐसी सुचारु रूप से विकसित थी कि पिता जितने सर्गों का नित्य पाठ करते थे उसको कण्ठस्थ हो जाते थे ॥१॥

स्व पुत्र की बुद्धि का यह चमत्कार देखकर पिता निहाल हो गये। ग्रन्थ समाप्ति के बाद अनुष्ठान विसर्जन करके एक दिन बाजपेयी जी ने विद्वानों की सभा बैठाई। उस विद्वन्मण्डली में बैठ कर शान्त बालक ने रामायण के सस्वर गान से उसी तरह सबको मन्त्र मुग्ध कर दिया जिस तरह श्रीरामचन्द्र जी के पुत्रों (लव कुश) ने अयोध्या राज सदन में किया था ॥२॥

विद्वानों को बालक के मुख से रामायण गान सुनने की लालसा ज्यों ज्यों बढ़ती गई प्रतिदिन सभा बैठने लगी अस्तु उस अद्भुत बालक ने थोड़ा थोड़ा करके सम्पूर्ण आर्ष काव्य मुखाग्र सुना दिया। धन्य धन्य की ध्वनि से सभा गूंज उठती थी फिर वह बृत्तान्त दिग दिगन्त व्यापी हो गया। दूर दूर से लोग रामायण गान सुनने के लिये आने लगे ॥३॥ बाजपेयी जी उत्साह पूर्वक एक न एक ग्रन्थ प्रति दिन बालक को सुनाया करते और वे सब कण्ठस्थ हो जाया करते थे। इस प्रकार छः वर्ष से आठ वर्ष की अवस्था तक बालक को रामायण, भागवत, मनुस्मृति कंठस्थ हो गये ॥४॥

आठवें वर्ष उपनयन की तैय्यारी हुई। वर्ष गाँठ से १७ दिन पीछे माघ शुक्ल द्वादशी को यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हुआ। उस समय एक अपूर्व घटना हुई। उप-नीत ब्रह्मचारी विधि विधान के अनुसार जब पलाश दण्ड धारण पूर्वक ॥५॥ काशी जी पढ़ने को चला तब लोगों के, आचार्यों के और सम्बन्धियों के बहुत आग्रह करने पर भी नहीं लौटा, पिता को विवश होकर परिवार समेत काशी जाना पड़ा, वहाँ प्रबल नैय्यायिक ओंकारेश्वर त्रिवेदी उनके मामा रहते थे। वहीं सब लोग जाकर ठहरे ॥६॥

पिता और मामा बालक को व्याकरण और न्याय की शिक्षा बड़े चाव से साथ ही साथ देने लगे। एक बार उन्हें कहने की देर थी कि बालक को कण्ठस्थ और हृदयङ्गम करने में कुछ भी देर नहीं लगती थी ॥७॥ उस प्रतिभाशाली बालक को देखने के लिये त्रिवेदी के स्थान पर प्रति दिन मेला लगा रहता था। इससे तंग आकर उन्होंने बालक को बाहर निकालना बिलकुल बन्द कर दिया। बड़े आग्रह पर वे अपने इष्ट मित्रों को दिखाते थे ॥८॥

इस अष्टपदी के अन्तिम चार पद द्विज दीक्षा संस्कार पर आठ बार पढ़कर अष्टधातु पहिनने और धारण करने से बालक तीव्र बुद्धि श्रुतिधर होगा ॥

इयं चार्पणाष्टकेर हेरतां पुणा जी गत्रि राही उया ही दीक्षां धथणा वीदों तुरी ॥

अष्ट पदी ॥ ६ ॥

दिट्ठाभ अट्ठभ अट्टरी मिरमाणु कैवटु पट्टरी ।
धण धौल पेहण मट्टरी मावाण जाणस भट्टरी ॥१॥

कौकण्ड वेहुस श्यामड़ा ढक्काणु धर चम वामड़ा ।
मुट्ठालु णौहट आमड़ा चिन्ना चुडा ठण णामड़ा ॥२॥

भैसीणडी वानैथ ठर आप्पण औडत तैण हर ।
मुस पासु जैनब जेतु ढर वुम्मैट कण कस लाल लर ॥३॥

मुक्कण थई णावोस्ता धुक्कण डई खर खोस्ता ।
मन्तप मणावट चोस्ता रामाम जय जय घोस्ता ॥४॥

उप्पैण फीलुण फैलड़ा थारूण तिडडी तैलड़ा ।
वधवारू नोकण ऐलड़ साविति शैशुण मैलड़ा ॥५॥

मंथाणु शंखा सौमली तैगूड गाणुत मौ मली ।
सरहीणु चापिड चौमली कासी करांच्छी जौमली ॥६॥

सुन्ठाणु तारूब तरज्जनी मंडूक गणि कग पहुधनी ।
गंगालु गंगा कै मनी निठणाणु पंगा सामनी ॥७॥

मारूत भैरव भारती वावासु पूणा पारती ।
शिव सेणु वैता फारती तापाणु तौली आरती ॥८॥

अर्थः— अष्टांग वेद, चार वेद, चार उपवेद अष्ट प्रकार के व्याकरण एवं अष्टांग योग, तत्वदर्शी वाजपेयी जी अपने सुपुत्र को अपने ही समान बड़ा विद्वान बनाने की कामना करते हुये श्री मद्रामायण के अनुष्ठान में तत्पर हुए। सुधीर बालक की श्रवण शक्ति एवं धारणा शक्ति ऐसी सुचारु रूप से विकसित थी कि पिता जितने सर्गों का नित्य पाठ करते थे उसको कण्ठस्थ हो जाते थे ॥१॥

स्व पुत्र की बुद्धि का यह चमत्कार देखकर पिता निहाल हो गये। ग्रन्थ समाप्ति के बाद अनुष्ठान विसर्जन करके एक दिन बाजपेयी जी ने विद्वानों की सभा बैठाई। उस विद्वन्मण्डली में बैठ कर शान्त बालक ने रामायण के सस्वर गान से उसी तरह सबको मन्त्र मुग्ध कर दिया जिस तरह श्रीरामचन्द्र जी के पुत्रों (लव कुश) ने अयोध्या राज सदन में किया था ॥२॥

विद्वानों को बालक के मुख से रामायण गान सुनने की लालसा ज्यों ज्यों बढ़ती गई प्रतिदिन सभा बैठने लगी अस्तु उस अद्भुत बालक ने थोड़ा थोड़ा करके सम्पूर्ण आर्ष काव्य मुखाग्र सुना दिया। धन्य धन्य की ध्वनि से सभा गूंज उठती थी फिर वह बृत्तान्त दिग दिगन्त व्यापी हो गया। दूर दूर से लोग रामायण गान सुनने के लिये आने लगे ॥३॥ बाजपेयी जी उत्साह पूर्वक एक न एक ग्रन्थ प्रति दिन बालक को सुनाया करते और वे सब कण्ठस्थ हो जाया करते थे। इस प्रकार छः वर्ष से आठ वर्ष की अवस्था तक बालक को रामायण, भागवत, मनुस्मृति कंठस्थ हो गये ॥४॥

आठवें वर्ष उपनयन की तैय्यारी हुई। वर्ष गाँठ से १७ दिन पीछे माघ शुक्ल द्वादशी को यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हुआ। उस समय एक अपूर्व घटना हुई। उप-नीत ब्रह्मचारी विधि विधान के अनुसार जब पलाश दण्ड धारण पूर्वक ॥५॥ काशी जी पढ़ने को चला तब लोगों के, आचार्यों के और सम्बन्धियों के बहुत आग्रह करने पर भी नहीं लौटा, पिता को विवश होकर परिवार समेत काशी जाना पड़ा, वहाँ प्रबल नैय्यायिक ओंकारेश्वर त्रिवेदी उनके मामा रहते थे। वहीं सब लोग जाकर ठहरे ॥६॥

पिता और मामा बालक को व्याकरण और न्याय की शिक्षा बड़े चाव से साथ ही साथ देने लगे। एक बार उन्हें कहने की देर थी कि बालक को कण्ठस्थ और हृद-यङ्गम करने में कुछ भी देर नहीं लगती थी ॥७॥ उस प्रतिभाशाली बालक को देखने के लिये त्रिवेदी के स्थान पर प्रति दिन मेला लगा रहता था। इससे तंग आकर उन्होंने बालक को बाहर निकालना बिलकुल बन्द कर दिया। बड़े आग्रह पर वे अपने इष्ट मित्रों को दिखाते थे ॥८॥

इस अष्टपदी के अन्तिम चार पद द्विज दीक्षा संस्कार पर आठ बार पढ़कर अष्टधातु पहिनने और धारण करने से बालक तीव्र बुद्धि श्रुतिधर होगा ॥

इयं चार्पणाष्टकेर हेरतां पुणा जी गत्रि राही उया ही दीक्षां धथणा वीदों तुरी ॥

अष्ट पदी ॥७॥

चौरा।डिणा पत्याड़िया धुरेंधपक्का पाड़िणा ।
मन टूस फक्का आड़िणा तैतिन्न तुक्का काड़िणा ॥१॥

वृंकोदणुं धुत्ताणवे पाषष्ट्णे सत्ताणवे ।
शावाणु सौठू जाणवे छत छत्ति मैणुं पाणवे ॥२॥

पाषारु शुंडा दंदभा आनन्द सादं दरवरवरा ।
तखणेकु फुट देवांगदा भरुभाम चुल्ला पाणहा ॥३॥

तिवणाख तौहुद थाकडू भासौन गोखल आकडू ।
आधाणु उत्ता पाकडू सुरणाथ पैठा लाकडू ॥४॥

मझरुम्म माहिख मन्नड़ी तौकाड पाठे पन्नड़ी ।
मुत्ताण माच्चा सन्नड़ी सट साट सोझा झन्नड़ी ॥५॥

गोमेत्त तूत्ता तित तणं लोखैट हिल्ला शीपणं ।
लावत्तणा खुरचो छणं दौहावु तिगणपा जणं ॥६॥

रैवाषु जेण्णां भुज्जणं नैपाड़ दिव कर सुज्जणँ ।
पैपट्ठु साहर मुज्जणं सौदाणु जोधा गुज्जणँ ॥७॥

साँडिल्य खोभी सालवी ताहोल जसणुत आलवी ।
देहूण धौधा चालवी मशमूख तैतण गालवी ॥८॥

अर्थः– विप्र कुमार कुमारावस्था की सीमा तक पहुंचते पहुंचते सभी शास्त्रों के सम्यक् ज्ञाता हो गये । एक दिन काली खोह से एक बृद्धा विदुषी परीक्षार्थ आई । वह ऐसी संस्कृत बोलती थी कि उसके तात्पर्य को सुधी गण बड़ी कठिनता से समझ पाते थे ॥१॥

जब वह कुमार के पास आई तब उसने तीन प्रश्न किये । एक प्रश्न यह था कि वह कौन नारी है जो पुरुष के लिये छिप छिप कर नाना प्रकार के भोग प्रस्तुत किया करती है पर जब पुरुष उसे एक बार भी देख लेता है तब वह सदा के लिये लुप्त हो जाती है ॥२॥

कुमार ने उत्तर दिया–अजा । बृद्धा ने कहा "तुम्हारा विवाह उससे कर दिया जाय ।" कुमार ने कहा माता ! उसमें आनन्द का अभाव है । वह रमणी तो अन्धी है और जो उससे विवाह करने की इच्छा करता है वह लँगड़ा हो जाता है ॥३॥

देवी ने मुस्करा कर फिर प्रश्न किया "तब क्या तुम आजन्म ब्रह्मचारी रहना चाहते हो ?" कुमार ने कहा हाँ माता ! ऐसा आशीष दीजिये । बृद्धा ने प्रसन्न होकर आशीष दिया और चली गई ॥४॥

कुमार के पिता बड़े पण्डित होने पर भी प्रश्नोत्तरी के मर्म को न समझ सके । परन्तु उसके परिणाम पर उन्हें खेद हुआ । वे कुमार का विवाह ठीक कर चुके थे ।५।

वे भट्ट कुमारिल कृत गृह मीमांसा ले आये और बाँच कर कुमार को सुनाये । उसमें स्पष्ट रूप से लिखा हुआ था कि जीवन में एक बार विवाह करके गृहस्थाश्रम अवश्य स्वीकार करना चाहिये ॥६॥

कुमार ने कुछ उत्तर नहीं दिया । वे समझे कि उसने प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया वे फिर प्रसन्न चित्त विवाह की तैयारी करने लगे ॥७॥

शांडिल्य गोत्रे तान्ना सालवी से विवाह ठीक हुआ था । जो रूप-गुण-शील में कुमार के योग्य थी परन्तु जो यह स्वप्न देख चुकी थी कि विवाह होते ही विधवा हो जायगी ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पण टकं निगु सुवां वरिणा सुथ सांगुया हमे जानुथी मथा भरे रमु ॥

इस अष्टपदी को परमार्थी जिज्ञासु नित्य तीन बार पाठ किया करे तो तत्वज्ञान का अधिकारी होवे ॥ राम राम ॥

अष्टपदी ॥ ८ ॥

पालम्परा देणा रगी माथेल मौणा टग टगी ।
पुक्कन्न कोणस अलवगी मुम्बाण माचा सापगी ॥१॥

लघ्घान घामा घुर्णिती लरफार शुत्ता चुर्णिती ।
पैराखु बैखा पुर्णिती आखे अवाखे टुर्णिती ॥२॥

छट छाटका छोनी समित वर कंछुता धैनी पमित ।
माढेर मत्ता मश कमित पोढार पेषस दारमित ॥३॥

पचगंग तट पट पट परट ऋषि कत्तलां कुणकं अरट ।
आमोद अत्ता हयवरट मोंकाण खेटा चाणरट ॥४॥

वाणिं गिहा वौपट विया इन्दूरुभा औणर इया ।
पंढर परा लंका णिया मंखोण मासीणो सिया ॥५॥

बम्मंड वेटिस धारुही मखगार जाडी पारुही ।
तिक्खण तवानुप तारु ही दिक्कम दिवापति दारुही ॥६॥

गंगेरूंणा अखरावली आनोद उत्सा सावली ।
मानैरू मुस्सा मावली साहेत सिब्बा मावली ॥७॥

खर भर खरिन्ता खादुणा घर घर घुरन्ता वादुणा ।
चंटं चणं छुप छादुणा मक्कस भिगारू आदुणा ॥८॥

अर्थः— उस कन्या ने अपने स्वप्न का बृत्तान्त सब पर प्रकट कर दिया और उस पर विश्वास करके उसने आजन्म ब्रह्मचारिणी रहने का दृढ़ संकल्प कर लिया। अन्ना-हार छोड़कर केवल लवंग खाकर रहने लगी। ॥१॥

छोटी अवस्था में तपस्या में इतना अनुराग देखकर लोग पार्वती के उग्र तप का स्मरण करते थे। वैदिकों ने उससे कहा किसी गुरू से दीक्षा लेकर तपानुष्ठान करना चाहिये ॥२॥

विप्र कुमारी ने निश्चय किया कि जिससे मेरा विवाह होने वाला था उसी से दीक्षा लेना उचित है। अस्तु वह बड़े प्रातः काल समित्पाणि होकर पिता के साथ बाल ऋषि की सेवा में चली ॥३॥

पंच गंगा घाट पर बाल ऋषि के दर्शन से कृतार्थ हुई। अनूढ़ा के आग्रह और उसके पिता की प्रार्थना पर रीझ कर कुमार ने लवंगाहारिणी को कुश से स्पर्श कर के शंख बजा करके दीक्षा दी ॥४॥

दीक्षा फल तत्काल प्रगट हुआ। उसे अपने पूर्व दस जन्मों का ज्ञान उसी क्षण प्राप्त हुआ और आदि शक्ति श्री सीता जी का दिव्य दर्शन हुआ ॥५॥

उसी समय उसका ब्रह्माण्ड फटा, उसमें से दिव्य ज्योति निकली और लोगों के देखते देखते उदय होते हुये रबि मण्डल में विलीन हो गई ॥६॥

इस घटना को देखकर लोग बहुत विस्मित हुए। भीड़ लग गई। बाल ऋषि की खोज होने लगी। वे तो पहिले ही आसन पर चले गये थे ॥७॥

नर नारी, जरठ जवान सब इसी की चर्चा करने लगे और घर घर और घट घट यह कथा व्याप्त हो गई। बाल ऋषि का प्रताप प्रगट हुआ ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणाष्टकं पूजी थरवनी तो वाणुकी समी जातुं-
णेकुं पेग सुते भितेर हरा माभु मरी भुतोसणवी ॥

इस अष्टपदी को गुरुवार को प्रातः काल स्नान करके एक हाथ से जल खींच कर उससे चौका दे करके एक सांस से पाठ करें तो गुरु मुख को ऊर्ध्वरेता का फल प्राप्त हो ॥ राम राम ॥

अष्ट पदी ॥६॥

पम्म्हे पुणा माता पिहा सैदे सदे हाहा पिहा ।
माथा पहा डाड़ालिहा पवमे पमे पामालिहा ॥१॥

गौरा करा कोमाकुड़ा मौषानिका सम्मण वुड़ा ।
परसीक कालस कौछुड़ा रहपीक साता हीमुड़ा ॥२॥

विज्जू विरानै वागछू पत्थारू पैहट छागछू ।
तरनारुना फहनागछू मावात मुत्था मागछू ॥३॥

सीमाब छोंड़ी वैकुरूढ़ मतगीस डोंडी सासवुढ़ ।
परफेरुणा ठर घौस पुढ़ हारूण घनैढ़ी हौन हुढ़ ॥४॥

महरास गोपा कान्हड़ा विज्जोग जैगढ़ बान्हड़ा ।
कंदण कणणदा दान्हड़ा विस्सासुणारुण छान्हड़ा ॥५॥

मध्याणु सैठ झंझुरण पधणुस्स फौखट बंबुरण ।
नौमीण पौखा किंदुग्ण कंगा गिणन्ता वेदुरण ॥६॥

ठरगोण दील्हा दायमी हुणफेस धिक्का धाणमी ।
पड़ुवारु भिणणा णायमी जरजोहु आणौ आयमी ॥७॥

गंगाटवी टिक्कुट टिया णुंगानु पैझज ठैलिया ।
दसरत्थ थप्पा वरु दिया ताणंष तित्ता जाभिया ॥८॥

अर्थः– सबसे पहिले माता पिता के हृदय में दीक्षा का प्रभाव प्रसिद्ध हुआ । वे अपने गुरूत्व को भूल गये और संकोच छोड़कर अपत्य से दीक्षा लेने की कामना करते हुये कुमार से प्रार्थी हुये और उन्हें संकोच में डाला । जिस तरह प्रातः काल में कमलिनी अपनी संकोच रूपी चादर कुमुदिनी को ओढ़ा देती है ॥१॥

प्रार्थना को स्वीकार करना मर्य्यादा के विरुद्ध और अस्वीकार करना अधर्म समझ करके कुमार ने विनीत भाव से कहा । वही आत्मा पुत्र रूप से जायमान होता है । (आत्मा वै जायते पुत्रः) इस वाक्य ने उनकी चित् शक्ति को जागृत कर दिया ॥२॥

विद्युच्छटा से प्रकाशित नीली घटा की तरह श्याम स्वरूप के दिव्य दर्शन उन्होंने हृदय में किये । उस स्वरूप में और कुमार के स्वरूप में कोई भेद नहीं था । उन्हें अपने पूर्व जन्म का तथा वरदान का ज्ञान भी प्राप्त हुआ ॥३॥

जागृत में तुरीयावस्था का अपूर्व प्रत्यक्ष भोग सामप्त होते ही वे आनन्द मग्न, सुध बुध बिसराये हुये कुमार के चरणों पर अपना मस्तक रखना ही चाहते थे कि धर्म धुरीण कुमार अदृश्य हो गये ॥४॥

महारास में श्री कृष्ण जी के अदृश्य हो जाने पर गोपियाँ जिस प्रकार दुःखित हो विलाप करने लगीं थीं उसी प्रकार बिप्रदम्पति अपत्य स्नेह से व्याकुल हो विलाप करने लगे ॥५॥

बहुत लोग एकत्र हो गये । समझाने बुझाने लगे । पर अपत्य स्नेह बड़ा प्रबल नद होता है । उसके सामने ज्ञान–चर्चा टिकती नहीं । समझाने वालों से अधिक ज्ञान उन्हीं के पास था पर वे अपनी कथा और व्यथा किसी से कह नहीं सकते थे ॥६॥

धीरे धीरे सब लोग खिसक गये । केवल निकट निवासी स्नेही सम्बन्धी रह गये । बाजपेयी जी ने बड़े कातर स्वर से कहा, अब जीने पर धिक्कार है । प्रिय विरहमें शरीर त्याग करना ही हमारे भाग्य में बदा है ॥७॥

हमें गंगा तट पर ले चलो । हम इस शरीर का वहीं पर विसर्जन करेंगे । महाराज दशरथ ने प्राचीन काल में अपत्यस्नेह में शरीर त्याग किया था । हम भी उन्हीं का अनुसरण करेंगे ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणाष्टकं भ्रूहि स्रूहि प्रत्रूहि धेवाणु हासी जासी पीमा खीमा रूणका ॥
इस अष्टपदी के नित्य ५ पाठ से अस्थिर चित्त वाले को ध्यान योग की प्राप्ति होगी।

अष्ट पदी ॥ १० ॥

दभ्या हिभा मणि कन्नका तिभ्याभिभा हुहुरन्नका ।
बैणस बगाडी ठन्नका मैमुत्तणा हुत पुन्नका ॥१॥

अवसाणु रघवानन्दणा चैताणु थण्णा दच्छिणा ।
फरसीह बुक्का मत्तिणा नासीत जंभारूप्पिणा ॥२॥

मुंभेड़ भइणा बाखुदी तुर्फन्न यैणा थागुदी ।
पिप्पाण डैणा भाणुदी घस्सीण खौडा जाजुदी ॥३॥

हातौड़ ममसा णौरुही बक्केलु थत्ता वौरुही ।
मामीण कुल्ला कौरूही फातेढ ढुक्का थौरूही ॥४॥

बम्मीह माणत बैसुड़ा अन्तेठि उम्मट कैमुड़ा ।
पथगासि दौडम भैकुड़ा तरणीख ताहुम नैगुडा ॥५॥

घाउड्डु बैरन वायुना चाचुड्डु वौणस थामुना ।
नैरीणु हापथ ताखुना मक्कूण माहू पापुना ॥६॥

थणथासु टीखुर जंदगी ठणठाटु डाहण अन्दगी ।
झणाझणु नौबिल छन्दगी जाणीन गेहुड हन्दगी ॥७॥

तग्गा तलातिम तौरुकी भट्टाणु दैहिण बौरुकी ।
आवत्तु उट्ठी दौरुकी खौडूण फव्बा छौरुकी ॥८॥

अर्थः– लोग उन्हें मणिकर्णिका पर ले गये जहाँ मानव जीवन की अनित्यता का प्रत्यक्ष अनुभव होना स्वाभाविक है। वहाँ उनका विलाप घृत प्राप्त अग्नि की तरह बढ़ गया। घाट पर के लोग जमा हो गये। समाचार जानकर सब दुःखी हुए ।१॥

इतने में एक दक्षिणी ऋषि स्वामी राघवानन्द जी भी वहाँ आ गये। उनको देखते ही सब लोग हट गये। और उनसे सब लोगों ने वृत्तान्त कह दिया। ऋषि के हृदय में छिपी हुई दया इस प्रकार प्रगट हुई जिस प्रकार राख के नीचे छिपी हुई अग्नि ॥२॥

स्वामी जी ध्यान मग्न हो गये। ध्यान टूटने पर उन्होंने कहा–"तुम्हारे पुत्र आप रूप भगवान थे। वरदान की अवधि पूरी हो गई अतः वे अन्तर्धान हो गये।" यह कहकर वाजपेयी जी के शिर पर हाथ रखा ॥३॥

इससे मोह की निवृत्ति हुई, ज्ञान का प्रकाश हुआ परन्तु उनकी धर्म पत्नी इस वियोग को न सह सकी। उन्होंने पति की गोद में शिर रखकर शरीर त्याग दिया और विमान पर बैठ कर पर धाम को गईं ॥४॥

अन्त्येष्ठि संस्कार धूम से हुआ। पुत्र और पत्नी के वियोग से कातर वाजपेयीजी को लोगों ने घर पहुंचाया। स्वामी जी भी आश्वासन देने के लिये उनके साथ गये।५।

दूसरे दिन प्रतिष्ठित काशी वासी पुछार के लिये वहाँ एकत्रित हुये। उनमें कई एक कुमार के बड़े प्रेमी थे। उन्होंने कुमार के दर्शन के लिये स्वामी जी से बड़ी प्रार्थना की ॥६॥

स्वामी जी ने प्रेम परीक्षार्थ कहा कि यदि तुम लोग अपनी अपनी आयु का चतुर्थांश कुमार को दे दो तो कुमार उतने दिनों तक पृथ्वी पर रहकर धर्म ग्लानि को दूर करते हुये तुम्हें सुखी करेंगे ॥७॥

सब सहर्ष देने को तय्यार हो गये। पिता तो अपनी सम्पूर्ण शेष आयु देने को उद्यत हो गये। स्वामी जी ने प्रसन्न होकर बचन दिया और सब को दूसरे दिन बुलाया ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणास्टकेर देउचाणे उत्तापहु रूआं माखी आखति मझा पुगोसा बरीणा बियटा कि चुहा साभु ॥

इस अष्टपदी को नित्य दोनों समय पाठ करने से मोह का परदा फटता है और ज्ञान वृत्ति उदय होकर निरोध मार्ग का बोध कराती है।

अष्ट पदी ॥११॥

रामेटि टन्टारून धपा लुण्ठाणु बौकत थित्तुगा ।
पीडैम पुट्टा पुत्तुगा सरसोसु मुट्ठा खुन्नुगा ॥१॥

मैजारिणा गौसे जगा ताँतिया कम्मठ तैलगा ।
चौबेदुआ धम्मण उगा परभन्नु मादर धौतगा ॥२॥

विस्साणु पौपट छुन्नड़ी धौभाणु जम्भट पुन्नड़ी ।
मलखास मौलू मुन्नड़ी पैरामु जप जग भुन्नड़ी ॥३॥

हरपम हवेलुन हातड़ा छुन्नाणु छाछड़ि छातड़ा ।
माणंभ मौमट भातड़ा थरथोणु थौका थातड़ा ॥४॥

पंसाणु बाबड़ बैनटी मासोटु किल्लै छैनटी ।
उट्ठाभि उन्ना चैनटी होसाणु जैड़ा जैनटी ॥५॥

अरबाश उन्नू टंटुरी माट्ठाणु बीघडु छंटुरी ।
परगाणु पेहुट दंटुरी सरदेणु साउस संटुरी ॥६॥

दीक्षा दलँना वैसबी तिट्ठोम तित्ता णौसबी ।
फौणेब पित्ता पैंसबी णीवान्नु बीदा दैसबी ॥७॥

आनन्द सह मंतम महा नामाणु रक्खिय सासहा ।
इच्चाम अणु इक्काणुहा पुंजाहि पुम्मा पातहा ॥८॥

अर्थः– राम राम जपते हुये स्वामी जी ने श्राद्ध तक मौन धारण किया फिर सबके सावधान होने पर आयु समर्पण करने वालो में से उन्होंने चार को सत्पात्र समझकर चुन लिया ॥१॥

उनमें से एक तांतिया शास्त्री थे जो सदाचार और धर्मनिष्ठा के लिये प्रसिद्ध थे। दूसरे कर्मठ जी थे जो वैदिक कर्म-काण्ड के अद्वितीय ज्ञाता थे। तीसरे व्यक्ति नव युवक छात्र थे चतुर्वेदी और चौथे धर्म्मण जी जो बड़े तपस्वी थे ॥२॥

इन चारों को बाजपेयी समेत एक यज्ञ मण्डप में बैठाया और काशी जी के और और ब्राह्मणों को बुलाया। उनमें से तेंतीस को वेद पाठ के लिये वरण किया ॥३॥

यज्ञ आरम्भ हुआ। हविष्यान्न की आहुति षड़ाक्षर मन्त्रराज जप द्वारा अग्नि कुण्ड में पड़ने लगी। छः करोड़ मंत्र राज जप का अनुष्ठान था ॥४॥

सस्वर वेदध्वनि से काशी पुरी गूंज उठी। यज्ञ की चर्चा घर घर व्याप्त हो गई। झुण्ड के झुण्ड लोग देखने को आते थे ॥५॥

चैत्र सुदी एकादशी को यह यज्ञ समाप्त हुआ। यज्ञ मण्डप ही में सबके देखते ही देखते विप्र कुमार प्रगट हो गये। देखकर सब चकित और हर्षित हुये ॥६॥

अनन्तर स्वामी जी ने कुमार को वैष्णवी दीक्षा दी उस समय मण्डप में अपूर्व शांति विराजती रही। सब स्तब्ध हो गये थे ॥७॥

स्वामी जी ने कुमार का नाम रामानन्द रखा। और इच्छा मरण का बरदान देकर वे चले गये ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणाष्टकं लोरिमा सी डासा पव्य फरभरी चाऊ खं ओ पाहु जाणे रोम।

इस अष्टपदी को सर्वतोभद्र यज्ञ में होम द्वारा जप पूर्वक जगा कर षट् मास तक नित्य अनुसंधान से वियुक्त आत्मा के दर्शन होते हैं, खोया हुआ मिल जाता है, मरा हुआ फिर कोख में जन्म लेता है॥

अष्ट पदी ॥ १२ ॥

तिघ्नाटि तैवर तरुणुगी मुह्याणि धेंवर विसणुगी ।
कोब्राण कैसण चरणुगी आथोध औणा फनणुगी ॥१॥

कर्माण पैपिन तप लखा कुर्वाणु गोहिल मसपखा ।
तरतीण तैज्ञा सम भखा खोटेरू खौधा हट हखा ॥२॥

पंजेरू थाकुण धामणा निक्केसु भैटुण रामणा ।
मुत्ताखु मैज्ञन नामणा गतवत गवर्खा कामणा ॥३॥

चौवाणु चुक्का कर्मंठी मैतेय जुत्थल जर्मंठी ।
पैण्णु पुट्ठा तर्मंठी हर्त्ता हवार्ता हर्मंठी ॥४॥

हरणाकु मौविन मानुषी दैवीठ धाटर भानुषी ।
औणोत घरविद टानुसी सत्ताधुना किल्ह दानुसी ॥५॥

ढरकांग जैवण जानुनी मुंडापु महटो मानुनी ।
ठरवेणु गुठ्ठा धानुनी पुत्थाणु कौटा कानुनी ॥६॥

शावाणु शाहा सिजदही मैवाणु भौफा भिनदही ।
कमठासु खौला गिरदही टंकोणु कुलदा हिरदही ॥७॥

वहरिन्नदा खुपटानपी गुरुज्ञान वीहा छानपी ।
पौपीणु पल्हा मानपी हौसाणु हिन्डस थानपी ॥८॥

अर्थः– लोक मान्यता रूपी तिक्त एवं कटु पदार्थ का त्याग करके गीता रूपी अमृत के पान करने वाले स्वामी जी तुरन्त यज्ञ मण्डप से चले तो गये पर कुछ लोग उनके पीछे पींछे तब भी गये, उनमें से एक कुमार के पिता भी थे धीरे धीरे और लोग तो लौट गये परन्तु बाजपेयी जी बराबर साथ रहे ।।१।।

एक तड़ाग के किनारे अमिली के वृक्ष के नीचे स्वामी जी बैठे तब उनकी दृष्टि बाजपेयी जी पर पड़ी । स्वामी जी ने कहा इतनी दूर तक आप क्यों आये ? वहाँ कोई दूसरा है नहीं जो ब्राह्मणों और अभ्यागतों की सेवा और सत्कार करे । यह अच्छा नहीं हुआ ।।२।।

बाजपेयी जी ने गद्‌गद कण्ठ से निवेदन किया "कृतज्ञता के भार से मैं ऐसा दब गया हूं कि मुझे आपकी सेवा छोड़कर और कोई कार्य चाहे कितना ही आवश्यक हो रूचता ही नहीं । वही कृतज्ञता मुझे पीछे पीछे घसीट लाई है ।।३।।

अच्छा अब जाओ अपना काम धाम देखो । मैं फिर कभी आजाऊँगा । कुमार के किसी कार्य में हस्तक्षेप न करना भोजन कराने में तो वही अपना स्वाभाविक वात्सल्य प्रेम रखना पर और बातों में उसे देवता के समान समझना ।।४।।

स्वामी जी शिक्षा देकर वहाँ से भी आगे बढ़े और बाजपेयी जी अछता पछताकर घर लौटे । उनका मन स्वामी जी का अनुगामी हुआ ।।५।।

इधर कुमार ने प्रगट होकर अपने दिव्य दर्शन से सम्बन्धियों ब्राह्मणों और दर्शकों के हृदय में अपूर्व आनन्द भर दिया । उनके मन में किसी बात की चाहना ही नहीं रही । वे एक टक दृष्टि से कुमार की अपार शोभा को उसी प्रकार देखते रहे जिस प्रकार चकोर चन्द्रमा को देखकर निहाल होता है ।।६।।

सब उसी आनन्द में निमग्न रहे । कोई हिला डुला नहीं । इतने में बाजपेयी जी घर पहुंचे । सबने बारी बारी से उनके भाग्य की सराहना की । यज्ञ भस्म ले ले कर और यज्ञ कर्त्ता से सत्कार पाकर आनन्द मग्न अपने अपने घर को विदा हुये किन्तु ।७।

ताँतिया शास्त्री जो अपनी आयु का चतुर्थांश अर्पण चुके थे वे नहीं गये । बाजपेयी जी ने उनका बड़ा उपकार माना । उनके चरणों पर मत्था रखके बोले–'आपने अहेतुकी कृपा करके मुझे उप कृत किया है । इस सन्तोचित उपकार के उपलक्ष्य में सिवा कृतज्ञता प्रकट करने के और क्या कर सकता हूं ।।८।। ।। अनुष्ठान विधि ।।

इयं चार्पणास्टके ध्रुवि आसिता भद्याजु मधेजिवा थुरणा दरीबा थुरता जियवार मेथि दक्खण थाम हरि ।।

इस अष्टपदी के प्रथम चार पदों के नित्य पारायण से सात्विक बुद्धि उत्पन्न होती है और चतुष्टय के आन्हिक अनुसंधान से हृदय में शुभ्र ज्योति का प्रकाश होता है ।।

अष्टपदी ॥१३॥

थिभ्यासु घाटम जानुवी टिद् घोणु आटी पिखुवी ।
हरदेणु जैझुण वाजुवी मातूल पित्तर सासुवी ॥१॥

देवासुणा झिट डामकू नैभारु माखिट चामकू ।
वित्थेणु पायस पामकू जौबेटु ढिगुण जामकू ॥२॥

जोठूर ठूणा ठावणन् हंगूण घिउटा भावणन् ।
चंगीणु ठठ्ठा दावणन् हिंगोणु तिन्ना तावणन् ॥३॥

ध्वन्नार्घ घोषा घुर्णिहा विट्टासि टौणा कुट्टिहा ।
मम्भोट तिन्ना बैटिहा आणुर्द णैठा हैरिहा ॥४॥
वैसान वीखट वांगना तालुत्य ठिकर फांगना ।
वैधूर्वि कोकन हांगना देवैरुणा खिच्चु टांगना ॥५॥
चौमासटा हुंभा रुखी जैकोनहा हित्ता तखी ।
कैधोंष चाड़िम सालखी ईशाणु ईशत तैघखी ॥६॥
खैराखुटी सर भैसटी मन्टूरणा रौभानटी ।
ताणूर जूषा झानटी मनफेरु फौफारुवटी ॥७॥
पिसृणीथ घंघा घोषणा धरथुंग थावड़ डंसणा ।
पम्मोर गाजर गोपणा हौदीन चंटर जैसणा ॥८॥

अर्थः— दूसरे ही दिन प्रातः काल अपने मामा और पिता से आज्ञा लेकर जाह्नवी के किनारे स्वामी रामानन्द जी एकाग्र मन से घाट वाल की झोपड़ी में तप करने लगे ॥१॥

दिन के तीसरे पहर में निज कृत्य से निवृत्त होकर घर से आये हुये पायस को गंगा जल से पवित्र करके पाते थे। पाषाण पात्र ही का व्यवहार करते थे ॥२॥

कब सोते थे कब जागते थे इस बात को तो कोई नहीं जान सका परन्तु जब तब विचित्र शंख ध्वनि सुनाई देती थी विशेष रूप से निशीथ काल में ॥३॥

उस ध्वनि में संजीवनी शक्ति थी। एक बार उसी मार्ग से एक मृतक को लोग लिये जा रहे थे। दैव योग से स्वामी जी ने शंख बजाया उसे सुन कर वह मृतक जी गया ॥४॥

समाचार व्याप्त हो गया। ध्वनि सुनने के लिये आर्त, रोगी और मरणासन्न लोग आने लगे। वे लोग सफल मनोरथ होते थे। और प्रसिद्धि फैलाते थे। धीरे धीरे वहाँ बड़ी भीड़ एकत्र होने लगी। जन कोलाहल से भजन में विक्षेप होने लगा ।५।

स्वामी जी ने शंख बजाना बन्द कर दिया। लोग निराश होकर लौट जाने लगे। तब विज्ञों की प्रार्थना पर चातुर्मास्य भर केवल प्रातः काल शंख बजाना लोक-हित की दृष्टि से स्वीकार किया ॥६॥

स्त्रियाँ झुण्ड की झुण्ड बड़े तड़के गोद में बच्चों को लिये घाट पर पहुंच जाती थीं। यह उनका नित्य का नियम हो गया। और घाटों को छोड़कर लोग उसी घाट पर स्नान करने लगे ॥७॥

देवोत्थानी को स्वामी जी ने ऊँचे पर बने हुये कुटीर में प्रवेश किया। उस दिन एक सेठ ने साधु ब्राह्मणों को पक्वान्न भोजन कराया। उस दिन बड़ा उत्सव मनाया गया ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणास्टक पुटक गीर्वाण धमुहा ताजीत पे पुसीह धुहणाटी उसी चाणु भातु सुंग गवी चाणु ॥

इस अष्टपदी को भजन में तत्पर योगी को संयम से रहते हुये संयम (धारणा, ध्यान, समाधि) के अनुष्ठान में नित्य प्रति आदि अन्त में पाठ करने से अनाहत ध्वनि १८९८ सुनाई देती है।

अष्टपदी ॥ १४ ॥

ओछब टिरन्टे कलिलुमा मुणि बेस लिस्से चुंचुमा ।
परवेह पौटायस नुमा दारौत धिगारण पुमा ॥१॥

अद्धम्म ओटी बालुही मुकपैत चपना साजुही ।
नीयूष पौगुड़ खैतुही माधार मंझा बैचुही ॥२॥

जम्भारु सूदा जोषिता झोणन्तु धम्मा पोषिता ।
टंघाणु ठट्टम संहिता तरसीरूहा खिन बन्दिता ॥३॥

गुम्फारूणा कुस जौड़िना संथासिना हुत धौड़िना ।
बाथौतुहा जिम टौड़िना सुल्थी पिनाकुर डौड़िना ॥४॥

मुनतैव वंमी पूतटुं दौडीमु कक्खा सूतटुं ।
थरटासि फौटा धूतटुं वार्घुणिता बल चूतटुं ॥५॥

हंठा घिनाधर वर वहा नहरूम फारूख सहसहा ।
पघनी खुड़ा पटसा महा कौडाणिता हिस अरदहा ॥६॥

जेरूजितावन झिगुवन आवेल्हा णुट फाटुवन ।
पाकारि पम्हा भीसुवन अंबाधि औरा मित्थुवन ॥७॥

टरसी खुना ढिर बल्लभा मैथीकिना टिखु कल्लभा ।
गौगीस जानुत जल्लभा फवरूत हाशिट झल्लभा ॥८॥

अर्थ:– उत्सव समाप्त होने के पीछे एक दिन पिछली रात में जैसे ही स्वामी जी स्नान करके पूजन पर बैठे कि राज दण्ड हाथ में लिये श्याम काय कलिराज राजसी ठाट से उपस्थित हुआ ।।१।।

वह स्वामी जी के सहज सौन्दर्य पूर्ण कलेवर का दिव्य दर्शन पाकर कृतार्थ हो गया। तुरत परदा पड़ा और स्वामी जी पूजन में तत्पर हुये । वह परदे के बाहर बैठ गया। परन्तु वह दर्शन का लोभ सम्वरण न कर सका ।।२।।

उसे भीतर प्रवेश करने का और कोई आश्रय नहीं मिला सिवा एक स्वर्ण पंचपात्र के, जो पूजा में था । उसने सूक्ष्म रूप से उसी पर आसन जमाया । आचमनी से आचमन करते हुये स्वामी जी को खटका ।।३।।

स्वामी जी ने पूछा, तू कौन है ? क्या चाहता है ? और क्यों भजन में विघ्न डाल रहा है ? कलि ने कहा, "मैं वर्तमान समय का सार्वभौम चक्रवर्ति-कलि हूं । कुछ निवेदन करना चाहता हूं और भजन में विघ्न करना मेरा स्वभाव है ।।४।।

स्वामी जी ने कहा–"अच्छा कहिये आप क्या कहना चाहते हैं । कलि ने कहा, 'हे दीनबन्धु आप समदृष्ट हैं । आपको न किसी से राग है और न किसी से द्वेष । इसलिये प्रार्थना है कि सत, त्रेता एवं द्वापर की तरह मुझपर भी दया दृष्टि रखिये ।।५।।

मैं चाहता हूं और मैंने उसीका अनुसरण भी किया है कि पूर्व युगों में जिनके साथ अन्याय हुआ है उनको सब अधिकार दिये जाँय । मैंने और युगों से तिरस्कृत शूद्रों और स्त्रियों को विशेष पात्रता प्रदान की है ।।६।।

क्योंकि भगवान ने स्वयं ऐसों को पूर्व युगों में तारा है । और उन्हें परम अधिकारी माना है । अतएव अपने राजत्व काल में भगवान की रुचि का ही मैंने पालन किया है ।७।

इसलिये आप से प्रार्थना है कि आप भी तारक मन्त्रोपदेश का द्वार लिये सबके समान रूप से खोल दें ताकि सबका कल्याण हो ।।८।।

।। अनुष्ठान विधि ।।

इयं चार्पणाष्टक युप जीणस ततार तू कलि पघर तालिस जपाणि हुते तकवी पजोहा बुस बस गिरिछ ।।

इस अष्टपदी को नित्य एकादश बार पाठ करने से काल-रात्रि में विधि पूर्वक जगा लेने के अनन्तर कलिप्रपंच से रक्षा होती है ।

अष्ट पदी ॥ १५ ॥

तरूखा उगीदिन कारभी सम्बाधिना खुरभारभी ।
वैरागणं भरू सार भी तानैरुहा पुनवारभी ॥१॥

मट्ठी भड़ागुच गरहिता चरफा हिसानं टरपिता ।
परफारूना सिज परहिता न्युनारूपैकम पराछिता ॥२॥

विरमाषु निरमा साडिमा परथापु रम्भा जाडिमा ।
धरधेनु धिन्ना पाडिमा थण थर फरातं आडिमा ॥३॥

चमगाटिभा गुन गाउणा भत खौलता कितताउणा ।
ठनभाकिना भिरु भाउणा जितणरि पिन्ना ठाउणा ॥४॥

भौनी जगौनी जुगजुगी असमाषिभा सिल कुगजुगी ।
पंठाषिणा णुत बलजुगी फौभासिणा पिटकलयुगी ॥५॥

जिन्नासितादक देशधा कंगूरिमा खिल वेषधा ।
नौती प्रभाणू हेमधा पानी पुराठुण छेमधा ॥६॥

हे गिन ढणा जोती जुगा फरगुस नभा ओती सुगा ।
दिग्गारू ढौंढ़ी धौनुगा तरपासिता पिंडा पुगा ॥७॥

दैवाणु दातुन मंतली जिणुवारूणा खुट गंतली ।
पैपोषिलासन जंतली टिर टिगसा डिट झंतली ॥८॥

अर्थः— वेद मर्य्यादा रूप वर्णाश्रम का मेरे राज्य में कुछ भी महत्व नहीं। उसमें कोई भी तत्व नहीं। अपने प्रधान सेनापति अहंकार के शील संकोच वश मैंने उसकी थोड़ी सी प्रतिष्ठा रहने दी है। क्षय रोग से ग्रस्त प्राणी की तरह वह भीतर से सत्त्व हीन हो गया है ॥१॥

प्रचण्ड धनुषधर कुसुमायुध ललनाओं के प्रति पुरुषों के हृदय में वीर भाव रूपी मत्स्य यन्त्र स्थापित करके नित्य लक्ष्य वेध का अभ्यास करता रहता है। अखण्ड मातृ भाव रखने वाले पुरुष तो गिनती के रह गये हैं ॥२॥

सती धर्मरूपी सोर के ह्रास से वर्णाश्रम रूपी बृक्ष कैसे टिक सकता है। सांकर्य रूपी काले कीड़े ने सोर को कतरने ही में अपना पौरुष लगा दिया है। धेनु और धरती दोनों कम्पायमान हैं ॥३॥

आपने अपने सबसे छोटे पुत्र के ऊपर किस प्रकार दया का विस्तार किया है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे चतुर्विधि प्रभुत्व की स्थापना और वेदों का मान मर्दन है ॥४॥

अन्य युगों में मेरे अग्रजों के राजत्व काल में मोक्ष मार्गियों की कौन कहे अर्थ काम वालों को भी सहस्त्रों वर्ष तक अपरिमित कष्ट झेलने पड़ते थे। तब कहीं उद्-देश्य की सिद्धि होती थी। कलियुगी प्राणियों को अल्प काल और श्रम से सिद्धि लाभ होती है ॥५॥

दम्भ ने प्रणव को पथरा दिया है। कपट ने ज्ञान की गूदड़ी छीन कर पहिन ली है। अनृत ने ऋत् का वेष धारण कर लिया है ॥६॥

उसीकी ज्योति सर्वत्र जगमगा रही है तब उसके अधिकारी सब क्यों नहीं हो सकते यह बात मैं नहीं समझता अतः सबके कल्याण के लिये उसे सबको सुलभ कीजिये ॥७॥

जो महा मन्त्र सदाशिव जपते हैं, जिसकी महिमा आप जानते हैं, जिसका बीज विश्व के प्रत्येक अणु में निहित है। जिसकी सत्ता से मैं भी सत्ताधारी हुआ हूं उसी का मैं लोहा मानता हूं ॥८॥ ॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणास्टके वेहि गेते पेणू भं दिहोक साण चाहु दत्ति धिपामु मणेर उसी हितछ खीपणेष अवाहुथी भाधरेपु ॥

इस अष्टपदी को पेणु चन्दन से वट पत्र वा कनक पत्र पर लिखकर पुण्य सरिता में नित्य अर्पण करे ४२ दिन तक, तब मन की मलिनता दूर हो। हिंसा का पाप कटे और परमार्थ पथ पर निर्विघ्न गति प्राप्त हो। और स्वर्ग की सीढ़ी तक पहुचें ॥

अष्टपदी ॥ १६ ॥

दित सुप बरौनस बैहिना मसमन्नु सौनस चैहिना ।
पापत्त नौसी छादिना तुनकार तिउसर तादिना ॥१॥

रम्भोरू हासो नैकुली भंढोर बरभत जैजुली ।
तिनसार दैतित भडुली मुखतानिना सिम अब्बली ॥२॥

अड़बिद्दु पैज्ञा सोसती मनढेतरांकुम ठोसती ।
जम्मीस बौखल सैहती मुन्था पहानुग दैहती ॥३॥

हेहेर मम्भा जानुनी पिचुड़ा पिहासिज आनुनी ।
मकवर्रका हिथ हारूनी जामैत रानुप सारूनी ॥४॥

होंठं सिरा जिम्हु राहुज्ञन टनषाचु तुब्बा नंसिमन ।
पद मौलिता छभरापुहन बस्तेरछा उट अमसुहन ॥५॥
पंपीनुसा सिणु आहुला जत्तो पिनाहट साहला ।
दिउथा दिअतथा पाटुला गौसी गुराकुन छाटुला ॥६॥
हम्भोट साजिस दैघुनस झिट धामड़ा घिट वैपुनस ।
अस्ठोतिया फुट अैस अस परपींजडातित पैपपस ॥७॥
जौरीधुना सौरीसुना आगेकिरा मागैमुना ।
जीगैवहा थिण दौगुना अैरीणुदा भिन्ना चुना ॥८॥

अर्थः— कलि का विनम्र एवं सारगर्भित वक्तव्य सुनकर स्वामी जी ने साधुवाद कहा और उसकी प्रार्थना स्वीकार करके उसे सन्तुष्ट किया। उसने गदगद स्वर से स्तवन किया ॥१॥

हे दीन दुःख—दानव दौ न अच्युत ! हे सनकादिक मोह भंजन हंस ! हे तत्त्वज्ञानी कपिल ! हे भागवत भावन श्रीमन्नारायण ! हे राम तत्त्व ज्ञाता शंकर ! हे निष्काम कर्म रहस्य दर्शी आसुरि ! हे निर्लिप्त कला कौशल पंच शिष ! ॥२॥

हे चतुर्विध वाणी के आधार ! हे व्यक्ताव्यक्त ज्ञान राशि ! हे साक्षात् सदाचार ! आप की जय हो। आप ब्रह्म विद्या के पति परम ज्ञानी जनक जी के जमाई हैं ! आप की महिमा शेष जी भी नहीं कह सकते ॥३॥

हे वेदारम्भ हिरण्य गर्भ ! आपने मुझ दुरात्मा के दोषों पर ध्यान न देकर मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया, यह आप की महानता है। मैं इस सन्तोचित व्यवहार से परम सन्तुष्ट हुआ हूं ॥४॥

होंठ पर दाहिना हाथ और जननेन्द्रिय पर बायाँ हाथ रखकर चलने वाले मेरे नग्न रूप को देखकर किस मुनि के हृदय में क्रोध न उत्पन्न होगा। परन्तु आप अपूर्व मुनि हैं। आप की क्षमा की जय हो ॥५॥

मर्यादा रूपी प्रतिमा को तोड़ने वाले म्लेच्छ के समान पुण्य कर्मों का वट पार, दम्भ का पौत्र जो मैं हूं उस पर आप का इतना वात्सल्य ? मैं आप के दिव्य स्वभाव पर विक गया हूं ॥६॥

हृदयस्थ शुभ मन्दिर में प्रतिष्ठित, परमात्मा के दर्शन का द्वार उन्मुक्त कर दीजिये सब को समान रूप से उसका पुजारी बनाइये। आपके सरल और स्वच्छ मार्ग में किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुंचेगी ॥७॥

कलि की स्तुति को सुनकर सहृदय स्वामी जी ने उसे तारक मन्त्र का उपदेश दिया वह कृतार्थ होकर चला गया। चलते समय उसने बड़े भाव से साष्टांग प्रणाम किया।८

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्वणास्टक उधी चाउतिषु ताहुणज्ञापितं दामितं उडुणा के रोली थं फुसा जिफुणसा ॥

इस अष्टपदी के विचले छः पदों को जो नियम पूर्वक नित्य अर्द्धरात्रि में पाठ करेगा उसको परमार्थ पथ में चलते हुये कलियुग किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुंचावेगा ॥

अष्ट पदी ॥१७॥

द्रिहटिन सुधावल भेतरा निरूजेंर ताहुत झेतरा ।
मकनू मुकसिर पेतरा हिंजानुता रिल केतरा ॥१॥

गौखासता ब्रत माहुनी कलपौंत पिउटा डाहुनी ।
हेरम्ब हुल्ला साहुनी तरसीमड़ा ढुट नाहुनी ॥२॥

चिण्डेषुपित णित णड़ यथा जिक्काल जोभा मड़मथा ।
टिउरी ढुणन्था पतपथा घिन्ना घुण्णु मटलथा ॥३॥

हेटाणु दिघघा दौहती विनगा सुह्किका मालती ।
छिटुआ छुहाना पासती चेराषुणा कुह आरती ॥४॥

जौना सुका पभ राकुना है दासड़ा णुट साबुना ।
अैहेरु हाछी पाचुना मैफा पिलाफुण आहुना ॥५॥

झाला सिवासित जैलठी नौहामिरा झिलसैंवठी ।
रूक्नाणियाढ़ी पैहठी हुर बा छुना पण दैवठी ॥६॥

टिसुणा तिजारी तरहठी मसतासिना फिड़ पर पटी ।
पौझेषु णाणिष घरमटी नाखा नखा गिड़ु भरवटी ॥७॥

चैटाणु चिन्नट चनषुसा हैछी हुछा छित हुट लुसा ।
पेणस्तणा किट पधहुसा सौखीतड़ी लुहुमक चुसा ॥८॥

अर्थः– सुधावल का राजकुमार यक्ष्मा रोग से पीड़ित काशी में आया । उसकी माता उसे लेकर स्वामी जी के चरणों में आकर रूदन करने लगी । दया वश पट खुला और उसको दर्शन हुआ ॥१॥

रानी ने विलाप करके कहा सात पुत्रों में से यही बचा है जो मरणासन्न है । राज कुल की रक्षा के लिए मेरी प्राण और बहू के सोहाग की रक्षा के लिये इसको जीवन दान दीजिये ॥२॥

आज्ञा हुई राजकुमार को जीते जी गंगा में फेंक दो । आज के सातवें दिन फिर आना और अपने कुमार को गंगा से माँगना वह नीरोग होकर तेरे पास आ जावेगा ॥३॥

इस कठिन आज्ञा को सुनकर राज माता और कुटुम्बी सब किं कर्त्तव्य विमूढ़ हो गये । जीते जी कुँवर को कैसे गंगा में फेंके । ऐसा करने का साहस किसी को कैसे हो सकता है ॥४॥

राज कुमार ने उस आज्ञा पर विचार किया और स्वामी जी के चरणों में दृढ़ विश्वास के बल से निर्भीकता पूर्वक स्वयं जीते जी गंगा में प्रवेश करने का साहस करके क्षत्रियोचित धर्म का पालन किया ॥५॥

पवित्र जल में डुब्बी मारते ही वह एक दिव्य उद्यान में पहुंचा जिसके बीच में सरोवर के किनारे एक राजभवन में स्वागत पूर्वक उतारा गया । वह रोग से मुक्त होकर आराम की विचित्र रचना देखते हुये ऐसा तन्मय हुआ कि सात दिन बीतगये।६।

वह पूर्वावस्था में प्राप्त होते ही जल के ऊपर आया और बल वीर्य से पूर्ण सुन्दर लावण्य मय शरीर से कातर अपने कुटुम्ब से मिला । उसे देखकर, उसे जीवित पा करके निहाल हो गये ॥७॥

उन्होंने धूमधाम से स्वामी जी की पूजा की । बहुत दान दिये । इस घटना से स्वामी जी के वाक्य ध्रुव सत्य माने जाने लगे ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणाष्टके हजु हुत्तमा जुरभ फिग ताह मासुण उछहे जे सुपणो दरयम कुहुणें सुजात पत भो महा ॥

इस अष्टपदी को सींकों से विल्व पत्र जोड़कर मंदार लेखनी और रक्त चन्दन से लिखकर नित्यप्रति ३३ दिन तक जल में धोकर रोगी को पिलावे तो उसका असाध्य रोग दूर हो ॥

अष्ट पदी ॥ १८ ॥

जौराहिना सिलभीरूथी चैधासड़ा नुगती रूथी ।
ममकार मैनित जीरूथी सरदेसटा ढिम पीरुथी ॥१॥

भस्मी भगीथी भारती भोभी भिरंगी भावती ।
निसणा निहौता छावसी शंटी सुकैया मावसी ॥२॥

नैना सिवाकित जाह्नवी ममणे मुणादिन पाह्नवी ।
टिकुराजिना दुत धाह्नवी हंभोसिनाजित काह्नवी ॥३॥

चौसेंटसा चेटारला पधनेस णौझिट सम्मला ।
नवसी पुराठित जससला आपारू वाझुन पट्टला ॥४॥

वैतागिना नुण वरदही जोतैं सिभासित नरदही ।
जाम्वायु जोथी सरदही होवेस नाहुत अरदही ॥५॥
तणथा महाकिर खुरखरन नवती सुकवती वरभरन ।
ताणैख तिउड़ा आकरन सुरसा जिवाहुन थरथरन ॥६॥
चौही जुना धानाधिगा मैना झिराहुस माहिगा ।
उभड़ा फड़ा फड़ फाहिगा जमशेधरा सित जाहिगा ॥७॥
जिम्भा जिमासुर नौगमी धीराधि धैरठ पैगमी ।
हाहो सिरातुद जौगमी खनधोतु झारूण अंगमी ॥८॥

अर्थः– जगद्गुरू के सत्ता की प्रत्यक्ष अनुभूति बसुन्धरा को होने लगी। जलवायु अग्नि और आकाश ने उस सत्ता को अनुभव किया। और सब निरन्तर श्री आज्ञा की प्रतीक्षा करते रहे ॥१॥

वसुमती की कोख को रंजित करने वाले नर रत्न चाहे भस्म धारी हों चाहे दिग-म्बर। रत्न पारखी स्वामी जी के दर्शन के लिये उसी तरह लालायित हुये जिस तरह चींटीं शक्कर की ढेर तक पहुंचने के लिये आकुल होती है ॥२॥

जन्हु तनया गंगा जी ने कुमारी कन्या का रूप धारण किया और चाँदी के कटोरा में खीर लेकर आई। भोग का समय था। कटोरा परदे के भीतर रखती हुई महा–देवी ने कहा–ब्रह्मचारी का बनाया पायस आज मत पाइये ॥३॥

परदा तुरत हटा और स्वामी जी ने उस कन्या को बैठने का संकेत किया। भोग लगाया और उसे कुछ प्रसाद देने लगे। कुमारी ने हाथ बढ़ाकर उसे ले लिया। और यह कहती हुई अदृश्य हो गई कि फिर कभी दर्शन करूँगी ॥४॥

ब्रह्मचारी पीछे पायस लाया, स्वामी जी ने ध्यान किया। सब बृत्तान्त जान गये, पायस की सामग्री जिस वैश्य के यहाँ से ब्रह्मचारी लाया था उसका व्यवहार चर्मकारों से होने के कारण उसका धान्य पवित्र न था ॥५॥

ध्यान से जगकर स्वामी जी ने कहा–"हा चर्मकार!" फिर खिन्न मन से वटु के प्रति कहा मैं अभी प्रसाद पा चुका हूं। भोग लग चुका है। अब इसे तू ही पा ले। उसने वैसा ही किया और शरीर त्याग दिया ॥६॥

सात्विक धान्य का बड़ा माहात्म्य है। इसे महापुरुष लोग ही जानते हैं। और उसी पर जीवन निर्वाह करते हैं। क्योंकि वे इन्द्रिय-जित होते हैं। यदि भूल से, धोखे से कुधान्य का प्रवेश होता भी है तो दैवी शक्ति द्वारा धर्म की रक्षा होती है ॥७॥

पवन पवित्र है, जल पवित्र है, तत्त्व पंच पवित्र हैं। सभी पर योग कुयोग के कारण उनमें विकार आ जाता है। सिद्धों की सिद्धता पर भी उसका प्रभाव पड़ता है। जिह्वा राम मयी है वह ठगा नहीं जाता ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणाष्टकं बिहि चिरंभसे पहितामि जपिणा सुत्तिणहा दब्रेणी साथवेही सा उजगी ॥

इस अष्टपदी का नित्य प्रातः काल पाठ करके सूर्य को प्रणाम करने से संसर्ग दोष और कुधान्य संग्रह दोष दूर होते हैं और बुद्धि सात्विक होती है ॥

अष्ट पदी ॥१९॥

मत्था सिंगेरी अधपती नयनानु तीरथ भारती ।
माधव मनोभव परहती रूवनावना घम किस्सती ॥१॥

झावर झलाझल हातिया हुंदा हुवासिन नातिया ।
जइयें जिहानुग तातिया मुखखा महासुक बातिया ॥२॥

मगरूवियां से वद्धमी नूसे हुसेखन छद्दमी ।
पंटी दरा किसु मद्दमी जैहुं झोराहिता नद्दमी ॥३॥

नदमी नमीणुग जस भणत पाषे पराखे टुस झणत ।
द्वैती दुरामुह पड़ पणत सावैव साहुत मन गणत ॥४॥

विसुआर तारब तूभता बिनिहाम मैरू सूमता ।
झिकनीय उड्डुम चूड़ता जैनासियह धुक संपता ॥५॥

जहुँ आँधुवाँ सूवाँ सुवाँ धैली तली दामत कुवाँ ।
नहुती हुती जानी खुवाँ लौली ढुली सावै छुवाँ ॥६॥

उत्थापिणा सीहौ भड़ी जहता जहत जहताँ गड़ी ।
मुइमाखु रासन चिचड़ी औंकारूवाँ गिल सावड़ी ॥७॥

रउनाढिनो गौपारिना सुवसाल ताड़ित पारिना ।
हुन्तो हुवस ताभारिना दुहणां फिहा किल कारिना ॥८॥

अर्थः- एक बार शृंगेरी मठ के शंकराचार्य श्री भारती तीर्थ निज अनुज माधवा चार्य के सहित श्री काशी पुरी में पधारे। लोग लुगाई बड़े हर्ष से उनकी सेवा सत्कार में लगे। देव तुल्य उनकी पूजा हुई ॥१॥

हाथी पर कामदार झूल पड़े हुये, चाँदी सोने के हौदे पर बैठे हुये, फूल माला से ढके हुये काशी की गलियों में विचरते हुये, लोगों के उपहार जय जय कार को स्वीकार करते हुये, सर्व सुखदातार हुये ॥२॥

रात पहर बीते छद्म वेष अनुज के साथ वे यती आये। स्वामी जी को उनके आगमन की सूचना ध्यान द्वारा पहिले ही मिल चुकी थी। पर वे महा मन्त्र का जप कर रहे थे। आचार्य यती को द्वार पर प्रतीक्षा करनी पड़ी ॥३॥

प्रतीक्षा का कष्ट उनको कुछ नहीं हुआ क्योंकि वहाँ पहुंचते ही उनकी बृत्ति आप से आप एकाग्र होकर अन्तर्यामी में विलीन हो गई थी। वे उस आनन्द सागर में मग्न थे जिनके एक बूँद से त्रैलोक्य का सुख है ॥४॥

घण्टी बजी, पर वे स्तब्ध ही थे। जब परदा खुला और शंख बजा तब कहीं उनकी योग निद्रा भंग हुई। वे सम्भ्रम उठे। स्वामीजी ने स्वयं उन्हें सादर बैठाया। पर वे जल से कढ़ी हुई मछली की तरह उस दिव्य रस का चिन्तन कर रहे थे ॥५॥

जिस भजन कुटीर का यह प्रभाव है कि वहाँ बैठने वाले को देव दुर्लभ सुख की प्राप्ति अनायास हो जाती है उस कुटीर के स्वामी के साक्षात् दर्शन का क्या प्रभाव पड़ेगा। यह विचारते ही जो उन्हें दर्शन प्राप्त हुआ तो वे आत्म विस्मृति पूर्वक चरणों पर पड़े ॥६॥

उन्हें उठाकर हृदय से लगाते हुये स्वामी जी ने कहा-यह आप क्या कर रहे हैं ? अपने जगद्गुरू वाले स्वरूप को सँभालिये। ज्ञान के मर्य्यादा की रक्षा कीजिये। छिपकर आने पर भी भेद खुल गया है लोग क्या कहैंगे ? ॥७॥

गद्‌गद और शिथिल वाणी से उन्होंने उत्तर दिया-आप की प्रेम सरिता की प्रखर धारा ने ज्ञान रूपी कराने को काट कर प्रवाह में डाल लिया है। बाल सन्यास का प्रश्न लेकर आये थे सो भी हल हो गया। हमें किसी के कुछ कहने सुनने की कुछ चिन्ता नहीं ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणाष्टके विविहि वासे उतपेरणा सिवहतं वरेराय धापि सुहितार जाता मसामहे।

इस अष्टपदी को ब्रह्मचर्य ब्रत में स्थिर होने की इच्छा रखने वाले प्राणी को नित्य पाठ करना चाहिये। और पथ भ्रष्ट को स्वपथ पर पुनः आरूढ़ होने के लिये भी ऐसा करना चाहिये।

अष्ट पदी ॥ २० ॥

कतुं किना सिव दौलनुँ फलिता फगा फहदा तनुं ।
परपा पहेवा आफनुं पंथा भिनाकुल हाकनुं ॥१॥

छरभा गिनासिक आतकी पौभा सिहाणु पातकी ।
नौसा खिलायित जातकी फौमा फिका फुन टातकी ॥२॥

सौरिन्दरा थिक फसवता कौना कुमानुत पतपता ।
धौवातुगा फिढ़ जुं अता औधेस आनुं फरमता ॥३॥

ढिंगर ढिढारम दौहिनी पदनम् गुरावत छौदिनी ।
अम्भाण पौका वादिनी फौरोष पुल्ला नादिनी ॥४॥

लौंगी धुनाखर देंहिमां फंसारिया पुट पेहिमां ।
जय नानुगा तित गेहिमां टंभार जैतु थेहिमां ॥५॥

हयवरट हुककर चरतुचर फर भरनि हरसट पुस्सहर ।
नटवट जुफर फर हुविस पर औनाथिला झिट भित्तिभर ॥६॥

तिउटा टिराढित णुंगुदन नौरिस थिरापित सनवरन ।
धौखा धुका धुन्ना सुहन पहुमी पुमी अवनी कुहन ॥७॥

फैरी खरी हौरी घिया नैरी हुसा जिल्ल वैभिया ।
सिंगेरि साउड़ ऐनिया मा माकरा नुट संनिया ॥८॥

अर्थः– कर्त्तृत्वाभिमान का त्याग ही सन्यास निष्ठा है, कर्म त्याग नहीं । उसके (कर्तृत्वाभिमान के) रहते हुये कर्मफल का त्याग नहीं हो सकता । प्रवृत्ति प्रतिपादक कर्तृत्व अभिमान का त्याग तो तभी सम्भव है जब हृदयस्थ पुरुषोत्तम से परिचय प्राप्त हो जाय ।।१।।

आप का अनुज देवाराधन से निष्पाप हो गया है । वेद माता ने उसे पवित्र कर दिया है । उसे पूर्व जन्मार्जित संस्कारों का ज्ञान भी हो गया है। और वे संस्कार ज्ञानाग्नि में संदग्ध होने ही वाले हैं । स्वामी जी के सारगर्भित उपदेश को सुनकर वे बहुत सन्तुष्ट हुये ।।२।।

मठाधीश ने कहा—आप सम्प्रति विरक्तों में मूर्धन्य हैं । हंसों में परम हंस है सो कृपा करके इसके मस्तक पर हाथ फेर दीजिये । आशीर्वाद दीजिये कि यह प्रतिभा-सम्पन्न होकर वेद भाष्य कर सके । यह ऋषि का काम है । इसलिये इसे ऋषि बनाइये ।।३।।

प्रार्थना पर पसीजकर स्वामी जी ने उसके मस्तक पर हाथ फेर दिया और भगवान की बांसुरी के समान मन मुग्धकारी शंख को बजाकर उसे एक ही क्षण में सत्यलोक में ब्रह्मर्षियों में प्रतिष्ठित कर दिया और कहा ।।४।।

बच्चा जंगल में रहना । एकान्त में रहना । तभी यह विद्या रहेगी । ध्वनि ध्यान का त्याग तीन काल में भी कभी न करना । भाव के अधीन देवता-भाव के अधीन भगवान—भाव मयी माया—भाव से भव और भाव से भावि ।।५।।

प्रेम पूरित भाव ही सच्चिदानन्द विग्रह है । राम नाम की दिव्य ध्वनि द्वारा (पूर्वार्जित कर्मों को दग्ध करके) उस विग्रह में प्राण प्रतिष्ठा होती है । परमेश्वर का यह प्रतीक मानस पूजा के लिये सबको सुलभ है ।।६।।

फिर एक बार शंख बजा अब की वह यति अचेत हो गया । उसको घण्टों बाद होश हुआ । तब उसने समुचित रीति से (दण्ड लेकर) दण्डवत प्रणाम किया । स्तुति की । चरण रज मस्तम पर चढ़ाआ ।।७।।

कृतकृत्य होकर शृंगेरी के अधीश्वर अपने साथियों सहित विदा होकर चले गये । उनके हृत्पटल पर स्वामी जी के मार्मिक उपदेश की रेखाखचित हो गई ।।८।।

।। अनुष्ठान विधि ।।– इयं चार्पणाष्टके ऊदी चाहि गुसा पिउभा डिगत्तांबर जो थिम पाहु विधेणु चणोवीद विहा भूहाया ।

इस अष्टपदी को एकान्त मन से पाठ करते हुये प्राणायाम करने से ब्रह्म लोक के दर्शन होते हैं और जीव शिव का भेदाभास दूर होता है ।।

अष्ट पदी ॥२१॥

टिघ्घा सिपाजिसु कातड़ा सिउ चौअसी महरातड़ा ।
ठिनुवार सउह जातड़ा मौपीय जोवा थातड़ा ॥१॥

मौही निसा मालौ किसा भौखारदाभुत जंहिसा ।
गिइजा गिईस परौनिसा जैथं नवारिस मिहंमिसा ॥२॥

पौराषिपा धुट टारनी मौमाकिना णुस वारनी ।
छापैत लापास पारनी मुष मासुका ढब हारनी ॥३॥

बाआनसी भावामसी ठाकौसना मह मंतसी ।
जैसो हसी कर हथ जसी औखेट पुण्णा महकसी ॥४॥

पर पानुगा मड़ माषुहर अरदान फिञा चोपुथर ।
हत्थेन सुकहा जाणुवर अस्तेन दिव्हा कोपिनर ॥५॥

खोभाभिया दौरो पिरा ननथा णिपाणिप पैघिरा ।
चंकारू फारू भयं भिरा कलिका उतानिप सामिरा ॥६॥

जोराविया झिस वत्तपन रंगे धिता छिस जातल्न ।
अंबोहुआ जूणा कतन पाहौ सडा नौटी पसन ॥७॥

झेवट झुना सुव डायमत रूपा सिहुत नर छासुहत ।
जीणे जवरतल मानुसत औका हुका भौवानुगत ॥८॥

अर्थः- महाशिवरात्रि पर शिवार्चन के लिये स्वामी जी अकेले ही ब्राह्मी वेला के पूर्व विश्वनाथ मन्दिर में गये। सब लोग निद्रा में मग्न सो रहे थे। कुत्ते और कुक्कुट को छोड़कर ॥१॥

जैसे स्वामी जी द्वार पर पहुंचे उसे बन्द देखकर लौटने का विचार कर ही रहे थे कि द्वार आप से आप खुल गया। भीतर दिव्य प्रकाश फैल गया। गिरिजा गिरीश ने साक्षात् दर्शन दिया ॥२॥

स्वामी जी ने मस्तक पर चन्दन चढ़ाया। गले में हार पहनाया। चरणों पर अक्षत चढ़ाया। प्रणाम करते हुये नत मस्तक स्वामी जी को उठाकर देव देव ने हृदय से लगाया। आसन पर बैठाया ॥३॥

उस समय काशी का मन्दिर कैलाश का दिव्य भवन बन गया। और महामन्त्र के युगल उपदेष्टा-एक जीते हुओं को उपदेश देकर हरि सन्मुख करने वाले (स्वामी जी) और दूसरे मरणोंन्मुखों को उपदेश देकर परधाम भेजने वाले (शिव जी) ॥४॥

ऐसी शान्ति मयी शोभा से विराजमान हुये कि देवी भगवती देख देख कर चकित और थकित हो गईं। उन्होंने दिव्य भोग स्वामी जी के सामने उपस्थित किया जिसे पाकर स्वामी जी कृत कृत्य हो गये ॥५॥

स्वामी जी ने अवसर पाकर कलिराज के अनुशासन, उदाराशयता, विनयशीलता और सत्परामर्श की चर्चा की जिसे सुनकर उमा महेश्वर बहुत प्रसन्न हुये। देव देव ने कहा ॥६॥

पाखण्डपति की निष्ठा केवल राम नाम ही में है। आपने उपदेश देकर उसे कृतार्थ किया तो अच्छा ही हुआ। उसने व्यास जी से उपदेश लेना चाहा था। सो नही हुआ। महामुनि ने अस्वीकार कर दिया था ॥७॥

परामर्श भी उसका उचित ही है। हमारे स्वामी शील निधान हैं। पतित पावन हैं, पात्रापात्र का विचार नहीं करते दीनबन्धु है फिर हम क्यों नहीं मालिक का अनुसरण करें। जैसे गंगा जल के सब अधिकारी हैं वैसे तारक मन्त्र के भी ॥८॥

अनुष्ठान विधि- इयं चार्पणोस्टके दिजि गिहा तुघणे मिषां बुदाथुम भिगु फिह-
स्तिपु चामुरंत वेणाद।

इस अष्टपदी को कण्ठस्थ करके हर स्तोत्र के आदि अन्त में पाठ करने से आशु-तोष प्रसन्न होकर मनोकामना पूर्ण करते हैं।

अष्टपदी ॥ २२ ॥

सरिसा सिवा सिव दाहठी मौलाहिला हुव पाहठी ।
कस लान्हरा कुत जाहठी रमना धना सन थाहठी ॥१॥

कौरी खुआँ धरना गिटी आनन्द रामा मांगटी ।
पाथो डिमंसू छागिटी हावै धुना पिल लागिटी ॥२॥

संकोचुड़ा थुप जाहड़ा वमहारूड़ा हिल पाहड़ा ।
धुत्ताणि आणिसु थाहड़ा रामायणा सिहु बाहड़ा ॥३॥

ढिउरा भिरा तिह पारसा लौसा तिनातिक बारसा ।
जोहूँ बिरंचा हरिमसा कपली छिटा दस परिलसा ॥४॥

शंखा निनादन ह्रौमिकू अट्टासिता गद नौमिकू ।
चट्टाणि पट भौ जौमिकू लिंगायतण सा औमिकू ॥५॥

पवस ।हिजौला धिन जिघा तहकरन खांटि झोटिघा ।
अवटरसि फाणिप सौरिघा आफाल साउक फातिघा ॥६॥

डयोडी डुराफा जंहुनर मक्की सकी थिट पैगवर ।
अनखोलुहा मिलतै तँवर दाडौम दिहुला वैसवर ॥७॥

गूढा सिगाधिस जैभहो अरणास औज्ञा कैयही ।
हे जानुना सह लै वहो तरणीसु रोणिस कैकही ॥८॥

अर्थः– शिव शिवा के सम्मान सत्कार से नम्र स्वभावी स्वामी जी धरती में गड़ गये। (अत्यन्त विनीत हो गये, मानो फलों से लदा हुआ बृक्ष झुकता जाता है अथवा मानो शुद्ध सत्त्व जल के भार से पेंदे में बैठता जाता है ॥१॥

हे यति पति ! एक बार श्रीराम नाम लेने वाले को मैं अपनी ईशता भूलकर तीन बार प्रणाम करता हूं। तब जो तुरीयातीत दशा में सदा प्राप्त रहकर साक्षात् श्रीरामानन्द ही हो रहा है उसके सम्मान में मुझे क्या करना चाहिये सो मेरी समझ में नहीं आता ॥२॥

अत्यन्त संकोच को प्राप्त हुये स्वामी जी ने स्तुति पूर्वक कहा–हे ईश्वर! मैं आप की महिमा को नहीं जानता। हे दयानिधि ! आपने जैसे मुझे कृपापात्र बनाया है वैसे ही मुझे यह वर दीजिये कि श्रीराम ही एक मात्र मेरी गति हो ॥३॥

भूत भावना ने बड़े प्रेम से अपनेगले का हार पहना कर कहा–यद्यपि मैं, ब्रह्मा और हरि आपके विशद भाव की कल्पना भी नहीं कर सकते तथापि आपको इस लीला भूमि में अवतरित होने से मैं आशीष देता हूं ॥४॥

विदा होकर आसन पर आते हुये स्वामी जी ने जोर से शंख फूँक दिया जिससे लोग जग पड़े। पुजारी ने देखा द्वार खुला पड़ा है। हल्ला हुआ, किसने खोला ? कैसे खुला चोर तो नहीं घुसा ?

किसी विवेकी पुरुष ने कहा–चोर आता तो पट तोड़ कर कुछ चुरा ले जाता। जब पल्ला टूटा नहीं, कोई वस्तु गई नहीं तो समझना चाहिये कि कोई सिद्ध पुरुष आया था ॥६॥

देखो, सुनो ! शंख ध्वनि अब तक गूँज रही है। जिधर जाओ उधर ही वह ध्वनि सुनाई देती है सो जिसने वह शंख बजाया वही आया था। वह अवश्य ही कोई ऋषि मुनि अथवा देवता होगा ॥७॥

इस पर हल्ला शान्त हो गया। स्नान, ध्यान, पूजा पाठ में सब लोग लग गये। जानने वाले जान गये कि कौन आया था और मन ही मन पछताने लगे कि हाय हमने स्वामी जी के दर्शन नहीं किये ॥८॥

अनुष्ठान विधि– इयं चार्पणाष्टकं सं भंतुं हिं शम हे ते मिग तुमं जिस थपतां फुतां लुतां भहा विणुपास दाभिह को चणे ॥

इस अष्टपदी को यदि शिव भक्त हर मन्दिर में पूजन के समय डमरू बजाते हुए पाठ करे और स्वर भंग न हो तो तत्काल संचित पाप नष्ट हो जाते हैं और स्वप्न में दिव्य दर्शन होते हैं ॥

अष्ट पदी ॥२३॥

जौराझिया औराबिया गानौघ दुत्थां सौरिया ।
मसुतेंण खुक्का जाकिया अवधू अजा आल्हीसिया ॥१॥

जुगमेण लुहिठां जेनवा अभिराहिरा फी बेनवा ।
लुम्बा छिना छुन डेरवा तंता पुता भितु केरवा ॥२॥

झिकता लुठाकिव वैरठी कुज्जा कुमाशव जैरठी ।
हिम्मा हुराझिन ऐरठी धिबहा सुनानी घैरठी ॥३॥

गौसी गुनाजुन साफरून गौसी जुरासी मुलवरुन ।
तहसीउता डिगवै अरुन छैभास जिस्साता थरून ॥४॥

होयम्ब नूना सावरन हिंघोट दाडिव जाभरन ।
निहपेत पुहमा पाहरन जौसी हुनासी आठरन ॥५॥

पैसीउ पेसण तंभदा नामा अनन्ता नन्द दा ।
कुम्मैटु चिघना जंरूदा माथेणु झोवा डंरूदा ॥६॥

तैणासु भाहिनु आमणी जैपुट निसा जिउ जामणी ।
थडता पिथा हिवटामणी णनसोहसो डिक फामणी ॥७॥

हैडाघिडा ठिपु रंकणा तत्था फितुण चौणांकणा ।
आदीतुभा हौ हंकणा पोठी पिफा फिहु टंकणा ॥८॥

अर्थः— स्टष्टि नायक ब्रह्मा जी ने भगवान हृषीकेश का अनुगमन करते हुये, भागवत धर्म की मर्यादा प्रतिष्ठित करने के लिये, पुष्कर क्षेत्र में पुष्करणा विप्र वंश में अवधू के औरस और माता सौरिया के गर्भ से १३६३ संवत्सर में कार्तिकी पूर्णिमा शनिवार को जन्म लिया था ।।१।।

साम गान में निपुण, वेद विद्या के धुरन्धर वक्ता, अभिरा शर्मा म्लेच्छों के उपद्रव से गबड़ाकर, सुख की नीद सोने के लिये विश्वनाथ जी के शरण में आये । शिव मन्दिर में ही रहते हुये ब्रह्म मूहूर्त्त में मन्त्र जाप किया करते थे ।।२।।

(वहाँ शिव रात्रि पर) उस दिन जो स्वामी जी ने शंख ध्वनि की थी उसे उस संयमी विप्र ने सुनी थी । पूर्व स्मृति के जागृत होने से दिव्य संस्कार जाग्रत हो गये, टोह लगाते हुये वे पंच गंगा घाट पर उपस्थित हुये ।।३।।

दर्शन की कठिनता ने दर्शन की लालसा तीब्र कर दी । हर मन्दिर का जप छोड़ कर वे ब्रह्म मुहूर्त में घाट पर बैठकर स्वामी जी की प्रतीक्षा करने लगे । एक दिन दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो गया । मानो रंक को निधि मिल गई ।।४।।

चरणों में पड़े । मरजी हुई क्या चाहता है । उदार दाता की श्रीमुख वानी सुनकर विप्र ने कहा केवल श्रीचरणों की सेवा । इससे बढ़कर और कुछ नहीं है । मरजी हुई अच्छा ! आश्रम में झाणू लगाया कर ।।५।।

सद्‌गुरु की आज्ञा पर चलना छुरे की धार पर चलने के समान है । जो प्राण का लोभ सम्बरण कर सकता है वही सेवा धर्म में निस्वार्थ मन से आरूढ़ हो सकता है । विप्र की सेवा से प्रसन्न होकर स्वामी जी ने उन्हें दीक्षा देकर कृतार्थ किया । और अनन्तानन्द नाम पड़ा ।।६।।

दीक्षा पाते ही वे कुछ से कुछ हो गये । उनकी पुतली फिर गई और उनके सम्मुख और ही दृश्य उपस्थित हुआ । यह संसार भी उनकी आँखों में कुछ और ही छटा दिखलाने लगा ।।७।।

प्रकृति वधूटी ने सुन्दर शृंगार और बत्तीसों आभरण धारण करके वयस्क सन्यासी को लुभाना चाहा परन्तु सच्चे गुरु का चेला न मरे न मारा जाय । वह लज्जित होकर चली गई ।।८।। अनुष्ठान विधि— इयं चार्पणोस्टके सावीणे सुदाउ सहु जोति परंच माणे खं वधूणा झबरीझ वेसि तपता झपि रंभि तागते ।।

इस अष्टपदी को मुमुक्षु एकान्त में नित्य भिन्न भिन्न समय पर सात पाठ किया करे तो उसको परमार्थ का मार्ग दिखाने वाले सद्‌गुरु के दर्शन होंगे और भगवत चरण में प्राप्त होकर कृतकृत्य हो जायगा ।।

आष्ट पदी ॥ २४ ॥

घारोधिया सुम जाहुवी थाभासि पुहपट कानवी ।
पजने सने लिपु माधवी रैनेषु झत्ता पाटवी ॥१॥

सोभण णुखा सिफ सत्त उत्त कायूणिफाहुट सेट पुत ।
कायाणु बौड़ा मुत्त खुत मैसी ससीं पुण्णू णुवुत ॥२॥

हौपड़ हजा सीणा भजा हम्मीर कुर्रा सौणुजा ।
पौहकाण पुण्णा आसजा तिक्खुत्तणा वसु धौरजा ॥३॥

झाभैरूकेणा धूप गण वैणंु खिरा कण कारमण ।
धहणी धआफिण फाखु छण ऐणी झणीजिंकारसण ॥४॥

जौगीषु धाणुक कट्टपा हैणंु भिहा खिन पट्टपा ।
दीणा हुजा झुण अट्टपा पैडा पिरामू वट्टपा ॥५॥

जवनी जुनी जंकी जही दुट्ठार धौणा धीमही ।
हेरो हिटा पुलपी तही चौसा चिरा ढिप शीपही ॥६॥

डंठुर सुवासन हुफ हसन अरखिण उदाविलु पैरहन ।
भमणंु भिणंु पटु फैटदन कमचूकिमन विसमा समन ॥७॥

झिपणा झिणा टिपुणिस खिणा जुहनासिताणंु किंदिणा ।
हिटरा हवाउण वैसिणा अंटे अवाठित भुवभिणा ॥८॥

अर्थः— वे (अनन्तानन्द जी) निज सेवा में ले लिये गये। परदे के बाहर वे बैठे रहते थे। उन्हीं के द्वारा आगतों का परिचय पाकर स्वामी जी यथोचित मान दान से लोगों को कृतार्थ करते थे। अनेक विषयों में उन्हें स्वतः उपदेश करने की स्वतन्त्रता थी ॥१॥

एक सिसोदिया कुल की राजकुमारी आई और पुण्य संस्कार से पूर्वजन्म की स्मृति से बोली—मैं ससी हूं। पुन्नू मेरा प्रियतम है। उसीसे विवाह करना चाहती हूं। वह कहाँ है? कब और कैसे मिलैगा। माता पिता खोज कर हार गये। मैं थक गई। शरण में आई हूं। लाज रख लीजिये ॥२।

कन्या की कातरोक्ति से द्रवित होकर स्वामी जी ने आज्ञा दी—बैठी रह-तेरा प्रियतम आ रहा है। यहीं मिलेगा तीन दण्ड पीछे राणा हम्मीर का विश्वास पात्र सभासद पुहकरसी बहुत से उपहारों के साथ ठाट बाट से आया। और सब अर्पण करके बैठ गया ॥३॥

उस कुँवर को देखते ही कन्या के मन में यह बात बैठ गई कि मेरा प्रियतम पुन्नू है। और कुँवर भी उसके रूप यौवन पर मुग्ध हो गया। दोनों का हृदय एक दूसरे के प्रति प्रेम से भर गया ॥४॥

उसी समय स्वामी जी का शंख बजा। जय घोष हुआ। कुँवर कुँअरि को झपकी आ गई। कुँअर ने देखा कि प्रियतमा शसी पर मोहित होकर उसने उसके लिये रजक वृत्ति को स्वीकार की और उसे अपनी ओर खींचा दोनों जन्म के प्रणय का मिलन हो गया ॥५॥

कुँअरि ने देखा कि वह ब्राह्मण कन्या होकर यवनी (मुसलमानिनी) बनी। पति वियोग से कातर होने पर उसकी प्रार्थना पर पहाड़ फट गया। और वह उसमें समा गई फिर जब उसका प्रियतम वहाँ आया तो उसके लिये भी पहाड़ फट गया और वह भी उसमें समा गया ॥६॥

जब वे सजग हुये तब उन्होंने सब हाल कहा और आत्म ज्ञान के धुँधले प्रकाश से सचेत होकर जीवन की अस्थिरता और पुनर्जन्म से भयभीत होकर उन्होंने सरलमृदु शब्दों में परमार्थ की भीख माँगी ॥७॥

स्वामी जी ने कहा—सदोष अमर्यादित अनार्य (म्लेच्छ) प्रेम की शुद्धि जब हो लेवेगी तब तुम्हें परमार्थ की भीख दी जावेगी। अभी तुम लोग गार्हस्व जीवन में प्रवेश करके दम्पति-सुख भोगते हुये प्रेम को शुद्ध और मर्यादित करो। सत्यव्रत और सतीत्व से अलंकृत होकर फिर आना ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके रीग सुणु भात पलेहु बुत तो जिफातु हुल सिबा भमीरता विभुहणा फिचकं सितादी ॥ इस अष्टपदी को प्रेम पथ के लौकिक अलौकिक पंथी को हृत्पटल पर अंकित कर लेना चाहिये, और प्रेम अनुष्ठान में तत्पर होने के पूर्व अवश्य पाठ करने से विरहाग्नि प्रदीप्त होकर प्रिय मिलन करा देती है ॥

अष्ट पदी ॥२५॥

गंगू बभा साहुं जफर मौलं विहासाणं कसर ।
जाजिण घुणाषी परवसर जीहुं जुरौणा धावषर ॥१॥

है संभिया सदिमा सिमा जैसं जिहोवा साकिमा ।
लौता उमा जावें दिमा कंघा खँघा चौरं रिमा ॥२॥

पारिम् पुराणिम् मैंहमुर औणी पवनता सामफुर ।
स्वामिम् सुरंणा हातुभुर थोसी थरंटा सीमउर ॥३॥

जै स्वामि रामानन्दड़ा टौकाम भारा मंदड़ा ।
जफरा हुता गंगूणड़ा मौबी दबी तंसूणड़ा ॥४॥

आस्रम सरम सरमा वहम् टयुखी खुराणं सासहम् ।
मूजिम् मजिम् मैका कहम् धइणी जुरासा पालहम् ॥५॥
पइभी पभी सिकुनामुभी जासी सिसूटा आमुभी ।
रौना किणाकुं भामुभी ज्योतीषि गंगू गामुभी ॥६॥
बड़डम सहा भँगड़ा जफर कोयूम ताडत कानुगर ।
देहीम सुहवर साँहसर पैहूम गंगू गोटब्बर ॥७॥
मसहून कौदी कोहुड़ा बसुफीम बोढा वोहुड़ा ।
अवजीस जावन जौहड़ा पैफीस सउनव तोहड़ा ॥८॥

अर्थः– एक ब्राह्मण गंगू (गंगाराम) दक्षिण देश से अपने चाकर ज़फ़र खाँ के साथ काशी में किसी सम्बन्धी का फूला बहाने आया था। ऐसा करते हुये वह धारा में प्रवेश कर गया। सँभल नहीं सका और अथाह जल में डूबने लगा। किनारे पर खड़ा उसका सेवक उसे बचाने के लिये झट गंगा में कूद पड़ा ॥१॥

मालिक को किनारे की ओर खींचते हुये वह सेवक भी भँवर में फँस गया। दोनों उसमें चक्कर खाने लगे। घाट पर के लोग हल्ला कर रहे थे। हरन्तु उनको बचाने के लिये कोई भी भँवर में पिलाने का साहस नहीं रखता था ॥२॥

उसी समय जोर से वृष्टि होने लगी। लोग भागने लगे। घाटियों के छप्परों में छिपने लगे। एक बालक आया। बाँस की पतली छड़ी हाथ में लिये हुए नदी में भीगते हुए घुसा। स्वामी जी की दुहाई देता हुआ चिल्ला रहा था कि इतने ही में गंगा ने थाह होकर मार्ग दे दिया—भँवर शान्त हो गया ॥३॥

बालक ने कहा जय स्वामी रामानन्द जी की। जफर ने तुरन्त उस वाक्य को दुहराते हुये गंगू का हाथ पकड़ा। किनारे पर सब आये। वर्षा भी धीमी पड़ गई। गंगू को जब होश हुआ तब वह बालक अदृश्य हो गया। वे दोनों आश्चर्य में पड़े। एक झोपड़ी में उन्होंने शरण ली ॥४॥

वह स्वामि भक्त सेवक पूछता पाछता अपने मालिक के साथ आश्रम पर आया। स्वामी जी की जयजयकार मनायी कि आपके नाम के प्रताप से हम दोनों की जान बची है। हमको दर्शन देकर कृतार्थ कीजिये। उन्हें झरोखा दर्शन प्राप्त हुआ ॥५॥

परदे के बाहर वे बैठे—पूछा—वह बालक कौन था जिसने हमारी जान आप की दुहाई देकर बचाई है। क्या वह आपका कोई शिष्य था और आप ही ने उसे भेजा था स्वामी जी ने कहा—वह हमारा शिष्य नहीं था। जगत्पति सर्व नियन्ता भगवान थे।६।

जफर बड़ा भाग्यशाली है जिसने दर्शन पाया। वह बादशाह होगा इसमें सन्देह नहीं। गंगू ! तुम इसको गुलाम मत समझना। सहृदयता का व्यवहार करना ॥७।

अमृतोपम बचन सुनकर ब्राह्मण और यवन दोनों सजीव स्वस्थ और आनन्दित हुये। उनको प्रसाद मिला और वे सुखपूर्वक अपने देश को गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकं टिधु चिरा जिमु हातु सैगुण विकरसा गुल वखिरा हुब सीथ ॥ इस अष्टपदी को कागज पर लिख करके जल से धोवे और उसी जल से हरिद्रा वा केसर चन्दन कस्तूरी के साथ गोली बनाकर वैसाख बदी तेरस को रख ले–जब कभी राज सभा अथवा सुधी सभा में जाना होवे घिसकर तिलक लगा कर जावै तो सम्मान को प्राप्त हो ॥

अष्ट पदी ॥ २६ ॥

पइहो दिहा धुत पावगी रम्भोसु नाहुन आवगी ।
मुकदूम मैषा दावगी पदते सुअरणा तावगी ॥१॥

दौरीणुजा निसतागमर पौरीभुता खिल मानसर ।
आभारूणाच्छितु धानुगर कौपीणु सिणुभउ तापहर ॥२॥

माऊस ताउस भाउसी महताण गीसा हाउसी ।
तंभूर जंभुरू ताउसी आदासु औपट आउसी ॥३॥

बसुहा बिधा अवनीषुता पटतीणु दाहौ संयुता ।
पउरीणु सैहा तानुता धइणा पिणा डाणौभुता ॥४॥

जवखार ताभुज नावना जइनी जुनो कतरावना ।
मैदी प्रतीची ताजना सत्तरूं सिपादिक आजना ॥५॥

जुणतान गौणी बाससा तंणा भदाणं आससा ।
माहूत लाहत जासमा कैंसो रिसा उज काससा ॥६॥

सुहिया अनन्तानन्द जी उहिया कहूठा जन्दगी ।
मौडिस गवाकुस पौहरी जानैट जिहुना बौहरी ॥७॥

आपात ओठ्ठा अंसुई जवगीष गुन्ना संकुई ।
ननसो नसी उन संभुई मवखो भुपी पररंचुई ॥८॥

अर्थः— काशी के पाम्रतेश्वर स्वामी जगद्गुरु के साधक शिष्यों में से थे। एकदिन उनकी दशा विचित्र हो गई। वे चौरी चौरासी में अटक गये। ऊर्द्ध गति रूक गई। स्वासोच्छ्वास तक बन्द हो गया ॥१॥

मन्त्र से आकर्षित होकर जैसे देवता चले आते हैं उसी तरह शिष्य की दशा को सुधारने के लिये स्वामी जी उनके आश्रम पर पिछली रात में गये। उन्हें खेचरी मुद्रा से सँभाल करके चक्षु पटल खोल दिया वे गगन गुहा में स्वस्थ हो विचरण करने लगे।२

योगस्थ करके उन्हें महा मन्त्र श्री राम नाम के दिव्य कलाओं का अचिन्त्य चमत्कार दिखाकर स्वामी जी अपने आश्रम पर लौट रहे थे कि आकाश मार्ग से विचरते हुये नखत के समान प्रकाशित एक योगि—मण्डल पर दृष्टि गई ॥३॥

वह मण्डल पृथ्वी पर उतरा और स्वामी जी को घेर कर स्थित हो गया। उन्होंने कहा कि भक्त शिरोमणि प्रहलाद जी को गर्भ में धारण करने वाली कोई माता पृथ्वी पर नहीं मिलती ॥४॥

उन सिद्धों से स्वामी जी ने कहा कि देवाङ्गना प्रतीची उन्हें गर्भ में धारण करेगी और भूतल पर जन्म देकर स्वर्ग लोक को चली जायगी। इस आश्वासन मयी वाणी को सुनकर वे सिद्ध चले और स्वामी जी के आश्रम पर आये ॥५॥

स्वामी जी के आसन पर आने, स्नान आदि से निबृत होने एवं भजन में तत्पर होने पर शंख ध्वनि सुनकर जगे हुये पास पड़ोस के लोगों में से एक गोप कन्या आकर्षित होकर आश्रम पर आई। वह विक्षिप्त सी थी। सूर्योदय तक सुषुप्तावस्था में प्राप्त जीव की तरह वहीं पड़ी रही ॥६॥

श्री अनन्तानन्द जी ने जल सिंचन द्वारा उसे सचेत करके उससे हाल पूछना चाहा परन्तु उसकी दशा चिन्त्य हो चुकी थी। पुतलियाँ स्थिर हो चुकी थीं। स्वामी जी से प्रार्थना की गई। चरणामृत देने की आज्ञा हुई ॥७॥

चरणामृत के कण ओष्ठ पर पड़ते ही वह सचेत हो गई। नेत्र खुल गये। उठकर बैठ गई। हथेली पर चरणामृत रख कर पान किया। दण्डवत किया। यकायक उसके अंचल से अग्नि उत्पन्न हुई। स्थूलता जल गई। दिव्यता निखर आई। वह स्तुति करती हुई सुरलोक को गई ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके विसु गिसा वदेता मिहतोविन जिहे दरे हुस गीसा थिप धुण वातु पचिता साजुहे ॥

इस अष्टपदी के प्रथम तीन पदों को यदि गर्भवती नित्य पाठ करे तो भाग्यशाली शिशु जन्मावे और अन्तिम पदों को यदि सत्यकामा नित्य पाठ करे तो सती पद को पावे।

अष्ट पदी ॥२७॥

सहबारूकी असना कुची ममतार नारा नर मुची ।
ओवार ताहुच माहुची अवरेंहु आहन मानुची ॥१॥

महतीनु भाउर भेखड़ा सहुजी खुजी भड़ सेखड़ा ।
पहती पुही पर तेखड़ा अइटे उटे अरू हेखड़ा ॥२॥

मंुगी सुगी महरातड़ा जंुगी उगी उत्सातड़ा ।
माणी मघी मुतपातड़ा दैणी दुणी नाचातड़ा ॥३॥

हूसी हुसेई हम्मिदा जैषांसड़ा उन कम्मिदा ।
कारोवियाणंु पम्मिदा चेफुल चकत्ता जम्मिदा ॥४॥

जइगीणु आहुर मादिना साभूर गौणा गादिना ।
ताडीम जासन सादिना धरकार जुअटा फादिना ॥५॥

धउला धिइंसा पाहुली तरफा सुफा जिसु टाहुली ।
हैरास रहुना सातुली पइसा पिसा पुस पातुली ॥६॥

दिउना दिघाना जन्तुरम समसाद भोदस अंकुहम ।
परधे पदे परनंगुवम हरूआ हुआ हुर वंपुनम ॥७॥

थउभो दुभी दंभाखिया जन्ता हिथा उस डाखिया ।
पैणे पुणे फट चालिया गर्हवे गुफे धिज नालिया ॥८॥

अर्थः- सायं सत्संग में एक सन्त नूपुर बाँधे नृत्य करते हुये आये। वे यही कह कर नाचते थे कि जाग्रत, स्वप्न में, घर-बन में पूरब पच्छिम में तो मुझे दिखाई देते हो फिर यहाँ परदा क्यों ? हटावो परदा दर्शन दो। सत्संग में बैठे हुये लोग उसकी बातें सुनकर आश्चर्य में पड़ गये ॥१॥

परदे के भीतर से आज्ञा हुई "दर्पण में अपना मुख देख ले तब मेरे पास आ-दर्शन मिलेगा।" इस आज्ञा के साथ शंख ध्वनि हुई। वह मस्त साधु दण्डवत गिर पड़ा। पृथ्वी पर लोटने लगा। नेत्रों से अश्रु धारा प्रवाहित हो गई। मस्ती में बड़बड़ाने लगा ॥२॥

उसी समय मंगी पुरोहित हथेली पर अग्नि का गोला लिये हुये आया और बोला, द्यू द्वीप में पच्छिम भारत के अग्नि पूजक आर्यो के गुरू ने मुझे भेजा है,मैं तन से,मन से, बचन से निष्पाप हूं। अग्निदेव इसके साक्षी हैं। परमार्थ की पहिचान चाहता हूं॥३॥

आज्ञा हुई। परमार्थ को पहिचानने वाली बुद्धि तो उसी को प्राप्त होती है जो निरभिमानी होता है। तुझे तो अपने निष्पाप होने का अभिमान है। लेकिन कर्रोवियां जी का भेजा हुआ आया है, इसलिये तू उस मस्त साधु का चरण चूम ॥४॥

उस मंगी ने आज्ञा का पालन तुरन्त किया। चरण छूते ही साधु लोटता हुआ, उठ बैठा। उसने मंगी को हृदय से लगा लिया और आग के गोले को निगल गया। निष्पाप और आप का अच्छा सम्मिलन हुआ ॥५॥

उसका निष्पाप पने का अभिमान चूर हो गया। उसने साधु के चरण चूमने की भरपूर चेष्ठा की परन्तु उसे छाती से लगाकर पवित्र अश्रुधारा से उसे स्नान कराकर साधु ने उसे ऐसा करने का अवसर ही नहीं दिया ॥६॥

इस सम्मिलन का यह प्रभाव पड़ा कि दोनों के अन्तःकरणों से अविद्या का परदा दूर हो गया। वे परमार्थ परिचय के अधिकारी हो गये। दोनों एक साथ आगे पीछे हाथ जोड़े हुये गुफा के सामने आये ॥७॥

उनके आते ही परदा हटा दिया गया। और स्वामी जी जी के दर्शन से दोनों कृतार्थ हुये। कुछ कहने सुनने की आवश्यकता नहीं रही। मूक भाषा में प्रश्नोत्तर हुये जिसका तात्पर्य कोई नहीं समझ सका ॥८॥ अनुष्ठान विधि-इयं चार्पणास्टकं गा उजिर मारू हितं सुदात्तु रं तोमसा झुपंस भिरूथा पिसणु चिथ मुराजी तपी मुचे।

इस अष्टपदी को नदी में खड़ा होकर जो ३१ बार पाठ कर ले तो उसे लय सिद्धि प्राप्त हो और तेज सम्पन्न हो यदि नारी का मुख न देखै ॥

अष्ट पदी ॥ २८ ॥

पइणा सिहाणं जाउरी मुत्ता बिनासू भाउरी ।
औपारसी पुहपाउरी अग्गी अबाहुर दाउरी ॥१॥

चौ अंधिताशी फातिमा झाबैट अंधी आतिमा ।
खोणंण चाषुस पातिमा होवारसा सुहनातिमा ॥२॥

आभू विसू टीभू सना जैसन जआसन आमना ।
पैक्षिस पिन्हापुत डापना हैभिर हुभाभिर लापना ॥३॥

तणवाद मोहमद हजरतं पौणी फिहानुट पजरतं ।
अंछे रिवाणुस नजरतं यासीन सुरहा सजरतं ॥४॥

वैभूणिता हुप पच्छिमा मवसंुग दाउण अत्तिमा ।
औमाखि जाणं मुसलमा पडिमा जुनैदा मुल्लमा ॥५॥

पदथंुगणा दिर सुरमड़ा चाषुम चिणायुप दुरतड़ा ।
नउतीनुसा हुण हुरफड़ा फबती फरीखा थुरबड़ा ॥६॥

जै हुम्मजा झीणास मुहा कउरू खड़ा हिउ सत्तुहा ।
अैली हली या भीजुहा कैला खुदा तंुफा फुहा ॥७॥

सामी सुमानिस अलविदा सरहोशणं सद मंसिदा ।
आसारु झाबिम जौकिदा ननथाणु जिपुणा माहिदा ॥८॥

अर्थः– पश्चिमी आर्यों के गुरू (करोंवियांजी) को उत्तर स्वरूप यह शुभ सन्देश भेजा कि वे भारत में बसेंगे और यहीं उनके अग्निदेव की स्थापना होगी। वे घर ही में आये हैं। घर ही रहेंगे और फूलें फलेंगे ॥१॥

"जो जानते हैं वे बकते नहीं। जो बकते हैं वे जानते नहीं" इस वाक्य को दुहराती हुई फातिमा नाम की यवन कन्या आश्रम में आई। और फेरी लगा कर लौटी जाती थी कि सत्संग में तत्पर समुपस्थित सज्जन बृन्द उसके ज्ञान गर्भित वचन पर मुग्ध होकर उसे साग्रह बुलाने लगे ॥२॥

वह रमणी आई और किनारे स्वाभाविक शालीनता के साथ प्रणाम करके बैठ गई। उससे लोग प्रश्न पर प्रश्न करने लगे। किसी के प्रश्न का उत्तर न देते हुये वह थोड़ी थोड़ी देर के पीछे लोगों को घूरती थी ॥३॥

हजरत मुहम्मद की पुत्री ने घूरने से ही प्रश्न कर्त्ताओं के मुँह बन्द कर दिये। सभी स्तब्ध हो गये। उनके होश उड़ गये। वे कान रखते हुये नहीं सुन सकते थे कि क्या कह रही है। तब उसने यासीन का सन्देश कहा ॥४॥

मुसलमान धर्म की जननी, मौलाना जुन्नैद की आराध्य देवी, उन्हीं के शिष्य की प्रेरणा से मैं सेवा में आई हूं। वे पश्चिम देश में एक जंगल में रहते हैं। और मन, कर्म–वचन से भगवत् भजन करते हैं ॥५॥

आपके चरण रज को वे अपने नेत्रों में लगाने का सुरमा बनाना चाहते है। वे हूरों के फेर में पड़ना नहीं चाहते। वे परमार्थ को परखने वाली ज्योति चाहते हैं, इसीलिये उन्होंने भेजा है ॥६॥

इस सन्देश वहन को मैंने भी सौभाग्य सूचक समझ कर दर्शन के लोभ से छद्म वेष धारण किया है। मुझपर भी कृपा हो और उनपर दया की दृष्टि फेर दीजिये ॥७॥

स्वामी जी ने परदा हटाकर उसे दर्शन देकर कृतार्थ कर दिया और अलविदा पर्व पर उस महातमा को वहीं दर्शन देने का बचन देकर उस देवी को बिदा किया ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टके षिपुछ फा दिउला हिरंति भाहम दाथुण अबरी

तामुपा चिलुंप हीति ॥

इस अष्टपदी को पाठ करके सोने से अवश्य ही दिव्य दर्शन स्वप्न में प्राप्त होते हैं। और भविष्य में होने वाली घटना का ज्ञान हो जाता है॥ शुचिता से सोना चाहिये ॥

अष्ट पदी ॥ २६॥

दिक्कोणड़ा दुह डार दर वेदान्त पाचर पंगसर।
हौड़ा हिसी निब्बाण मर चैमूठ जीमू ठाणुथर ॥१॥

सौहाणिभी जाणंभिजा मकराणु साणं भासिजा।
पथरौणु जैछू जाणिजा सहरीषु आणव आनिजा ॥२॥

जंभाषिभा गौरेंषुड़ा पत्तम परोरा सेषुड़ा।
हुत्ताणु हैंणा जेषुड़ा दरदुस दुणीड़ा मेषुड़ा ॥३॥

साभूत सुनहा माखुरद जसतोण जहता जहत जद।
आसोणु जोती मां कुबद कोबद कुबद करहुंषु पद ॥४॥

झुपराम षड़ अचछर उदा शिव हेतड़ा आसुः मुदा।
पडतोण तैरूण ताहुदा असहीम औदी आलुदा ॥५॥

अयुतां सुणारूण पावटी पम्मा उथी टुत जावटी।
णैसे रूतासित आवटी छंगा खियातं भावटी ॥६॥

फटि कंचु जोती झुरमुटा मुरसुट सटुर साहुर जुटा।
आनैत ओटा पुर चुटा एथं हुमाथं नुरनुटा ॥७॥

वेदान्त गूहा गुह झटन पव्वीस पाचर पंपटन।
जै गशप जुषणा अंसटन आभूण औटा फरफटन ॥८॥

अर्थः- दीर्घ काल तक मनन करने के अनन्तर भी वेदान्त के मर्म को समझने में असमर्थ, निर्वाण पद के प्राप्त्यर्थ, यत्न शील, मुनि पुंगव पाचर जी सत्संग में आने लगे और श्रवण मनन में तत्पर रहते हुये एकान्त अवसर की प्रतीक्षा करते रहे ॥१॥

हृदय की बात जानने वाले स्वामी जी ने एक दिन उसी प्रसंग को उठाकर कहा- १ वह तू है २ वह तेरा है ३ वह तुझसा है ४ तू वही है ५ तू उसीका है ६ और तू उसी जैसा है। ये अत्यन्त आत्मीयता प्रगट करने वाले षट् महावाक्य मोह के परदे को फाड़ देने वाले हैं ॥२॥

ब्रह्माकार वृत्ति उत्पन्न करने वाले, माया के नृत्य कला का उपरत करने वाले, चेताने वाले, त्रिपाद विभूति का पता बताने वाले, सम्पूर्ण ज्ञान की कुण्डलिनी स्वरूप तत्त्व बोध कराने वाले (वे षट् महावाक्य हैं। प्रत्येक से जीव का उद्धार हुआ ॥३॥

प्रत्येक को लेकर सम्प्रदाय चला। प्रत्येक योग के एक विशेष प्रकार हैं। प्रत्येक परमार्थ की निसेनी हैं। अगम पंथ के राजमार्ग हैं। इनमें भेद कुछ भी नहीं है। तत्त्वतः एक ही हैं। केवल दिशा का अन्तर है ॥४॥

अन्तरात्मा शिव रूप है। शिव जी राम षड़ाक्षर का जप करते हैं। ध्वनि हृदय में गूँजती है। वे षट् महा वाक्य उन्हीं छ प्रकार की ध्वनियों के विकास हैं। जो हृदय मन्दिर का पुजारी है वह एकान्त मन से उन्हें सुनाता है। और योग युक्त हो जाता है ॥५॥

वह योग युक्त प्राणी विना प्रयास षट् सम्पत्ति भाजन हो जाता है। षट् विकार का शमन तो तुरत हो ही जाता है। षट् भग का अधिकारी होते ही उन ध्वनियों में झिलझिल ज्योति झलकने लगती है ॥६॥

वह झिलमिली बदलकर स्फटिक ज्योति हो जाती है। तामसिक प्रलय हो जाता है अर्थात् उस स्फटिक ज्योति पर समस्त मानसिक शक्तियाँ पतिंगी की तरह हुत हो जाती हैं। फिर राजसिक प्रलय और अन्त में सात्विक प्रलय के अनन्तर शिवजी विष्णु में लय हो जाते हैं ॥७॥

वेदान्त के गूढ़ अभिप्राय को सुनकर पाचर जी कृतकृत्य हो प्रणाम किया और अपने मन का संशय प्रगट किया। संशय के नाश होने से वे मुनि सामर्थ्यवान, वीर्यना और धीमान होकर विदा हुए ॥८॥ अनुष्ठान विधि-इयं चार्पणास्टकं रासू मसाते भण आते ठाते ज्ञाते जिवुधी चापीत फांगुलम् ॥ इस अष्टपदी को शास्त्र के खटपट में पड़े हुये पण्डित को नित्य पाठ करने से विवेक और सम बुद्धि प्राप्त होती है ॥

अष्ट पदी ॥ ३० ॥

कद्दम पजापति पाहिना अटुदेव हूती गाहिना ।
मकटाटिभा ब्योमाहिना उद्दाम काचिस थाहिमा ॥१॥

बौ आमिया समिहामिया पयसा कपिल धिकु णामिया ।
दइता दिता फिट फामिया जडता जिवा जड जामिया ॥२॥

नंत्ती नुती नुन बाहुती खैती खती सुहजापुती ।
औसी जगासी लालुती मनु नौखड़ा ही पावुती ॥३॥

जै सुन्हरा डिस भरभिमर संजाफ फाकट सव्विहर ।
आनन्द असुना अगिअर पुंसोत छइला माहपर ॥४॥

आवग्ग आदम अवधड़ा साउस सुपाउस अत्तड़ा ।
नाखेल खुल्ला चेपड़ा आभासु भासउ हेथड़ा ॥५॥
आदम पपीरा पौदड़ा जुम्मा जुहासू जौदड़ा ।
आसू दिभू भू औदड़ा फइहम जिराथू पौदड़ा ॥६॥
सिनता मती घोर अंगिरस आगस्त तीच्छन श्रुति परस ।
साँडिल्ल पँचसिख आसुरिस उफफान ओभी आभुरिस ॥७॥
चौरानबे रिषि सत्तमा श्रीराम भक्ता उत्तमा ।
नौसारू ह्मावर जत्तमा पाठे अनंतानन्दमा ॥८॥

अर्थः— कर्द्दम प्रजापति और देवहूती के व्योम विहार में जिस सनातन दिव्य दम्पति की परम मोहिनी छटा झलक गई थी और जिसकी अनुभूति हिरण्य गर्भ को हुई थी ॥१॥

उसी गर्भ से माता के अपूर्व ज्ञान को लिये हुये भगवान कपिल आविर्भूत हुये जिन्होंने तत्व विचार की सीमा को प्रदर्शित कर दिया और सृष्टि का सम्पूर्ण भेद खोल दिया ॥२॥

नाती का असली ज्ञान सुनकर और पुत्री से उसका प्रेरक रूप जान कर प्रथम मनु ने अपने मन में निश्चय किया कि उस सनातन दिव्य दम्पत्ति का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहिये ॥३॥

मनु दम्पति ने घोर तप किया। उसी पर तुल गये। अपने को मिटा दिया। तब कहीं उनकी मनोकामना पूर्ण हुई। उन्होंने क्रीड़ाशील, आनन्द–निधि, प्रेम-धन दिव्य दम्पति को प्रत्यक्ष किया ॥४।

आदि मनु ने अपने तप के प्रभाव से पर ब्रह्म मय पृथ्वी अवध की जो निजधाम का आभास ही क्या वही है स्थापित की और कालान्तर में तत् पृथ्वी का भूपाल होकर उस अगोचर को गोद में लेकर दृष्टि गोचर किया ॥५॥

आदि मनु के प्रेम वश प्रगट हुये त्रिदेव वन्दित परम देव ने उनकी सन्तान मानव मात्र को कृतार्थ कर दिया। और आगे की पीढी के लिये ऐसा सुदृढ़ धर्म-सेतु बाँध दिया जिससे सप्त भंगी ज्ञान, चतुर्विज्ञान, त्रिविध कर्म और एकादश भक्ति एवं त्रयोदश त्याग के राज मार्ग अंकित हैं ॥६॥

परम ज्ञानी विरक्त त्रिगुणातीत मुनि घोर अंगिरस अगस्त्य सुतीक्ष्ण, श्रुतिपरस, शाण्डिल्य आदि भागवतों ने पहले पहल इस अमृत का पान किया, छक कर मस्त हुये ॥७॥

इस तरह चौरानब्बे उत्तम कोटि के श्रीराम भक्त ऋषि हो गये हैं। जिन्होंने शंकर के समान शिव पद को प्राप्त किया। यह वार्ता श्री अनन्तानन्द के पूछने पर कही गई ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टके मभिरवांसुदेथिमा धुरणु तेफिजि जुणा पिहथां भुंजीहा।

इस अष्टपदी को चतुर्विधि अभ्यास से त्रिविध रोगों का शमन होता है और ज्ञान की ज्योति तीसरे महीने झलकने लगती है ॥

अष्ट पदी ॥३१॥

औसामहे गुव गामहे नौरासिखे पुवसामहे ।
परमासहे उहितामहें जाऊत जैनटिथामहे ॥१॥

अभिषेक पेंक पुहारिमा एकंत कंता पारिमा ।
हनुमंत संत सुधारिमा कंखोद खुच्ची आरिमा ॥२॥

उपपाटनी मट वारिणी उदगीथ औटा कारिणी ।
उष्मावनी हुसुपारिणी जौहा जुहासिन झारिणी ॥३॥

होतिम हुपैता हुब्बड़ा सावंख जोटा फुब्बड़ा ।
दस्तूह दानिस उब्बड़ा तरझौंह जशता झुब्बड़ा ॥४॥

चरखाम जौगव जाल्हिुर जर जोत साई फासफुर ।
ब्रह्मा उम्हा सहणा सुअर कंटभ किसुना धब्बधुर ॥५॥

टाऊर टिउन्हा तुक्किवा णनसी बिहंता पुक्किवा ।
बयना भिनंता हुक्किया जेताझिया झोणिक्किया ॥६॥

सोभूण डिग्गा हैमुचा हरफिन हुनाता कैसुचा ।
ज्याफेणा फोजन दैपुचा सरदेस साऊ कैसुचा ॥७॥

अस्तिन हुतस्तिन जेमुसे णणसोर होड़ा खेमुसे ।
टिहड़ी डुबैचा हेमूसे हरदा हुआँसा पेमुसे ॥८॥

अर्थः– प्रिय शिष्य (श्री अनन्तानन्द जी) को जिस समय चौथी अवस्था का अनुभव हुआ उस समय दृश्य अदृश्य के पेट में समा गया। ध्रुव लोक का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ, तारक का तेज चमक गया तब उन्हें मंत्र रहस्य का अधिकारी समझकर स्वामी जी ने कहा ॥१॥

परात्पर अवतार में राज्याभिषेक के पीछे एक दिन हनुमान जी बड़ी उत्सुक श्रद्धा से प्रेरित होकर सुख-सिन्धु शक्ति सहित भगवान के चरण कमलों के नीचे बैठ गये। किसी कामना की बासना भी उनमें नहीं थी ॥२॥

इस अखण्ड एकाग्र परम शुद्ध वृत्ति को देखकर और ईश पद पर प्रतिष्ठित जानकर जगत को भ्रू-भंगी पर नचाने वाली वेद माता उत्पत्ति, स्थिति और लय की करने वाली, निर्गुण को सगुण बनाने वाली। ब्रह्मादिक को मोह निद्रा में सोलाने वाली ॥३॥

वैदेही ने उन्हें तारक मन्त्रराज का उपदेश देकर निहाल कर दिया। शिव जी जिस हेतु हर से हनुमान हुये थे, उसे अनायास पूर्ण कर दिया। उस दिव्य रत्न को पाकर वे सर्व पूज्य हो गये ॥४॥

ब्रह्मा जी को ध्यान में यह वार्ता विदित हुई। वे मन्त्र रहस्य को जानने के लिये बहुत उत्सुक होकर राजधानी में बटु रूप से विचरने लगे। पवन कुमार से भेंट करने का अवसर ढूँढने लगे ॥५॥

जो सदा सेवा में रहता हो उससे भेंट होना भी महा कठिन होता है। बहुत फेरी लगाने पर एक दिन सरि तट पर भेंट हो गई। बटु रूप से होते हुये भी उन्होंने अपना असली परिचय देकर उस तत्त्व की जिज्ञासा स्तवन पूर्वक की ॥६॥

सोहाग की रजनी मनायी हुई सती की तरह संकुचित होकर पवनात्मज ने उसे छिपाने की बड़ी चेष्टा की परन्तु विधाता नम्रीभूत होते ही गये तब प्रभु प्रेरणा से पसीज कर उन्होंने उस रहस्य का अनुभव कराया और सत्य लोक में भेज दिया ।७।

उनके मानस पुत्रों को इसकी सूचना हुई। वे भी पितामह के पीछे पड़े। कस्तूरी की गन्ध दबाये से भी नहीं दबती। वे भी वैसे ही संकोच में पड़े परन्तु उसमें से केवल पाँच को उन्होंने उपदेश देकर अजर अमर कर दिया ॥८॥ अनुष्ठान विधि–
–इयं चार्पणास्टके सबि दिउक साहि पिधु गेया सापुझियान का हुपणा सबज भति गुजा सिषि भिटार पुदात ॥ इस अष्टपदी को तारक मंत्र राज के जप के आदि अन्त में नित्य पाठ करने से वासना क्षीण होती है और मंत्र मूर्ति के प्रकाश पूर्ण दर्शन से साधक कृतार्थ हो जाता है स्वप्न में अहेर में ॥

अष्ट पदी ॥ ३२ ॥

दाहुस्सिणं जुग पांसुजुर मातेखु हुज्जा पाणुसुर ।
नादैत उक्मा औंतिनुर हाहूण वारूण साहुथुर ॥१॥

जमशा जजुस्सा बाहना पस्सुण फबत्ता डाहना ।
उत्थं कुणा डिभु ताहना जुप्पे जुहन्टा आहना ॥२॥

औभूण तासुण जत्तिमी मौनस मुनट्टी अत्तिमी ।
पैसूड़ ड़ाहुड़ पत्तिमी चणवीर हुत्ता थत्तिमी ॥३॥

औसीणु मौआ आहुड़ा तिकथा तिगन्था फाहुड़ा ।
झौणा झिरण्टा चाहुड़ा भिगुडा फिघारू वाहुड़ा ॥४॥

जहसेट हेटा उस्सहा अमरेट ऊँचा निब्बहा ।
सौणी खुआ झितु सुच्चहा टामाणु तौजा फुच्छहा ॥५॥

हैगाणु हुव्बी हेमुसा णैरीणु जौटा फेमुसा ।
कासी कसीरा जेमुक्षा पैडम पुरडुम पेमुसा ॥६॥

हबरी हुमहिता छानुघी जैबत्त जहणा भानुधी ।
चिघ्घी चुघी डा पालुघी पहटा वरल्लम डामुघी ॥७॥

पयसा पिरौजा पाड़णा झित्तांगुणा सिपताड़णा ।
हपटा हूपैटा आड़णा कुमड़ा कुमैयत छाड़णा ॥८॥

अर्थः– मंत्र में मंत्र मूर्ति को प्रत्यक्ष करने की ही शक्ति नहीं होती प्रत्युत उसमें सभी प्रकार की इच्छाओं को पूर्ण करने की भी शक्ति निहित रहती है। मन्त्र स्वतः शक्ति स्वरूप है। उसके सामर्थ्य की कोई सीमा नहीं हैं ॥१॥

तीनों प्रकार के जप, चारों प्रकार के अजपा जप और आठों प्रकार के परा जप ब्रह्मादिक से ही ऋषियों को प्राप्त हुये। और इस भूमण्डल पर सृष्टि बिस्तार के साथ साथ प्रसिद्ध हुये। युक्ति से और यत्न से गुरू मुख से ॥२॥

तारक मन्त्र राज के चरम अधिकारी अ. उ. म है। रजो गुण–विशिष्ठ ब्रह्मा ही अ हैं। सत्त्व गुण विशिष्ट विष्णु उ हैं और तमो गुण विशिष्ट शिव म हैं। ज, प, थ से तात्पर्य उन चक्रों का है जहाँ उनका अधिकरण है ॥३॥

राघव गुरू (वशिष्ठ जी) और दाक्षिणात्य गुरू (अगस्त्य मुनि) एवं यादव (श्रीकृष्ण) गुरू (घोर अङ्गिरस) पृथ्वी तल में यही तीन तारक मन्त्र राज के मर्मज्ञ उपदेष्टा हुये जैसे समष्टि में त्रिदेव ॥४॥

ये तीनों महर्षि कभी अपने स्वरूप से नहीं विचलित हुये और न कभी मोह को प्राप्त हुए। वे अब भी हैं और साधक को मिलते हैं। वे गुरूणा गुरू हैं और भगवत से अभिन्न भगवान के समान ही हैं। इस रहस्य को प्राचीनों में से कोई कोई जानते थे ॥५॥

काशी पुरी जैसे कैलास पति को प्रिय है। वे वहाँ अवश्य बास करते हैं। उसी तरह भगवान बैकुण्ठ पति होते हुये भी भक्तों के हृदय में निश्चय करके बास करते हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ॥६॥

जिसके हृदय में भगवान का वास है वही सच्चा भक्त है। वही गुणातीत विरक्त है। वही सर्वज्ञ समर्थहै। वही मन्त्रराज का द्रष्टा है। वही मरते मरते महा मन्त्र के आश्रय से सूर्य मण्ढल को भेद कर निकल जाता है ॥७॥

रसज्ञ ही रस भोक्ता हो सकता है। ब्रह्म विद् ही अमृतत्व को प्राप्त करता हैं। सत्य और त्यक् वही एक बिभु है। जब यह बूझ पड़ता है तब निश्चय ब्रह्मविद् को पहुंच जाता है ॥८॥ अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकं दु दुहिप्ता बती हुपासि धुपमाजु तैयप धाकु सजायते गृमासुणे पुचं ब हिसा भू देरतां चुलया ॥

इस अष्टपदी के नित्य पाठ से तारक मन्त्रराज के आचार्यों में भक्ति उत्पन्न होती है। अर्थ सहित पाठ से शांभवी मुद्रा सिद्ध होकर अधर कपाट खुल जाते हैं ॥

अष्ट पदी ॥३३॥

देवाचया णूणा सुपा पद्धेसु पूकर करूहुपा ।
जउइस तुणेवा वालुपा अवरेणु सारण सिउछुपा ॥१॥

पधणी जखण ताटं खुणं मइती मुणंता रूणहुणं ।
पिहपा पयेणा पापुणं नजपा हपाटिण डाछुणं ॥२॥

झउया सिघाजिणुतरमडर मौडी खुटी साउण सचर ।
नपची चुची सैती उमर अंटा फिरंटा जामुसर ॥३॥

दउमी दिरंटा नोइनी हुप्पड़ फिटंगा गोइनी ।
चाउर भिड़ंपा होइनी अपसुण सभरणा मोइनी ॥४॥

हेफण सुआनर एकसले माइर इमौणाइट मले ।
ओसं जिहौबा ताघले णौणा रिहासिब थाअले ॥५॥
ठीपू टुबरसा माणऊ औटाट टारूस थाणऊ ।
गोभी गुभीड़ा भाणऊ लहटा छिटाफी काणऊ ॥६॥
जौणी जुणी फाहमबरें अर्नाट उबेंटि फिमचरे ।
सुसटुं निटुं पझनी अरे णकसीत साटू धागरे ॥७॥
मुत्तापहा माणिस खुपी झझपा झिफारवो तासुपी ।
हइसा गसांकिभा तुपी डहणा हुणा हावर णुपी ॥८॥

अर्थः- दक्षिण देश में सैकड़ों वर्षो से रुद्र देव और विष्णु जी के उपासकों में घोर विद्वेष फैला हुआ था । देवासुर संग्राम की तरह उनमें मारकाट हुआ करती थी । वैष्णवों की संख्या थोड़ी थी और शैवों की बहुत ॥१॥

वैष्णव लोग त्रस्त होकर उत्तर देश में भाग आये और एकान्तिक नाम से प्रसिद्ध होकर रहने लगे क्योंकि इधर भी शैव लोग ही प्रबल थे और उन्हीं के अधिकार में विष्णु जी की पुरियाँ भी थी ॥२॥

पाशुपत्य, लिंगायत, वीर शैवों ने पाञ्चरात्रिकों चक्रियों वीर वैष्णवों को परास्त करके उनके हृदय में आतंक जमा दिया । श्येन के झपेटे में पड़ कर जैसे कपोत पारावत दीन दुःखी होते हैं वैसे ही इनकी दशा थी ॥३॥

काम रूप के कुलाचारी पंचमकारी चामुण्डी, कपाली भैरवी के व्यभिचार, अभिचार, अनाचार, अत्याचार से वैष्णवी देवी त्राहि त्राहि पुकार रही थी ॥४॥

वे बड़े बड़े तामसी सिद्ध झुण्ड के झुण्ड वैष्णव शिरोमणि स्वामी जी को परास्त करने यहाँ आये । पहिले तो उन्होंने अपनी माया से सुन्दर सुन्दर स्त्रियाँ उत्पन्न करके गुफा में ही प्रगट कर दीं । लोगों में निन्दा के भाव फैलाये ।

देखने के लिये अच्छे अच्छे काशी वासियों को बुला लाये । सबके आने और कोलाहल होने पर स्वामी जी ने परदा हटा दिया । बाहर निकल कर अधर में अवस्थित होकर समाधि मग्न हो गये । वे ललनायें वहाँ जाते ही पाषाण की प्रतिमायें बन गई ॥६॥

लोगों ने उन सिद्धों को बहुत फटकारा । और उन मूर्तियों को निकाल कर उनके सिरों पर पटक दिया । वे लोग लज्जित होकर पुरी से चले गये । उनका बड़ा अपमान हुआ । मार्ग में ही दण्ड पाणि भैरव ने उन्हें इस कुकृत्य के लिये प्राण दण्ड दिया ।७।

स्वामी जी से लोगों ने कुटीर में पूर्वत विराजने की प्रार्थना की। उसे परिष्कृत करने की आज्ञा हुई । बड़े बड़े पण्डितों ने प्रिय शिष्य (श्री अनन्तानन्द जी) से आज्ञा लेकर श्रद्धा पूर्वक लीप पोत कर होम किया । तब महाराज जी विराजे ॥८।

अनुष्ठान विधि--इयं चार्पणास्टके गुथणे क दाया कि तिलं चुसारिणी तु आझि पऊण
सत वैंसा धेचु पेचु हिपसा ॥

इस अष्टपदी को पढ़कर साधना के आदि अन्त में होम करने से तामसी सब प्रकार की विघ्न बाधाओं से रक्षा होती है । यह वैष्णव कवच है ॥

अष्ट पदी ॥ ३४ ॥

अन्तोलियो एशीमता पंुघाव पड़ुवा साछता ।
औनंुग उसमत लीलता पाउस पनौटी आसता ॥१॥

पुहमेस कैडा खुम्मुते ऐनोर ऊताउण हुते ।
मौसम जिहाली सापुते जनलोक णैसाणंु चुते ॥२॥

तापिंडरा रुकमांगदा जैतंु तिहाफुण सांझदा ।
तबइत तुराइत आंसदा मपसुन हसुण टरांमदा ॥३॥

हैबारधी कीणा कछी पैगार बी बइहा बंछी ।
मटगारुयां पैनब पछी भरटंुगणा चुषमा चछी ॥४॥

हुइ भाषिअण जमडी धमू पुह बासरी कौसी पमू ।
झिनुआण लहणा साकमू उपटंुगजा फिटुका हमू ॥५॥

कामंुगडा हुण सावणंु धावै सुवैसा पावणंु ।
आमैठु हिंपा जावणंु पवटी पिघाटी झावणंु ॥६॥

टरसी टुआली माणुदर फूफण फबण झीणासुहर ।
मंट्रा टराषू जामुवर हैहीथ भूमा भासुकर ॥७॥

पैक्रम पुरौहा जीसुवा मित्थू लुका जश आहुवा ।
पैलंग्ग जाणंु थातुवा तिक्खण तमासिर भापुवा ॥८॥

अर्थः– पाडुआ ग्राम के रहने वाले एशी मत के साधु अन्तोलियो की प्रेतात्मा सुदूर देश से आकर कई दिनों से कुटी की परिक्रमा कर रही थी। परन्तु उसे दर्शन का सौभाग्य नहीं प्राप्त होता था, अन्तर्यामी स्वामीजी जान गये, बुलाकर हाल पूछा ।१।

उसने कहा कि मैं भगवान के बाल रूप का उपासक हूं। एकान्त में ही भजन करता था और इष्ट को प्रत्यक्ष करके गोद में पधराता था। अन्त समय भ्रमण में रूग्ण होने के कारण शकट में लाद कर कुटी में लाया गया। जन लोकस्थ स्वामी के चिन्तन बिना ही प्राणान्त हुआ ।।२।।

तब से प्रेत योनि में भ्रमण कर रहा हूं, हिमालय पर सन्ध्या समय श्री रूक्माङ्गद जी के दर्शन से कृतार्थ हुआ। उन्होंने मेरी दीन दशा पर दया करके मुझे चेताया। मुझे सोते से जगाया। हीन गति का बोध कराया, और उद्धार पाने के लिये आपकी सेवा में पठाया ।।३।।

हे संसार समुद्र से तारने वाले कर्णधार ! हे दीन वत्सल महा प्रभु ! मैं आप की शरण में प्राप्त हूं। मुझ पर दया दृष्टि फेरिये। जब तक मैं अपनी अधोगति से अन-भिज्ञ था तब तक मोह निद्रा में वेसुध पड़ा था किन्तु अब अपने घोर पतन से दुःखी हूं ।।४।।   उसके दैन्य भाव से निस्सरित मधुर बाणी से प्रसन्न हुए स्वामी जी ने आश्वासन देते हुए कहा–"वत्स ! घबरा मत। अब तेरा भाग्योदय हुआ है। परम भागवत ने दर्शन देकर और यहाँ भेज कर तुझे कृतार्थं किया है ।।५।।

सन्त मिलन ही एक मात्र भगवत कृपा की सूचना है, क्योंकि उसका फल तत्काल प्राप्त होता है। मोह निद्रा टूटती है। तमस से निकल कर ज्योतिः प्रकाश में अना-यास प्रवेश हो जाता है। अपनी वास्तविक दशा का ज्ञान प्राप्त हो जाता हैं ।।६।।

घोड़े अथवा हाथी पर चढ़कर स्वर्ग में जाने वाले बहुत हुये। रथ पर चढ़कर केवल धर्म राज गये–परन्तु भूमा के प्रकाश राज्य में जाने वाले सहस्त्रों प्रकाश वर्ष मार्ग में ही गँवा दिये। उन्हें अपने गम्य स्थान का ही पता नहीं चला कि वह कहाँ अवस्थित हैं ।।७।।   इस मार्मिक उपदेश के अनन्तर स्वामी जी ने मार्जन का जल फेंका, एक बूंद उसके मस्तक पर पड़ गया। और उसी समय वह अधोगति रूपी कूप से निकलकर उद्धार कर्त्ता का सुयश गान करता हुआ सिद्ध लोक को गया ।।८।।

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टके पुधा जिघुर हाकि लुम पाठर डा कुण लिया सुम पांजाल जां वलिणेक धामि सग ।।   इस अष्टपदी को शरत बसन्त की चाँदनी में चंद्रमा की ओर देखते हुये खड़े खड़े तीन पाठ करने से भजन में भगवान में दृढ़ता प्राप्त होती है और संसारी का रक्त दोष शमन होता है ।।

अष्ट पदी ॥३५॥

चउभागिणू ठाणू गिणं हैसट हिया सटहुं हिणं ।
तसली उसा टरमे रिणं धौठा किपा संकह मिणं ॥१॥

असलीण जाता ओहिणी छाता छिताता रोहिणी ।
महसिन खुणाटा पोहिणी जिउघुर घिणंटर देहिणी ॥२॥

मउटी भती गाने घुरर सउटी पटी हाडुल गुरर ।
पउटी फई फनटभ भुरर टरणे सड़ा खुम्मा खुरर ॥३॥

माणूक मइणा सामुणा पाहक पडणा आसुणा ।
थउभाण किसडा धापुणा हविधाणु उन्मा पातुणा ॥४॥

जनहुम्मिडा सुहजं मिडे दिउ साणु गामुट अंमिडे ।
थर भीगुसा हुट तंतिडे भारूक भडतरी ठंतिडे ॥५॥

टिघवारिया दिघवारिया मुकढारिया सुकुहारिया ।
मगसाकुडा हुपसारिया जनसीउ टिण्टुण ठारिया ॥६॥

माहीष णुत्ता धाहुता तँव खीर तुत्ता चाहुता ।
गहवर्ज गुण्णा गाहुता झफणा झिणासी थाहुता ॥७॥

अविणं सुमाहो तंहिमा तैसुह गुभा सुह जंहिमा ।
अवठं हुमाहुष वंहिमा ठविरास मुण्णा संहिमा ॥८॥

अर्थः— धवल गिरि के कृपाशंकर योगी अपनी जमात लेकर आकाश मार्ग से आये, मध्याह्न के समय जलती धूप और झंझावत में व्यग्र होकर गुफा पर उतरे। उनके दर्शन और योग शक्ति पर लोग चकित हुये ।।१।।

स्वामी जी ने परदा नहीं हटाया, पर अपने प्रिय शिष्य को स्वागत सत्कार के लिये आदेश कर दिया था। उन्होंने अधर में ही गलीचा बिछा दिया था और करवा में जल लेकर पहले ही से खड़े थे ।।२।।

चरण धुला धुला कर वे जमात के साथ उसी आसन पर अधर ही में बैठे। 'जैसा सुनते थे वैसा ही पाया'' कहते हुये उन्होंने स्वागत कर्त्ता से स्वामी जी के दर्शन की इच्छा प्रगट की। बहुत लोग जमा हो गये ।।३।।

सच्चे गुरू निष्ठ सन्त (श्री अनन्तानन्द) ने कहा—जिस महा प्रभु ने आपके शुभागमन की बात पहले ही जानकर तदनुरूप सेवा सत्कार की आज्ञा प्रदान की वही सर्वं तन्त्र स्वतन्त्र स्वामी दर्शन की भी व्यवस्था करेंगे ।।४।।

इस सेवक को जो आज्ञा हो सेवा करने के लिये प्रस्तुत है। शीतल, श्रम हारक, प्रासादिक अंकुर रस का पान कीजिये, विश्राम कीजिये, भाग्य से दर्शन दिये हैं। सनाथ कीजिए, शीघ्रता काहे की है ।।५।।

शरबत को छक कर, मृत्तिका पात्र फेकते हुये योगिराज ने कहा—ऐसा अमृतोपम, सुख सन्तोष प्रद रस तो हमने कभी नहीं पिया था जिसने कण्ठ से उदर में पहुंचते ही अपना दिव्य प्रभाव दिखाया। जैसे गुरू वैसे चेला ।।६।

परदा हटा, दिव्य प्रकाश छा गया। योगी अनुयायियों के सहित चकित और थकित होकर आसन छोड़कर पृथ्वी पर दण्डवत गिरे। स्वामी जी ने उन्हें उठाया और हृदय से लगाया और पास में बैठाया ।।७।।

उन्होंने कहा—मेरे अविनय को क्षमा कीजिये। मेरे शिर पर अपना कर कमल फेरिये। मेरे हृदय की संतप्त मंथाग्नि को शांत कीजिए और विरहाग्नि को प्रदीप्त कीजिये जिससे परम तत्त्व का साक्षात्कार हो ।।८।।

अनुष्ठान विधि

—इयं चार्पणास्टकं विजि गेहा दुणी सिपा कुम कुआ भूत खेतड़ा ताभि जुणिषं वत च उठ पुहु पुहु ।।

इस अष्टपदी को मन में पाठ करते हुये रोगी को औषधि पिलाने से असाध्य रोग भी साध्य हो जाता है। साधक पाठ करता हुआ अपनी दुखस्था पर विचार करे तो मन के रोग शमन हो ।।

अष्ट पदी ॥ ३६ ॥

जंगम सती जोगी जती दुम्माण ताटव आमती ।
मुहठर मुहाठर मुतवती नैखार नैसा लौहती ॥१॥

खारूम् खना कोडा कुगर परम् बहा ढेना बुढर ।
वौहोसड़ा माणेषु हर मंचेत मुच्चे ओग रर ॥२॥

संभाणुणा किभु कत्तकू आमैषुणा झिउ अत्तकू ।
माहेणु गाहे गत्तकू हाटारू जंगम जत्तकू ॥३॥

हाभाणु जडता नाघिवं कंथा थिणांगुद साधिवं ।
मंचे चगत्ता बाघिवं औजी जती जूणाघिवं ॥४॥

बावाणु झाणं णवषच्चण आगीषु उट्टा पौस वण ।
डिहुणा मुगैणा पर हिसण सत्ता सती जाणौभकण ॥५॥

जैसभ जिगीसा साउणी सौता णिगन्टा आउणी ।
टरथोभ जौपा काउणी मंठीर मुड्डा माउणी ॥ ६॥

विअहा विहागी बौलसत छिगहा छुमत्तर औबलत ।
णिपहा लगाणी क्षटसटत उणहा उवन्तर आमुक्त ॥७॥

जंसुह जवासिहु झौरझू मट्टाफ टौफा भौरभू ।
नाटुह टुरैटा हाणषू सहजं सहाजं ओमजू ॥८॥

अर्थः— हे कृपा निधान ! आप पहले योगी जंगम यती सती के गुह्य आध्यात्मिक भाव का स्पष्टीकरण कर वेद की सहस्त्रों शाखाओं और आगम के रहस्यों के आडोलन से जो सन्देह मेरे हृदय में उत्पन्न हो गया है और जिसे किसी ने नहीं निबृत किया उसे दूर कीजिए ॥१॥

स्वामी जी ने गम्भीरता पूर्वक कहा—संभूति और असंभूति दोनों को जो एक ही में पर्यवसित जानता है वही योगी है। वह असंभूति के द्वारा मृत्यु को पार कर जाता है, और संभूति के द्वारा अमृतत्व को प्राप्त करता है ॥२॥

सम्पूर्ण स्टष्टि स्वतः जंगम, परिवर्तनशील एवं क्षणिक भासमान है। इसका नित्यत्त्व केवल पुनराबृत्ति के नित्यत्व से ही है। इसका स्थायित्व केवल यौगिक सम्बन्ध द्वारा प्रकटित आभास मात्र से है। जो इस तत्त्व का अनुभव करता है वही जंगम है ॥३॥

वैकारिक अहंकार से भी जो मैं तें कामिनी कांचन का स्पर्श नहीं करता वही यती है। जो महत् बुद्धि से उन्हें स्पर्श करता हुआ भी नहीं करता है वह एक दण्डधारी यती और जो महत् मन और चित्त से स्पर्श करता हुआ भी नहीं करता है वही त्रिदण्डी है ॥४॥

जो योषिता पुरुष के तिल में तिल मिलाकर उसके सामने से न टलती हुई खुल खेलती है, जिसके इस अद्भुत चरित्र को कोई नहीं लखता है और जो अपनी सत्ता पर सुदृढ़ रूप से स्वतन्त्र अधिकार रखती है। वही सती है ॥५॥

अपनी जिज्ञासा का अभूत पूर्व समाधान सुनकर उसके गूढत्व पर बिस्मित द्रष्टा की तरह मुग्ध होते हुये उस योगी ने निज ज्योति स्वरूप पर पड़े हुये संशय सन्देह रूप स्वर्ण मय ढक्कन को हटाते हुये देखकर प्रणिपात किया ॥६॥

उसका शीस पृथ्वी पर झुकते ही स्वामी जी की दृष्ठि उस पर ज्यों ही पड़ी कि भगवच्छक्ति अग्नि, जो नमस् के वाह्याभ्यन्तर समर्पण को अंगीकार करती हुई सुपथ पर सुगमता पूर्वक खींच ले जाती है प्रगट हो गई ॥७॥

एक क्षण में, नहीं नहीं, क्षण के आधे से कम में वह योगी प्रणव में परिणत हो गया। वह देखते देखते अदृश्य हो गया। उनके अनुयायी उसे खोजते हेरते थक गये। पर वह फिर कभी नहीं मिला ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टके सिपणो दुटं वसटी पुसणा झिहणा धिगुताणि केसव जं जं जीरात ॥ इस अष्टपदी को कोष्ठक में पवित्रता से लिखकर टाँग देने से और नित्य बाँचने से अस्थिर बुद्धि वाला नाना भ्रम में पड़ा हुआ सुचित होकर तत्व विचार में स्वतः प्रबृत्त हो जाता है।

अष्ट पदी ॥३७॥

पेलिम्प सिख संदामिवं सांडिल्य घटज सदाशिवं ।
वाचो निवर्तन्ते यतो अप्राप्य मनसा को सहो ॥१॥

सर्वेंश्वराधिप को वरः निर्गुण सगुणाभ्यां परः ।
को कार्य कारणयोः टसे कैः मन्त्रटा मुत्ती बसे ॥२॥

टिउटां सहो वाचः शिवः इसु नाम धाम चु चिन्मयः ।
मसु भासु ब्रह्म सनातनः भहुण्ण माठिउ वामनः ॥३॥

सहना वरेयम् रामभू साकेत सत्था थित्तुसू ।
अंगीरूणं उपीणुपू नारायणुषा उट सुलू ॥४॥
हुं यस्य नाम महद् यशः औपार नादं विन्दुटः ।
मंत्रं त्रयं यंत्रं चु वः हुत्ता नुनंता आविपः ॥५॥

आठातु पाठातू फदा मकसी भिभासी पुन्नदा ।
टंषासि तौरम् तुम्मदा आसापु णौकट हुम्मदा ॥६॥
पैगा खिमाणं जीतड़ा नउटी निहट्टी पीतड़ा ।
झउहाँ जुरन्टा वैकुहा ढिफर खिहासुन मैकुहा ॥७॥
जाडिउ जुनंघा झरबटी गोदावरी गंगा तटी ।
औपड़ भुण्वण धानटी फैकुं तुअन्ना भानटी ॥८॥

अर्थः- स्वामी जी ने अपने प्रिय शिष्य श्री अनन्तानन्द जी के प्रति गुह्य तत्त्व का उपदेश इस प्रकार दिया कि महर्षि शाण्डिल ने महर्षि अगस्त्य के अतिथि सदा शिव जी से पूछा कि जहाँ वाणी की पहुंच नहीं और जो मन से अप्राप्य है सो कौन है ?।१।

कौन सब ईश्वरों का ईश्वर है ? कौन निर्गुण और सगुण दोनों से परे है ? कौन कार्य एवं कारण दोनों से परे है ? और किस मन्त्र में मुक्ति बास करती है ?

सदा शिव जी ने समाधान करते हुये कहा कि जिसके नाम, रूप, लीला, धाम चिन्मय हैं और जिसके प्रकाश को ही सनातन ब्रह्म कहते हैं। जिसकी ख्याति नाम रूप में विद्यमान है। (यदिहि नाम रूपेन व्याक्रियेते तदा अस्यातमनो निरूपाधिकं रूपं न प्रतिख्यायेते) ।।३।।

वही साकेत पति अगोचर श्रीराम हैं। जिनके दक्षिण अंश से क्षीर सागर में शयन करने वाले रमापति नारायण जी बामांश से नारायण, हृदयांश से परनारायण और चरणांश से नर नारायण हैं ।।४।।

जिसके नाम की बड़ी महिमा है। जो नाम रकार मकार से युक्त है । जिसके अनन्त मन्त्रों में तीन मन्त्र प्रधान हैं। अनन्त यन्त्रों में से तीन यन्त्र प्रधान हैं। जो चतुर्वर्ग के दाता हैं ।।५।

इसके असली अधिकारी वे ही हैं जो कर्म का त्याग न करते हुये कर्म फल का त्याग करते हैं। जो सत, रज तम से परे हो गये है। और अपने स्वरूप को जान गये हैं ।।६।।

वे ही जगत् ब्रह्म भूमा का अनुभव किया करते हैं। और वे ही सर्वत्र वैकुण्ठ बनाते रहते हैं। उनके हाथ वह त्रिभुवन पति बिका हुआ हैं ।।७।।

गोदावरी गंगा के तट पर पंचवटी की त्रिमूर्ति के ध्यान में मग्न होकर वे इष्ट में अनुरक्त कामिनी रूपिणी नटी के खेल से पूर्ण विरक्त होकर विचरण करते हैं ।।८।।

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं ऊथे पहे गुसेणे वाणु ता मिह धषु दोहा जुमाता रूपे पाझप छे भड़ा।

इस अष्टपदी को भूर्ज पत्र पर लिखकर पुनर्वसु नक्षत्र में भुजा पर बाँधने से संसारी को इच्छित वस्तु की प्राप्ति हो जाती है। और उपासक को उपास्य का बोध गुणातीत दशा से होती है ।।

अष्ट पदी ॥ ३८ ॥

सइधाशु विद्यारन्यगा जइपासु मकि आपन्यगा ।
पाधौत कुट्टा मन्यगा साहुण्ण विल्ला वन्यगा ॥१॥

हवणंुग पाड़ा डामुडा पगवार वौणा कामुडा ।
सइवासु कउथा झामुडा मगराडि जंभा घामुडा ॥२॥

गौपाछिनी वरदाछिनी माउब पिभाझित पाछिनी ।
लौका मिगा निछुहाछिनी संटोर सुन्ना साछिनी ॥३॥

सिव साहुता विउघापुता निकसाजिना सिकुरामुता ।
हउ पाझणा छिणु आमुता टपसारु दिउरा छाहुता ॥४॥

फविफुन सियाणंु पाडिमा औसाणु उप्पा ठाडिमा ।
झंझीर णुप्पा दाडिमा णंकीणु झौणा झाडिमा ॥५॥

भोगासु विन्नो त्यागड़ा उहवाणु झिमुटा वागड़ा ।
नइभाति तिअना णागड़ा कोथूम किसुटा फागड़ा ॥६॥

इक्का खिरा वहु डागिना भिट्टा भिभाणू थागिना ।
मिन्ना मुकेशी टागिना हैता हुवैता रागिना ॥७॥

जइ लुक्कड़ा फीवारुखा चिठुणा चिणा चीभराउखा ।
पइ पाणु छाराउझ थापुखा हैफे णुझाणी आमखा ॥८॥

अर्थः– एक बार एक शिष्य के हाथ विद्यारण्य स्वामी ने एक पत्र भेजा कि आपके आशीर्वाद से वेद भाष्य का कार्य हो रहा है। यश का लोभ भी संवरण हो गया है । अग्रज के नाम होने के कारण। परन्तु ईश्वर बुद्धि से ही ईश्वरीय वाक्य का मर्म समझा जा सकता है ।'१।।

इसलिये प्रार्थना है कि वह ईश्वर बुद्धि प्रदान करें। जिससे यह दुस्तर कार्य सम्पन्न हो। पत्र को सुनकर श्री स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुये और उसका उत्तर इस प्रकार लिखवाकर पठाया ।।२।।

सरस्वती की उपेक्षा से विफल मनोरथ होकर आपने मुझे स्मरण किया है । और समाचार भेजा है। सो आनन्द वर्द्धक अवश्य हुआ है, क्योंकि उच्च पद पर प्रतिष्ठित व्यक्ति में मर्यादा का उल्लंघन न करना ही स्वाभाविक है। आप धन्य हैं ।।३,।

आप सचमुच शिव स्वरूप को प्राप्त हुये मालूम होते हैं। सो आप अब परात्पर बिभु श्रीराम के बाल रूप का ध्यान कीजिये। सरस्वती स्वतः प्रगट होकर आप को वर देंगी और आपके अन्तरात्मा में ईश्वरीय बुद्धि उत्पन्न होगी ।।४।।

उस बुद्धि के उत्पन्न होने का चिह्न सुनिये । द्वन्द्वातीत दशा की प्राप्ति । पुरुषोत्तम और प्रकृति (राम और सीता) एक हैं प्रकृति की रचना पुरुषोत्तम की महिमा है । महिमा के विकास का हेतु उस विकास में उस महिमा के अनन्त रूप उत्पन्न करना है, जिसमें कि वह (पुरुषोत्तम) भिन्न भिन्न देहों में एक और अद्वितीय आतमा होकर बास करे और बहु रूप और बहु चरित का उपभोग करे ।।५।।

सुनो! सम्पूर्ण विकास वैभव का अति उत्कृष्ट भोग एवं बहु रूप की सत्यता और अनन्ता का सच्चा आनन्दोपभोग अतीव त्याग पर अवलम्बित है। जगत का त्याग नहीं वरन उस ईहा का त्याग जो सच्चिदानन्द की वैकारिक विकृति है । अहंकार रहित हो सबकी एकता उस एक बिभु में अनुभावित होना ही अमृतत्त्व का उपभोग है ।।६।। एक और बहु दोनों सत्य हैं। और दोनों तत्त्वतः एक ही हैं। भव एक है और विभव अनेक हैं। इसका तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण विभव वह एक अद्वितीय भव ही है जो अपनी महिमा के विकाश में स्वयं अवस्थित होकर रमण क्रीड़ा कर रहा है ।।७।।

इन विवेक चिन्हों की प्रत्यक्ष अनुभूति होते ही जान जाइयेगा कि देव दुर्लभ ईश्वरीय बुद्धि उत्पन्न हो गई । ऐसा ही हो ।।८।। अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणाष्टके हावि पुसंप्रीथा णुपाणं गासिहतु यै वह दुपत्ताह चेम्वराभि संपिजता उजता धिरम ।।

इस अष्टपदी के नित्य पाठ से सुमति उत्पन्न होती है। और परमार्थ पथ पर ले जाती है । विरक्त पुरुष ही ऐसा करे । दूसरा नहीं ।

अष्ट पदी ॥ ३९ ॥

कासी कुवन गाहन गहे सउभीनु फाउस आसहें ।
मकसू भिरातिन् पातहे अजुनंग दातुम टालहें ॥१॥

धउघा मुघा लउपासुधा पाहेब हुबिला जाउघा ।
छीरे सुरर जिमसां कुघा नौभीर आमा हुस पुघा ॥२॥

मलुआ सिहा मेल्हू महू डुंबालिया झातं छहू ।
कर्पासु पइमारुं पहू ने सामि निउ चारा जहू ॥३॥

ही दंद दंदानुत गुपस महसीक सौदाझिट पुपस ।
मस्तंगड़ा हुठ विस कुपस संसोभ जिण्णा भाउपस ॥४॥

सीभुर चभुर भौराहिया मकहीछु कनड़ा वारिया ।
चौभासु जूणा सापिया नहकुण रूवाणी झाहिया ॥५॥

पणणीर उच्छा उम्मिरण असलीम पैघा घछिघरण ।
महबू मभूभी रमपिरण गहणू गिणू रीभू भिरण ॥६॥

लिपिया गिया हिरिया ह्निया तिरिशा थिया भिरिया डिया।
मडली मुली धाटस ढिया कंघा घिपासी अडड़िया ॥७॥

नाचिकेतड़ा धमनी धुई चकबेल लंुठा मासुई ।
रज केल खंुथा घतघुई चभुआड जिउसा पम्मुई ॥८॥

अर्थः–काशीपुरी में चन्द्रग्रहण के अवसर पर बड़ा समारोह हुआ। बड़े बड़े आचार्य कवि कोविद्, योगी यती आये थे। उस दिन स्वामी जी समाधिस्थ थे। किसी को दर्शन लाभ नहीं हुआ। विफल मनोरथ यज्ञ कर्त्ता की तरह पछताते हुये वे लौटे ॥१।

उनमें से कुछ तो दूसरे दिन फिर आश्रम पर दर्शनार्थ आये और कृतार्थ हुये, उनमें क्षीरेश्वर भट्ट महा विद्वान आस्तिक बुद्धि वाले, दृढ़ व्रत धारी, मुख्य थे। इनको स्वामी जी ने सत्संग जनित अपूर्व सुख दिया ॥२।

स्वामी जी ने उनके संशय के निवारणार्थ कहा। यदि मृत्यु का कारण अविद्या मानी जाती है तो उसे मृत्यु उदधि के उस पार जाने का यान भी समझना चाहिये। क्योंकि कारण ही प्रकारान्तर से कार्य का ऊभ है ॥३॥

द्वन्दमयी चक्र गति ही उस (अविद्या) का अनवरत नृत्य है। एक ही सरगम को छेड़कर जन्म मरण के ध्रुवा पर नाना कला (दुःख सुख, हर्ष-शोक, पाप-पुण्य, आदि द्वंद) प्रगट करती हुई वह एक अद्वितीय सम पर ताल देती है ॥४॥

वह सम द्वंद में समबुद्धि ही है। वह प्रत्येक कला से अंग भंगी कटाक्ष, मूर्च्छना, आदि से इसीका उपदेश देती है। जिसे दर्शक प्रायः सुनी अनसुनी कर दिया करते हैं। जो सुनकर सावधान हो जाता है वह मृत्यु से तर जाता है ॥५॥

उद्भट्ट विद्वान् (क्षीरेश्वरभट्ट) जिस श्रुति के तात्पर्य को कुछभी नहीं समझ सका था वह श्रुति आज उसे दृष्टिगोचर हो गई। और कृतकृत्य हो गया। आगे उसने मुँह खोलकर वह सरगम पूँछा ॥६॥

स्वामी जी ने मुसकुरा कर कहा—वह सुन्दरी निज नृत्य नायक की परिचायिका रूप से यही सरगम अलापती है। सर्वत्र ईश्वर का वास है, वही— सबके पास है। यह सब उसीका विकास है। 'ईशावास्यमिदं सर्वम् ॥७

ज्ञान प्राप्ति पर नचिकेता की जो दशा हुई थी वैसी ही उसकी भी हुई, कुछ उनसे बढ़कर। वह वेद वेदांग ज्ञाता चरणों पर पड़ा और अबोध बालक की तरह बड़ी देर तक रोता रहा। अश्रु जल से चरण पखारता रहा ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणास्टके था गुसि कुहु चामि अधे पासु झोम तीम उछा भर आमुड़ा कणव परव रूप च।

इस अष्टपदी को ब्रह्म मुहूर्त में निरन्तर पाठ करके सुरति चढ़ाने से गगन में अपूर्व आनन्द दायी नाद सुन पड़ता है।

अष्टपदी ॥ ४० ॥

पिंघोड़ जिउटा भन्नगा छिंभोड़ सर्रहा जन्नगा ।
आमाण खिटा हुन्नगा सरधोषु जहड़ा चुन्नगा ॥१॥

तामीत ताफू तानर जंकाण ज्ञापू फाड़नर ।
हैंगीव जुट्टा हाड़नर आसं कुरैछा माड़नर ॥२॥

अउताड़ नूहा नत झिपा कमुआर किउआ सानिपा ।
मकहूस आणुज ताड़िपा कतधौं पधौंधा धापिपा ॥३॥

मकसीट पाउट जैखड़ा उणभारू दैहिट ऐमुड़ा ।
हथिताण हौणा छैछुड़ा अहसे अऊसे हुसहुड़ा ॥४॥

भिउथा भरेथा परथुआ नवणीत सुब्बा महहुआ ।
जम्मेट झुम्मा पैपुआ सरहेस सबठा नैनुआ ॥५॥
सतिहाणु गौजा जुम्मिरस लहविस्सु चैखा सानखस ।
झिबड़ी झिड़ी आमत्तु ठस असटेर टैखब आमुसस ॥६॥
विणु पाझड़ा अउणीवरी सहभेडु जोपी साभरी ।
मिह मेह मणिथा चूँहरी निष बर डिमा हुप टूँथरी ॥७॥
महिवादु जुग्गा जोगड़ा फाँहुप पसुर अैबोगड़ा ।
मुहलैट हाउह मौगड़ा चपघासु जौभा टौगड़ा ॥८॥

अर्थः— स्वामी जी ने चेता कर कहा—अमृतत्त्व का उपभोग तो निश्चय ही विद्या द्वारा जानो। बिना विद्या के उसकी अतीव प्राप्ति नहीं सम्भव। विश्व एवं तदन्तर्गत समस्त द्रव्यों का उपभोग ही पार्थिव जीवन का लक्ष्य है। यह विद्या से प्राप्य है ॥१॥

फलाशा त्याग ही यथेच्छा उपभोग का अधिकार प्रदान करता है। यही त्याग विद्या का स्वरूप है। नाम रूप पर मर मिटने वाली वासना से जीव को पूर्ण रूप से मुक्त कर देना ही उस त्याग की महिमा है। विद्या विनय सम्पन्न प्राणी के हृदय में उस त्याग बृत्ति का अंकुर जमता है ॥२॥

जो भगवत मय होकर (शाण्डिल्य) विद्या के प्रभाव से इच्छा रहित हो जाता है। द्वन्द से परे हो जाता है। वही त्यागी विरागी है। पूर्व युगों में हुये हैं। अब भी हैं। आगे भी होंगे। इसमें सन्देह नहीं है ॥३॥

क्या ब्रह्म ऋषि और क्या राज ऋषि, इस सिद्धान्त पर चल कर ब्रह्म भूत हो गये हैं। वे काया को भी पवित्र करके तन्मय तदाकार हो चुके थे। उनकी सत्ता अब भी विराजती है ॥४॥

विरक्त पुरुष यदि गुणातीत नहीं हुआ तो क्या हुआ ? तब वह भगवत् मय भगवत स्वरूप कैसे हो सकेगा। और कैसे वह निकुन्ज विहारी को आकर्षित करके यह उपदेश दे सकेगा ॥५॥

सर्ग, नास्ति से अस्तित्त्व में आने को नहीं कहते प्रत्युत यह उस ब्रह्म की स्वतः अव तारणा है। अपने स्वरूप में उसको, सब भूतों में उसको, देखने से जो होता है उसीको सर्ग कहते हैं ॥६॥

ज्योति जगत में जाज्वल्यमान है। जो लख लेता है उसकी भेद बुद्धि नष्ट हो जाती है। वह उसको कभी भूल नहीं सकता, वह प्रत्येक देशकाल में अपने अस्तित्व का परि चय देता रहता है ॥७॥

योगी सुनते सुनते समाधिस्थ हो गया। कई दिनों तक उसी दशा में पड़ा रहा, जब वह जगा तो उसे काशी पुरी और कुछ ही भासने लगी। सचेत होकर निर्जन में गया ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टकं ब्र भां चुरणा जोणांषु पहटा पिजु ठस पहमी भिगुड़ा सीम जेराजित पुचरा समज्ञातोपी ॥

इस अष्टपदी को ज्ञानी भक्त मोह नाशन के हेतु एकान्त में अर्थ सहित बिचार किया करे तो अनुष्ठान की समाप्ति पर आत्मज्ञान प्राप्त हो ॥

अष्ट पदी ॥ ४१ ॥

विसहास कासी कांपिया मसजांसु निता इत इदा ।
झब झंफड़ा दरसन रुखा सौनासु संभट नाहुता ॥१॥

जारोपिणा हुत्थें लड़न मखऊट जोसिमटा गपन ।
पंथोफड़ा सीऊ समन महरूस बेंहुजा सीपसन ॥२॥

पड़ितं फुतं हुं रुं रमा धम पद फधा ते कुंमदा ।
बैसंसुरैता पं अपा पैसाठु सैउण संुथपा ॥३॥

व्यौहा बुहाफिल जौकिया मसनानु बैचित पौपिया ।
जिहुणा घिवारिन बलदिया मगहूह हउठा लाटिया ॥४॥

सिव साइवी मिट कौमरा आपुणा पहा निपक्षंभरा ।
जो इत कमांभू देहरा णपटेसु राहिब वैनरा ॥५॥

भियटिंगसन खुरसामुधी जफरेंहु अत्ता आसुधी ।
पटभेरु हामिण जाकुधी तघटी बटोझा माउधी ॥६॥

दिठुणा दरमड़ा दौहिथी मुकना मुजब्बा पौपिथी ।
सउसेंगड़ा सिव धंबिथी टइहा टिरापू संदिथी ॥७॥

जौहिमड़ा माकिम्मड़ा जैटीस औणा हिम्मड़ा ।
मकबेट हीफा पिम्मड़ा पहुभाणि सोगप तिम्मड़ा ॥८॥

अर्थः— काशी के प्रसिद्ध कर्म काण्डी वैदिक विसहास (विश्वनाथ) जी जो नित्य दर्शनार्थ प्रातः काल आते और जिनके लिये झरोखा दर्शन की व्यवस्था स्वयं स्वामी जी ने कृपा पूर्वक कर दी थी एक दिन सत्संग में आये ।।१।।

सौभाग्य से उस दिन प्रेमी लोग अभी आये हुये नहीं थे । एकान्त अवसर उन्हें प्राप्त हो गया । उन्होंने जो जिज्ञासा प्रकट की और स्वामी जी ने जिस प्रकार उनका समाधान किया उसे सबको स्मरण रखना चाहिये ।।२।।

पण्डित ने पूछा—मन्त्र शास्त्र, तन्त्र शास्त्र, धर्म शास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास पुराण, सब में श्रीराम नाम और तद् बीज की अपूर्व महिमा गाई गई है । भिन्न भिन्न मत रखते हुये भी इसी [एक राम नाम महिमा कथन] के कारण उनमें समदर्शिता आई है ।·३।।

मरनी, करनी, धरनी, भरनी, समस्त लौकिक व्यवहार में इसी की प्रतिष्ठा है । इष्ट कोई भी देवता हो, उसकी सिद्धि इसी राम नाम से होती है । यह प्रसिद्ध बात है । मानो सब देवता इसमें बास करते हैं ।।४।।

शिव जी कुटुम्ब सहित इसीको जपते हैं और आप भी इसीका अनुष्ठान करते हैं सो बतलाइये कि राम नाम है क्या ? इसको हम कैसे समझ सकेंगे ? जिससे प्रतीति उत्पन्न होती है ।।५।।

स्वामी जी ने मुस्कुरा कर कहा—आपका अन्वेषण, संकलन और प्रतिपादन सत्य है । परन्तु वह है क्या ? सो तो केवल योगी पुरुष निश्चय रूप से जान सकते हैं । राम नाम क्या नहीं है ? यह जिसने समझ लिया वही जानेगा कि वह है क्या ? ।६।

प्रतीति प्रसव करने वाली विवेक बुद्धि जड़ता से रहित और समता के सहित जब उदय होती है तब पात्रता प्राप्त होती है, तभी सन्त गुरू के प्रसाद से प्राणी महामंत्र के रहस्य को समझने लगता है ।।७।।

हृदय की थैली में वह हीरा धरा है । आँख की पुतली में दो—रूखा शीशा लगा हुआ है । इधर से देखिये तो प्रपंच और उधर देखिये तो सत पंच ।।८।।

।। अनुष्ठान विधि ।।

इयं चार्पणास्टके लास षुण भुगणि हाता भिरतु वासिभ जिपाटु गड़ा पिरं वाणु चहि सरधप जत कह ठीम ।

इस अष्टपदी को सोकर उठते ही पाठ करने से दिन भर मंगलप्रद है और राम नाम में विश्वास दृढ़ कराने का यन्त्र है ।।

अष्ट पदी ॥ ४२ ॥

भउखी भखीसी जाम्हिड़ा सैफुन ररंकारे शिड़ा ।
पहणा परीमा जैझिड़ा सहडेंगु डिउहा काम्हिड़ा ॥१॥

पम्मोद पिहुला पप्पटी पौराख पूरस दघ्वटी ।
मैंवासुणा कत्तु अन्नटी अडनोर उपनी सठ टटी ॥२॥

हिय भाहु आभा हौमभा मौमानु अनहद कौतुभा ।
तंडीव डाडिस औणुभा विकटाल कोपुह बौगुभा ॥३॥

मउजीव सीव पुरुष पणा पंभीणु पइटा संमणा ।
हौरिम हुवेदा टंटुणा डिपहीणु हौटिउ ठंतणा ॥४॥

डिसु आसु औ आणं विढ़ा जरसोतु जियणा हंमिढ़ा ।
महकतहु कौशावट सिढ़ा नैसषु सुडा सहजुण पिढ़ा ॥५॥

अमडूमड़ा जिफुरंटहा मकसूह मुड्डा चंटहा ।
नउठी निउण्ठी पंबहा रो साम साउह बंडहा ॥६॥

मवकिल्लुड़ा फिभु पंयुखा निसिवारू अरणा संुणखा ।
पाभीसु सैंटा सुह भखा अवसीउं जाणिट्ट भंमखा ॥७॥

सामस उदू अवणषुची सांघोटु सौविस हासची ।
पभरंगऊ आसिन कची रूभयास जैसभ पिहुअची ॥८॥

अर्थः- जाग्रत जीवन में, स्वप्न शयन में, आचार बिचार में जो प्रकृति के खेल होते हैं उसके मूल में जो सत्यता व्यापती है । वह राम नाम ही की है जो प्राण वायु में ररंकार ध्वनि में धुवाँधार संचरित होती है ॥१॥

उत्तम मीमांसक, उत्तम आश्रमी, उत्तम सद् गृहस्थ जिस किसी को भी किसी साधन से अर्न्तदृष्टि प्राप्त होती है वह रकार मकार की रमण क्रीड़ा को देख लेता है । और जगद् ब्रह्म और शब्द ब्रह्म के अभेदत्त्व को समझ जाता है ॥२॥

ओंकार का आदि, अनादि रूप, और उसका प्रत्यक्ष शृंगार सोऽहं का आधार, भी राम नाम ही है । ध्वन्यात्मक प्रकरण में, गुणातीत दशा में अविरल रूप से होने वाली अनाहत ध्वनि का सार राम नाम ही है ॥३॥

जीव और शिव, प्रकृति और पुरुषोत्तम को घट घट में प्रतिष्ठित करने वाली राम नाम ही की महिमा मयी सत्ता है । परमार्थं में कला कलाधर से अभिन्न समझा जाता है ॥४॥

सबसे अधिक इस तत्त्व के जानकार ईश्वर ही हैं जो सुषुप्ति के विभु हैं । जिसमें प्राप्त होकर जन साधारण को भी सुख और शान्ति का अनुभव होता है । जो जीवन जतन के लिये अत्यन्त आवश्यक है ॥५॥

जब तक वायु (प्राण वायु) संचरण में अखण्ड राम नाम की गूँजती हुई ध्वनि न सुनाई दे तब तक तो वैखरी वाणी से राम नाम की रटन अनिवार्य है ॥६॥

सबको सब प्रकार से कल्याण कारी परम पुनीत रकार मकार वह अनमोल रत्न है जिसे सन्त गुरू प्रसन्न होकर प्रदान करते हैं । तभी उसकी प्राप्ति होती है ॥७॥

विसहास (विश्वनाथ) विप्र की आँख के पटल खुल गये । उन्होंने सतगुरु से राम नाम की याँचना की और भिक्षा में वह रत्न देकर उन्होंने सन्तुष्ट किया ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणास्टकं तु विरण था छापण दाछु सण्ण फासु गिरतम चतुरे मकारूयां र्कारि छी सेम ॥

इस अष्टपदी को शून्य स्थान वा श्मशान में उच्च स्वर से पाठ करने से और तर्जनी से रेखा करते जाने से सत्गुरू के दर्शन होते है ॥

अष्ट पदी ॥ ४३ ॥

बंभाउणा सिकु जण्ठुणा आकंपुरा सा वण्ठुणा ।
गागा गुणाका अवठुणा जंगम जुटासी सवठुणा ॥१॥

सौरामणा औकामणा जिंकापुड़ा झुप जामणा ।
पैठाणु पासिव ठामणा हरटाण हवड़ा आमणा ॥२॥

चरूखानटा झिकटानटा तुअतैहुणा उमिहानटा ।
पिमुणाविका रिजुखानटा धिंकड खुमासी पानटा ॥३॥

नापित णुपापित ठाभलित गाफिट गुफाटित आमुहित ।
जगरूहुणा विहपा सुपित गुट्टा घुमंटर हाहुजित ॥४॥

जंगम हजामी हाजुमी पविटैषु पिहड़ा हुंहुमी ।
मांठामि मभठा लाकुमी खोभाथु घौधा धाधुमी ॥५॥

णंभुट सणं ताऊ सुमर ङिगो लुभं भइ जुस्मर ।
पंखे पदें थड़ भुज उसर घयिणा घिठानुज पाहुसर ॥६॥

हडभिणु जुटाविणु वत्सता ढीवर ढुवर कवि कुरमता ।
संठामनीषी परिभुता णहटाण रैवा झंझुता ॥७॥

अठवस कुणालिम जारिभट तकवाणि साणिम टरसि सठ ।
बुकसेन नापित मैरूमठ जंगम जूरम्भा जामु हठ ॥८॥

अर्थः— जंगम स्वामी विपिन विहार करते हुये जब काशी में आये तब जटाजूट का विसर्जन करने के लिये एक नाऊ से कहा। नाऊ भला मानुस था परन्तु चतुर। उसने सब मूड़कर चुटिया रख दी। उन्होंने उसे भी मूँड़ने का संकेत किया। तब तो नाऊ हाथ जोड़कर बोला ।।१।।

मैं गुरू को तुरूक बनाने का पाप नहीं कर सकता। यह अंश किसी दूसरे अविवेकी नाऊ से कटवा लीजियेगा। मुझे आशीर्वाद दीजिये। मैं जाता हूं। और जगह जज-मानी कमाना है। सन्यासी। इन्द्रिय-जित थे। सुनकर विगड़े नहीं। कहा किसी विवेकी पुरुष द्वारा निर्णय होने पर तुम जा सकते हो ।।२।।

आप ही को मैं विवेकी पुरुष मानता हूं। आप ही झट से निर्णय कर दीजिये कि मेरा सन्तोष हो जाय। और अकाज न हो। नाऊ के ऐसा कहने पर यती ने कहा चुटिया काटना संसार बन्धन से मुक्त होने का चिह्न है। तुरूक होने का नहीं। क्यों कि तुरूक भी चुटिया रखते हैं। शिर पर नहीं चिबुक पर ।।३।।

मेरा सन्तोष तो नहीं हुआ पर मैं मूड़े देता हूं। स्नान करके किसी महात्मा के पास चलिये जो आपकी बात समझता हो। मेरे जैसे मूर्ख को भी समझा सकता हो। मैं अपने काम काज की चिन्ता छोड़कर आपके साथ चलूँगा। यह कह कर नापित ने मूँड़ दिया ।।४।।

जगम स्वामी स्नान ध्यान से निबृत होकर उस नाऊ के साथ चले। दोनों स्वामी जी की सुधि पाकर आश्रम पर आये। मध्याह्न का समय था। भिक्षा करके सावधा-नता पूर्वक बैठे। दर्शन की प्रतीक्षा करते रहे। इतने में सत्संग का समय हो गया।५।

बहुत से सत्संगियों के बीच प्रश्न उठने पर और घोर विवाद बढ़ने पर सब पक्षी विपक्षी के हृदय में शान्ति का संचार करने के लिये स्वामी जी ने परदे के भीतर से शंख बजा दिया। जिससे मोहान्धकार से निकलकर लोग ज्ञान की भूमिका पर आ गये। और कहा ।।६।।

द्रष्टा या कवि के प्रज्ञान में शिखा किसी दशा में न कटती है न काटी जाती है। पर मनीषी यदि परिभू करके ब्रह्म लीन हो जाय और द्रष्टाभाव से अविभक्त हो जाय तो शिखा कटती और काटी जाती है। स्मृति कार को यही तात्पर्य है ।।७।।

आध्यात्मिक रहस्य का बोध दोनों को हो गया। वे सन्तुष्ट हो गये। सेन नाऊ तो स्वामी जी का शिष्य हो गया। उसे पूर्व ज्ञान के साथ साधु सेवा का ब्रत मिला और जंगम को हठ योग साधन ।।८।। अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके सीधू मीसू गवेम हात मीम जा संणु पंच छुत्रेरुण इवासु ।। इस अष्टपदी को प्रातः सायं पाठ से महा विषयी के हृदय में मुमुक्षता के अंकुर जमते हैं। और वह सन्मार्ग पर चलकर बन्धन मुक्त हो जाता है ।।

अष्ट पदी ॥ ४४ ॥

बिंवाणुसर साउसि पिनर जौगा पुगौगा हूमिहर ।
नासंटु पोपा प्युरिढर टमहारू ढिउणा खायिखर ॥१॥

पाउण भरेसा विल्लुसा अपुचुट उवैठा टिल्लुसा ।
तड़तम पुवारूप भिल्लुसा उन्नाभिना भुट रिल्लुसा ॥२॥

जड़तिस्सुणा आसीपुणा क्रेदार कट्टा धौधुणा ।
अडवाण ओणा पीहुणा द्रुपटासु जिउछा हीमुणा ॥३॥

जाडरण ठुर्रा ठीठ ठुह दिक्का किडैआ संजुपुह ।
आरभं पुभं पंजारूड्डुह धैणट उबट ओंटा जुहुह ॥४॥

कैणांबुदा हैभानुहा भैरो भुरोका डापुहा ।
तिहुता खिभाटंु जामुहा ऊसी उभी टुरमी उहा ॥५॥
तैलंक तिहुणासी खुजा अंटाटिला जिलाभाबुजा ।
आथे उपत्थे रामुजा गौतम गुपासिल पंटुजा ॥६॥
ऊसीनरी धैका कुरी विनटोभ जूणा सूमुरी ।
अवधेणु कुमटा आजुरी पैबाम पुहणार मंपुरी ॥७॥
जुह शूण शहदातुण मिपा आलीह दुल्ला सिलसिपा ।
फाइस्ट चुम्मू तंलिपा ठानूक टरदा भाचिपा ॥८॥

अर्थः—पिनर व्यापारी कुटुम्ब सहित नाव से यहाँ (काशी में) उतरा। उसकी कन्या एक पिंजड़े में सारिका लिये हुये थी वह पक्षी स्वामी जी का नाम रटा करती थी, इसीलिये वह वैश्य खोजता हुआ कुटुम्ब और पक्षी सहित आश्रम पर आया ॥१॥

मधुर स्वर से स्वामी जी का नाम कीर्तन सुनकर सब लोग मुग्ध हो गये। उस ध्वनि में विचित्र वेदना थी। जो करूणा उत्पन्न करती थी। और श्रोता के हृदय में क्षोभ उत्पन्न किये बिना नहीं रहती थी ॥२॥

सेठ ने कहा कि उसे काम रूप देश में वह सारिका एक बीहड़ वन में प्राप्त हुई थी और यही रटन लगा रही थी। विना प्रयास कन्या ने उसे पकड़ लिया था। केवल जाउर खाती है ॥३॥

आज्ञा हुई इसे बन्धन मुक्त करो। पिंजड़े के बाहर निकाल दो। आज्ञा का पालन तुरन्त किया गया। वह उड़ कर गुफा के चौखट पर बैठ गई। शंख ध्वनि हुई और वह सारिका एक अत्यन्त रूपवती युवती के रूप में परिर्वातत हो गई ॥४।

सबको आश्चर्य में डालती हुई वह रमणी स्तुति करने लगी। हे देव! हे पुरुषोत्तम! हे पातक हरण! हे पुण्य दर्शन! आप की जय हो! जो कृपा आज अभी ऊषी किन्नरी पर हुई है, वह किसी पर न हुई ॥५॥

क्षीण पुण्य, पतनोन्मुख- प्रियतम के विरह में माती खग योनि में जन्म लेने वाले गौतम की सारिका रूप धारण करके खोजती हुई काम रूप देश में मांत्रिक के मन्त्र के प्रभाव से क्षेत्र वद्ध होकर आकाश से बन में पतित हुई ॥६॥

ऊषी किन्नरी की रक्षा करने वाले और आपके शुभ नाम का उपदेश देने वाले और सेठ कन्या को आर्कषित करने वाले और इस चौखट तक पहुंचाने वाले एक परमात्मा ही हो सकते हैं। दर्शन दीजिये। शक्ति और भक्ति दीजिये ॥७॥

पट खुला। दर्शन पाते ही उसे दिव्य श क्त प्राप्त हो गई। उपदेश हुआ कि तेरा प्रियतम तुझे भुवः लोक ही में मिलेगा। वह गुण गान करती हुई प्रणाम कर अदृश्य हो गई। सेठ कन्या ताकती ही रह गई ॥८॥

॥ अनुष्ठान विधि ॥

इयं चार्पणास्टके महेषु सवेषु तेषु दिउति हाणे जेदरय पउजीतम उतसामुहे ॥

इस अष्टपदी के निशा–पाठ से समाधि च्युत, अनुष्ठाम भ्रष्ट, यज्ञ ध्वंसक, अघाशी और विफल मनोरथ को क्षीण शक्तियाँ पुनः प्राप्त हो जाती हैं।

अष्ट पदी ॥ ४५ ॥

बाईभु बमुका बैजई रसथेरू जोती मठरई ।
सोऽहं सिफाली झालई मसतूभ दानिअ करसई ॥१॥

माँढव प्रतीची डंघिरा अभरेपु ऊभड़ संथिरा ।
नहवीट सोसन नह पिरा रफलाम साहा पाटिरा ॥२॥

मकमादुरी तकमाहुरी जाभैट बिउकट साकुरी ।
तमखीह नुज्जा जाबुरी आपोस पहला दातुरी ॥३॥

तगफूर फैआ मम झुरा सहुमा प्रतीची ठपठुरा ।
जउबीट भिन्टा सनमुरा पानिय पसाछुप सापुरा ॥४॥

तणवीह जोगी जाणुड़ा महलूम राजुबहुं बुड़ा ।
सरधींग सडबा कंकुड़ा जटखोच खिम्भा हापुड़ा ॥५॥

धइभा विणमिलु खाथपा मसरूत रूता जाथपा ।
तिड़भिस्सु दइणा काथपा टकऊस टिउणा आथपा ॥६॥

रूपस्याइ झुम दातु तई णिभुसा फिहराढा सुगछई ।
तिउचांसु डाइभु साभई ठिगसेरु नैपाटी फई ॥७॥

अरभूह चोना ठंतुपह निकहीस दिउणा काकुवह ।
अपहेस अटवा संयुनह पम्हा पनोरी जाउसह ॥८॥

अर्थः– ज्योतिर्मठ के अधिपति ने जब सोऽहं की अखण्ड बृत्ति साधकर पाँच तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त किया। दूसरे ही क्षण में अविद्या का नाश होने वाला था और कैवल्य के अधिकारी हो ही गये थे कि देवराज की प्रेरणा से अघटित घटना घटी ॥१॥

प्रतीची नाम की देवाङ्गना ने स्वप्न में उन्हें आकर्षित और मोहित करके जगा दिया। और प्रगट हो गई। चर्म चक्षुओं से उसके सुन्दर रूप यौवन को देखकर वे अपने को सँभाल न सके। उसके सात द्यूत क्रीड़ा में धन धाम और तन हार गये।२।

सर्वस्व अपहरण करके उसने ईप्सित एवं अपेक्षित रति क्रीड़ा करके भक्तराज प्रह्लाद को गर्भ में धारण किया। और शिशु को जन्म देकर पुरइन युत कमल पत्र पर पधरा कर लहर (तारा) तालाब में तैरा दिया। देवराज की चिन्ता छूटी भक्त राज का काम हुआ ॥३॥

विद्यान्त (जुलाहा) दम्पति के आने और शिशु को उठा ले जाने तक प्रतीक्षी अलक्षित रूप से उस शिशु की रक्षा करती रही। यह बृत्तान्त सं० १४५५ की जेठी पूर्णिमा का है ॥४॥

योग सिद्धि की नाश करने वाली अविद्या पर क्रुद्ध होकर वह भ्रष्ट योगी स्वामी जी की शरण में आया। उसके पीछे लगी उसकी प्रियतमा भी अलखित गति से उप–स्थित हुई और उपर्युक्त बृत्तान्त कही ॥५॥

स्वामी जी ने योगी से कहा—जिसके पास जो वस्तु होती है, उसीसे वह ले ली जाती है। ज्ञानी इसकी चिन्ता नहीं करते। क्योंकि नियन्ता तो सर्व साक्षी परमात्मा ही है। जो कभी किसी का अहित नहीं करता ॥६॥

ब्रह्माकार वृत्ति में जीव का अस्तित्त्व बना रहता है और शब्द आदिक का ज्ञान लुप्त नहीं हो जाता। भेद बुद्धि भी बनी रहती है। तब पथ भ्रष्ट हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है ॥७॥

इतना कहकर स्वामी जी ने शंख बजा दिया जिसके प्रभाव से योगी को समाधि लग गई। जो फिर कभी टूटी ही नहीं। वहीं भुँई धरा खोदकर उन्हें प्रतिष्ठित कर दिया गया ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकं दीयणं खास जामहे तमे ज पुदीणु पधासिणा
वचयथां मुजहे तहिखं सं खं देह तासा ॥

इस अष्टपदी के विधिवत अनुष्ठान से अर्चा, महर्चा, पाठ परिमार्जन और आस्थान से बन्ध्या को पुत्र की प्राप्ति होती है।

अष्ट पदी ॥ ४६ ॥

नीरू सनीमा साहरा अपहान माजू काहरा ।
पटखान जमई जाहरा मरकाव मोमिन माहरा ॥१॥

मोमिन सुलैहा बेउदी लालैट लोकट सेंउदी ।
पावैण पंचा केउदी झिपड़ाणु ठाचा जेउदी ॥२॥

सरसिम जनखदा मोमिना किउला किनासिक छोहिना ।
सैंधवतु वीरानन्दना चाठैखु थाहा बन्दना ॥३॥

चमुटाणु ढंढा फाणुसा जपडापु हरणा टाणुसा ।
मीघीछु टहणा भाणुसा कब्बीर मोमिन जाणुसा ॥४॥

ठडुआड़ णागड़ णोंगड़ा बिहपेस हेसी होंगड़ा ।
निपठान दहदा दोंगड़ा हासीन हुमुटा टोंगड़ा ॥५॥

करमादई फरमादई टउपासुणा उकतादई ।
अवणुस हुदैसट भादई जुनुका बिनौका सादई ॥६॥

झफणीर तीणं आहुरे ठउड़े सुधा मूची फुरे ।
जंठासि सिख सूमामुरे बूटी कबीरा धासुरे ॥७॥

तुह हाणु जोंणु जीमकू करमादई चूँची चकू ।
फौहाट भिउठा नीनकू गोगब गबबसा पीसकू ॥८॥

अर्थः– नीरू और नीमा को सहवास के प्रथम ही पुत्र की प्राप्ति हुई। निन्दा की परवा न करके, सत्य, दया धर्म को मुख्य मानकर वे दिव्य शिशु को उठा लाये। परन्तु उनके स्पर्श करने से शिशु की दिव्य कान्ति मलिन हो गई। यह देखकर वे मोमिन के पास गये ॥१॥

मोमिन ने कहा "तुम्हारे धन्य भाग्य जो ऐसा पुत्र मिला यह विधवा पुत्र नहीं हो सकता। क्योंकि गम्भीर तालाब के मध्य पद्म पत्र पर विधवा शिशु को नहीं पौढ़ा सकती। वह परीज़ाद है। उसे मुझे जल्दी दिखाओ।" वे शिशु को लाये और दिखाये ॥२॥

मोमिन ने शिशु की ठुड्डी पकड़ कर स्वाभाविक रीति से पूछा–किसका बेटा है? कह! चैतन्य शिशु ने उत्तर दिया। मैं वीरानन्द के औरस और दिव्या के जठर से जन्मा शिशु हूं ॥३॥

शिशु के मुख से स्पष्ट उत्तर सुनकर वे कांप उठे। फिर धैर्य धारण करने पर उसके दिव्य जन्म कर्म पर उनका दृढ़ विश्वास हो गया। मोमिन ने पिता के नामा–नुसार शरयी भाषा की शब्दावली छानबीन कर कबीर नाम रखा ॥४॥

यह बात छिपी नहीं रही। तुरन्त नगर भर में यह कथा प्रचलित हो गई। शिशु के दर्शन के लिये भीड़ लग गई। झिंगुली, किंकिणी, नूपुर लोगों ने श्रद्धा पूर्वक अर्पण किये। बड़ी जमघट और चहल पहल आधी रात तक रही ॥५॥

पड़ोस में रहने वाली कर्मा देबी ब्राह्मणी, जिसके जठर से जन्मी हुई कन्या एक मास पूर्व में गत हो चुकी थी। दूध पिलाने को तैयार हुई। एक वैश्य ने व्याई हुई गाय भेज दी पर शिशु ने उभय विधि दुग्ध में से किसी को ग्रहण नहीं किया ॥६॥

तीसरे दिन शिशु की रक्षा और माता पिता की चिन्ता दूर करने के लिये स्वामी जी ने गुप्त रूप से निज प्रिय शिष्य (श्री अनन्ता नन्द जी) द्वारा सुधा मुवी नाम की जड़ी भेजी जिसे शिशु मुख में डालकर चूसने लगा। और जो पीछे कबीर बूटी नाम से प्रसिद्ध हुई ॥७॥

उससे कान्ति की मलिनता मिट गई। शिशु प्रसन्न मुख दिखने लगा और कर्मा देबी का स्तन पान करने लगा। और सीपी से गो दुग्ध भी पान करने लगा ॥८॥
अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टके हाविद पेणु ऊज मसि दिऊं पाघमे सुं विचातु हमे च भउतां जिमणात मेरणा सौजपातवे ॥ इस अष्टपदी के त्रय मासिक अनुष्ठान से देह जनित कलंक, मन से उत्पन्न कलंक एवं भौतिक अर्थात चौथ चन्दा आदि कारणों से उत्पन्न कलंक मिट जाते हैं।

अष्ट पदी ॥ ४७ ॥

रमतेतु तौरिन तानधी बहुबेष भिंगा बानधी ।
मइठाभ परवणा पानधी जवरीष णाहिज मानधी ॥१॥

चख चौंधड़ी अखपोधड़ी उमता हुतानुत जोधड़ी ।
मिहटा मुटाटित चोधड़ी जखटा टिठाणुग बोधड़ी ॥२॥

पउगाभिमाठित जंबिक्रुर चटका चखन चारंटिखुर ।
अपटोप जैताहिण भुसुर मकलाव सावसि भाहुभुर ॥३॥

अकनू उनू आबुद हरी तैफारू णिण सारूण परी ।
यहभा उभारुस महथरी नेजा न जाणिह कैठरी ॥४॥

टिपुहा धुणासिह झिरउजा युवणा सुरन्टा थिरलुजा ।
पवफाम भामा नानुजा अखई खुईसा हदुजा ॥५॥

दिहुकण धिकण तंनापुटे लहपौर पिहणा जाघुटे ।
अटमट्ट कोकिण घाटुटे ठहभाखु जहता सानुटे ॥६॥

विकुटा भुटा सहणा सिरौ मिहवाण जेहा बिनतिरौ ।
नोखानुखा अखरा मिरौ नेहत्त रूणा टिसधिरौ ॥७॥

जमुहा कुपासिव वाभिरं चिलवाल बौहा आसिरं ।
नतुपा सुपा झिनुका गिरं चन्नं चिनं मजिरं हिरं ॥८॥

अर्थः– एक रमते राम भटकते हुये आश्रम पर आये। उनकी भीतर की आखें खुलती ही नहीं थीं, उसमें माड़ा पड़ गया था। और अकथनीय पीड़ा थी। वह योगी बहुत विकल था। बड़े बड़े भिषगों ने असाध्य बतला दिया था ॥१॥

किसी जानकार ने उसे आश्रम का मार्ग बता दिया। और विश्वास दिला दिया था कि वहाँ जाने से तुम्हारी आँखें अच्छी हो जाएंगी। इसी आशा से वह सवेरे ही आश्रम पर आकर बैठ गया था ॥२॥

बैठे बैठे सन्ध्या हो गई। आग्रह करने पर भी उसने कुछ नहीं खाया पिया, और न प्रगट रूप से अपना दुखड़ा ही वह सुनाया। अन्त में उसने यही कहा—"देव दया कीजिये" ॥३॥

तत्क्षण पर्दा हटा। दर्शन से कृतार्थ होकर सूर्यमुखी की तरह जगद्गुरू रूप भास्कर की ओर टकटकी बाँध कर देखने लगा। स्वामी जी ने कहा–"क्या चाहते हो सो कहो ॥४॥

उसने कहा आपने कृपा करके दर्शन दिया। ये चर्म चक्षु कृतार्थ हुये। परन्तु वह नेत्र कहाँ जो आपके सुन्दर सहज स्वरूप को देख सकें। मैं उन्हीं दिव्य चक्षुओं को चाहता हूं। जिससे एक बार अच्छी तरह आपका दर्शन तो करूँ ॥५॥

चतुर की बात चतुर ही समझते हैं। स्वामी जी उसके अभिप्राय को समझ कर बोले "वाम चक्षु से देखने से दक्षिण नेत्र में फूली पड़ जाती है। और दाहिनी आँख से ताकने से बाँई आँख में मोतिया बिन्द और दोनों नेत्रों से सम्यक् प्रकार देखने से कोई विकार उत्पन्न नहीं होता ॥६॥

वीत राग वाम चक्षु, सम्यक् ज्ञान दक्षिण नेत्र से परि साधित है। जो स्वप्न सुषुप्ति में भी अलोल रहने का मुख्य हेतु है। तब (तो) तुरीया में तिल अन्तर्यामी को धारण करता है। और तिमिर का नाश होता है ॥७॥

इस दिव्य रसायन का उपयोग करो। आँखे अच्छीं हो जाँयगी। यह कहकर स्वामी जी ने उस पर जल के छींटे मारे। उसकी आँखे खुल गई। विकार रहित हो गई। वह दिव्य दर्शन करके सफल मनोरथ चला गया ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकं वेहिमे गज भुह पेषुण भेग जालीता मुछ जह मु चाजु।

इस अष्टपदी को पुनीत पत्र पर रक्त चन्दन से लिखकर पवित्र तीर्थ पर प्रातः काल धोकर आँखें धोने से और कुछ काल तक धोते रहने से. पाठ करते रहने से सब प्रकार के चक्षु रोग दूर होते हैं ॥

अष्ट पदी ॥ ४८ ॥

झीटा झुटा टिण काहड़ा मइटा घुटा हुब माहड़ा ।
नाभोड़ गुड्डा नाहड़ा नाखूद चंढा थाहड़ा ॥१॥

तिगापुझाटी बाटिणी आवाटि औटी पाटिणी ।
धौसाटि पौठा साटिणी घोघा घुघाबर आटिणी ॥२॥

संभाविणी छा भुपट कर कभरूण जोती झुटिलवर ।
अमरू हरू हिपु संभिधर नैखासिता झिण ठर विठर ।३।

उडभेड़ उमटा ताहुरे चभिटा पिटा द्रकमाहुरें ।
हइटा झिटा हालाचुरे जिउथा उथा चिउटामुरें ॥४॥

भाउं भिराउन जोषिता जं हुं पुढा उस टोषिता ।
कौदूकि फाउण बोझिता गमटांग टुषणा ओझिता ॥५॥

अहुआ जुहा आवैटड़े बन्हुआ खिरोढर सैंटड़े ।
चिटुकुह चुपुरटा नैंटड़े टंघा उपा इष वैंटड़े ॥६॥

जवई जुई णघई थई हे नम्भ नूनू नेदई ।
औटाल ओही किंबई डीहू हिबारू माहुई ॥७॥

ऐहोझिटा अद्धागना टेटंकिता नन छानना ।
झुहि गुहि उपंलामानना सिव सिव सिला डट टाहना ॥८॥

अर्थः– काहड़ा के ज्ञानी, गुह्य रहस्यों के ज्ञाता, झीटा जी स्वामी जी का नाम सुन कर दर्शनार्थ आये। परन्तु उनको दर्शन नहीं हुये। वे लौट गये। फिर नयी अभि–लाषा से आये ॥१॥

तीन दिनों तक रगड़ करने पर एक दिन उन्हें अनायास दर्शन प्राप्त हो गया। वे कृतार्थ हुये। और योग मुद्रा में प्राप्त होकर न जाने किन किन लोकों में घूमते रहे। जब समाधि भंग हुई और सचेत होकर वे नेत्र खोले तो फिर वही दिव्य दर्शन ॥२॥

वे अपने मनोविकारों के अन्तर्गत में विकसित होने के कारण बहुत संकुचित और लज्जित होकर बोले-"प्रभो दया करके मेरी रक्षा कीजिये। नहीं तो रसातल को पहुंच जाऊँगा ॥३॥

स्वामी जी ने आश्वासन देते हुये कहा-झीटा जी घबराओ मत। आपने पुस्तक ज्ञान और लौकिक ज्ञान का सम्पादन किया है। परन्तु वह मत्थे में है, हत्थे में नहीं आया।४

भाव में भटकते फिरे। यदि अपनी स्त्री से ही पूछ लेते तो ठीक मार्ग में आगये होते। क्या उसने आप से कहा नहीं था कि घर और बन के बीच में जो घाटी है उसमें उतरना भया वह है ॥५॥

वह ज्ञानी पण्डित चकित और विस्मित होकर तकने लगा। उसको ज्ञात हो गया कि स्वामी जी हमारी गुप्त और प्रगट सभी बातें जान गये। उसने सँभल कर कहा "अन्तर्यामिन ! ठीक है। उसने कहा था पर उस समय मैंने उसे बिना समझे बूझे टाल दिया था ॥६॥

आज हे नाथ ! आप के श्री मुख से सुनकर उसके तात्पर्य को समझ रहा हूं। मुझ पर दया करके उपदेश दीजिये कि मैं तृष्णा ताप से बच जाऊँ। और आप के गुण गाता रहूं ॥७॥

स्वामी जी ने कहा–हे झीटा जी ! जब दर्शन नहीं हुये और घर लौट गये तब क्यों नहीं अपनी पत्नी को साथ लाये। जाओ उसको लेकर आओ। तब उसके समक्ष ही उपदेश करूँगा। आज्ञा शिरोधार्य कर पण्डित चला गया।८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टके ले स माहुता जलि भुचंगि णु थ हा सिटामे चक ताणा सपधा णु दुरा।

इस अष्टपदी से त्रैरात्रिक जपानुष्ठान से साधक को साधना से अपूर्व सहायता मिलती है। अविद्या माया से भी पिण्ड छूटता है।

✖ अष्ट पदी ॥ ४६ ॥ ✖

झीटा चुपन्ना पादफिर फीजात रासुख दापुनिर ।
कीजा हिजाटिर गाचभिर रैसा मुहैसा मागुमिर ॥१॥

चाभीठ अउराही झसा उम्मी कलंदा उस पसा ।
डाली मुरौकण भर हसा मापीटु टैषा रस भसा ॥२॥

धिक्कण धुआ पटरस कहस निषुताजरा सीघी बहस ।
चौचोप कूरणणी अहस सैंतीप सिहुआणिप जहस ॥३॥

यासिष जिहांसी डाबरू मैंचूँ पबग्गा काबरु ।
जोखी झुपैता भावरू अस्तूण तुहिला जावरू ॥४॥

टिउसुण जुटाहल खेतड़े दिट्ठं दिवाणा घेतड़े ।
मइफुर चुपन्ना बेतड़े नहचुण दुपैघा घेतड़े ॥५॥

हामिष गमोहे जोटिमे पउषाप जापप सोटिमे ।
नुटकार गोभिल ओटिमे कुजपुह दनाहन गोटिमे ॥६॥

झटहा सईदह काउरी पचघा पुरैआ टाउरी ।
दिकसा उजरटा छाउरी जंटा झिकौका माउरी ॥७॥

नौन्हें निघुंटा आखिमा आहे उबाहे जाटिमा ।
पंम्हे गिलाउस फारिमा हैं हम्ब विद्या पासिमा ॥८॥

अर्थः— झीटा पण्डित अपनी पत्नी चुपन्ना को साथ लेकर दूसरे ही दिन आये । सन्ध्या का समय था । दैनिक सत्संग समाप्त हो चुका था । स्वामी जी सन्ध्या पूजन में तत्पर नित्य नियम कर रहे थे ॥१॥

सन्ध्या कृत्य से निबृत्त होने पर पट खुला । पण्डित दम्पति दर्शन पाकर कृतार्थ हुये । पण्डित पत्नी ने चढ़ावे चढ़ाये और आरती उतार चरणोदक के लिये प्रार्थना की । चरणामृत पान करके वह अमरत्व को प्राप्त हो गई ॥२॥

उससे दो प्रश्न पूछे गये । घर आँगन और घर वन में क्या भेद है ? और वह कौन लोक है जहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं । प्रथम प्रश्न के उत्तर में उसने अपने नेत्र से काजल पोंछ कर रख दिया । और द्वितीय प्रश्न के उत्तर में उसने खुली हथेली चमका दी ॥३॥

उस संकेत को कोई भी न समझ सका । अकेले स्वामी जी ने उसके अभिप्रायको जान कर उसकी परीक्षा लेने के लिये शंख बजा दिया । उसे सुनते ही वह बावली होकर खड़ी हो गई । और प्रार्थना करने लगी ॥४॥

चुपन्ना को शरण में लीजिये । भेद मत खोलिये । हृदॅय में बसने वाले को बताना क्या और हृदॅय से अलग रहने वाले को रिझाना कैसा ? मति गति प्रेरिका आपकी अद्भुत शक्ति मुझे नचा डालती है । दयामय ! मेरी रक्षा कीजिये ॥५॥

इस प्रार्थना के भाव को उसके पति ने कुछ समझा तो नहीं परन्तु उसके साथ हाथ जोड़े खड़ा रहा । पाण्डित्य का गुमान जाता रहा और विवेकी पुरुषों की तरह परखता रहा कि आगे क्या होता है ॥६॥

स्वामी जी ने कहा जो मेरी शरण पुकारता है, उसे अंगीकार अवश्य करता हूं । पर तूने एक बारगी तीन रूप धारण करके जो विलासिता फैलाई है उससे ज्ञानी ध्यानी निर्वागी सुपथ से विचलित हुये बिना कैसे रह सकते हैं । जा आगे से ऐसा मत करना ॥७॥

वह चुपन्ना अविद्या थी । उसी क्षण तिरोधान को प्राप्त हुई । ज्ञानी पण्डित तिमिराच्छन्न मण्डल के बाहर हुआ और अपने स्वरूप में स्थित होकर गुरुवर्य को दण्डवत प्रणाम करके चला गया ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं हि उणीष तीज जो पहे गमे सा उजे भूणासि मति सो गूण सत उपा जोटवीण ॥ इस अष्टपदी को तीनों रात्रियों में से किसी में जगा लेने से साधक विद्या माया को पहचानने लगता है वह दूर हटती जाती है । और अन्त में अदृश्य हो जाती है ।

अष्ट पदी ॥ ५० ॥

झुरिया भिनासी बैरूणा पिभट्टाभ कासी कैरूणा ।
जिपहाटु रंपा रैरूणा खंजो तिरंबक हैरूणा ॥१॥

तौजी उनाधिनु घापिना महजी घुणासिर आकिना ।
जंबी तुबी नाहं भिना लौटीम जाभुट रंमिना ॥२॥

अलऊ भिरंडा जामुती अलहन गिमौसा पैकुती ।
दिसहाणु गैंडव सिहुती चनिघा डिवन्नक डिपुती ॥३॥

दिकता डुपैटा जैमटर उणमाणि सासी मैगुहर ।
ठुरमी विसाखी नौमिफर चिभुआणु जैटा रीभुनर ॥४॥

हिपु निपु जिराकुप सन्नगा ढिपुतांसु डैणाकी फगा ।
गोउरी रमा भारति णगा छिकुआर संडासी अगा ॥५॥

सीही सिरंता जखनुते आडार भिउड़ा हीभुते ।
करूटार किट्टा फंफुते हउड़ा हिड़ाठी सामुते ॥६॥

अधरं पिला रिचि कर्षिणू डिठुपाघिपा नाउम्मिणू ।
ठुणभाद वैढा बज्जिणू पाझाणु सामी बज्जिणू ॥७॥

थाहूत घौवर झरवटी पहटा पिटा गुरू घर सटी ।
चम्मा चुभासी हण हटी छंगा सुखानँद झरमटी ॥८॥

अर्थः—काशी के त्र्यंम्बक शास्त्री की कन्या सन्तान हीन होने के कारण अपनी सासु से तिरस्कृत होकर मैंके आई और पुत्र की कामना से प्रेरित होकर उसने शिवाराधन तपस्या पूर्वक किया और विधि के कुअंक के मिटाने वाले को रिझा लिया ॥१॥

स्वप्न में ईश के दर्शन हुये। भगवान् ने कहा-"तू अपूर्व निष्ठा और तप से दिव्यत्व को प्राप्त हो कर अजन्मा को भी जन्माने के योग्य बन गई। मुझे प्रसन्न जान कर जो कुछ माँगना हो माँग ॥२॥

जाम्बवती ने कहा—"मैं आप ही को चाहती हूं पुत्र रूप से। भगवान ने कहा तू रेवा में तीन बार स्नान करके बालुका सेवन करना, मेरी ज्योति तेरे गर्भ में प्रतिष्ठित होगी ॥३॥

उसने वैसा ही किया और ज्योति गर्भ में जगमगा गई। वैशाख सुदी ९ शुक्रवार को एक ऐसा शिशु उसके जठर से उत्पन्न हुआ जिसके ललाट में अर्द्ध चन्द्राकार चिह्न था ॥४॥

वह शिशु युवा होने पर गंगा में अपना मुँह देख कर विरक्त हो गया। और रमा भारती सन्यासी से योग साधना प्राप्त करके समाधि सुख भोगी हुआ ॥५॥

सिद्धि बल के गर्व से सिद्धों के साथ यहाँ आकर नीची बाग में आसन जमाया। उपवन विना ऋतु के कुसुमित हो गये। चमत्कार देख के जनता की भीड़ लगने लगी ॥६॥

एक पुष्प पर बैठकर प्राचीन ऋषि ऋचीक ने उससे कहा—',ऐ सिद्धियों के घमंड में भूल हुये तुझे मालूम नहीं कि तू चार दिन में मृत्यु को प्राप्त होगा। जा अपने गुरू से पूछ और उसे आगे कर स्वामी जी (स्वामी रामानन्द जी) की शरण में जा ॥७॥

सुनकर सचेत हो वह अपने गुरू के पास गया। भावी का निश्चय कर दोनों स्वामी जी की शरण आये। शरणागत वत्सल ने उन्हें शिष्य करके सुखानन्द नाम रखा और आयु प्रदान किया ॥८॥

अनुष्ठान विधि—

इयं चार्पणास्टके माकुजेउ ताकिणि धिपिणि सुजिपइथु गमिहा चा भुणवेखं।

इस अष्टपदी को महा शिवरात्रि में जगाना चाहिये। शिव दर्शन के लिए। मुद्रा पार्वती की ॥

अष्ट पदी ॥ ५१ ॥

गजसीह नोकता कासिपा मकमूस जोठा हाझिपा ।
सिडणीष जौभा नाहिपा रपुरेस खुजहा पातिपा ॥१॥

मउहार झुटना मोहियो स्वामी सपीतो सोहियो ।
ढिपना हरीसी देवियो तण छाउरा संभेवियो ॥२॥

चभरून जुध्या ठाउधिन तुघलक खुजूना मउरूहिन ।
पमना फम्हा वैसाखुढिन पूसा हरीसी छाउरिन ॥३॥

टाबह बहाढाँ पित्त हुम ननकीर डेउहा रिचचनुस ।
अवसींसु वैणा पाटुखुस जंसाउ हविढा ढांतुरूस ॥४॥

रोगाणु रहुता नाजनी औपाण पाछित टाभनी ।
जंथू झुहँदा आसनी णिपखोल जूसा हातनी ॥५॥

जितुहाण कामुह कसनुगज पंछोर विउणा पाद रअ ।
खंभीठु झइरा पहपयज परछो भिऊणा संतुमज ॥६॥

डिमखासु हिम खाजु भिदा कुपराह छैणा सिख हिदा ।
घर त्रिस तेउर टांछिदा सरयू सरी कभरू चिदा ॥७॥

गज गूथ गहसर गंविणत हुप्पार नोतें रंविसत ।
सामी सकारे सरिछिनत जय राम टुघणा रंभिरत ॥८॥

अर्थः– गर्जसिंह नाम का सूर्यवंशी एक बार काशी जी में आया। वह मलेच्छ स्पर्श से धर्म भ्रष्ट हो गया था। ग्लानि से ग्रस्त प्रायश्चित्त के लिये विकल वह सब पण्डितों के पास गया। भ्रष्टता दूर करके पवित्र संस्कार करने के लिये बड़ी प्रार्थना की परन्तु अधिक काल बीत जाने के कारण किसी ने स्वीकार नहीं किया ॥१॥

निराश होकर वह अन्त में स्वामी जी के समीप आया, और उसके भाग्य से स्वामी जी ने उसे सान्त्वना दी और बड़े करूणार्द्र चित्त से उसका करूणापूर्ण क्रन्दन सुना। उसने अपना परिचय देते हुये कहा कि मैं हरिसिंह देव का भतीजा हूं ॥२॥

हरि सिंह बैशाख शु० १० शनिवार सं० १३८१ को जूना खाँ तुगलक के भय से तराई में भगवत भजन के मिस भाग गये। तब से अयोध्या राज सिंहासन पर कोई नहीं बैठा। राजा के बिना प्रजा की जो दुर्दशा होती है वही हुई ॥३॥

उसके एक ही वर्ष बाद छल पूर्वक खङ्गताने हुये तम्बू में अपने पिता से मिलते हुए तम्बू गिरा कर अपने पिता का घात करने वाले ने बीसों हजार प्राणियों को बड़ी क्रूरता के साथ धर्म भ्रष्ट किया। तबसे अब तक ५० वर्ष के भीतर धर्म भ्रष्टों की बृद्धि होती गई ॥४॥

ऐसा कोई रोग नहीं जिसकी दवा न हो ऐसा कोई पाप नहीं जिसका प्रायश्चित न हो। परन्तु ऊँची पगड़ी बाँधने वाले हमारे पण्डित बहुत दिन बीत जाने का बहाना करके हम धर्म भ्रष्टों की भ्रष्टता दूर करने और वैदिक धर्म का अधिकारी बनाने से इन्कार कर रहे हैं ॥५॥

हे दीनदयाल ! हम अवध वासियों का उद्धार अपने चरण रज से कीजिये। हम आपकी शरण में हैं। यह दुःख की कथा सुनकर कोमल चित्त स्वामी जी द्रवीभूत हुये और शोच मोचन वाणी से गज के प्रति बोले ॥६॥

हे वत्स ! रो मत। धीरज धर और घर जा। सब धर्म भ्रष्टों की मुरझाई हुई आशा लता को इस सम्वाद रूपी जल से सींच कर हरा भरा कर। आज के तीसवें दिन प्रातः काल श्री सरयू तट पर मैं आऊँगा। और सबका एक ही साथ उद्धार करूँगा ॥७॥ गर्जसिंह घर गया। सबको सुसम्वाद सुनाया। उस दिन सब धर्म भ्रष्ट सार (सरयू) तट पर एकत्र हुये। और स्वामी जी भी ठीक समय पर पहुंचकर जय राम मन्त्र फूँक कर शंख बजाये। स्नान करते ही सब दिव्य संस्कार से भूषित हो कर बाह्याभ्यन्तर शुद्ध हो गये ॥८॥ अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकं वेहि जमीतुं हुसा मेदमी चुहां फेजाल पासत सूजा ॥ इस अष्टपदी को पाठ करते हुए मार्जन करने से म्लेच्छ संसर्ग दोष दूर हो जाता है बाह्याभ्यन्तर शुद्धि होती है ॥

अष्टपदी ॥ ५२ ॥

संकानुमा हित दूहदू झंपा णिलाहत चूनचू ।
जेषां जुनौका टूबटू तौजीम जाबिद झूसझू ॥१॥

डैहां डुहासिल झउमशा पीठा मजोटा सौनसा ।
तिक्खा मिवासी सामगा झंपाणु जउबा ठामगा ॥२॥

तुवनो उनी उपहा बरन नैघीदु अरिका घप्परन ।
जेंतिग जिउट्टा उस्सरन अपिधा पुधा फौमी हरन ॥३॥

भत बेल पफना सापुना हीपाणु हबसी नाजुना ।
डेवटी दुबहटी माहुना लपगौर इस्सा आबुना ॥४॥

जड हैवरट थग थुस मिसी नउखी बुखी मउषी मिसी ।
चट वारने करहम सिसी दकपा दुहैपा अररिसी ॥५॥

पैखम पियाणं खेकसी नव सिह जुहाउन भेकसी ।
तरहुम तिणाहुम जेकसी मौका पघासी नेकसी ॥६॥

टुरियां जुआं नारायणं मुसुहा धिनाधिन भायणं ।
नारद नवैसु गायणं मकटी पिरैडा सायणं ॥७॥

ताभोर दिउला हैखनी मंत्राशु कीना फैजनी ।
स्वर सारानन्दा नामनी उतरां सुनैटी जामनी ॥८॥

अर्थः– एक प्रसिद्ध गायक आया जिसका कण्ठ कोकिला की तरह, मुख चन्द्रमा की तरह, नाक शुक की तरह, बड़ा सुन्दर था। उसके रूप और गुण पर मोहित होने वाले बहुत लोग उसके पीछे पीछे आकर्षित होकर आये थे। उसके हाथ में बीणा बहुत शोभायमान थी ॥१॥

सन्ध्या का समय था। आते ही उसने पाँच दीपक बत्ती तेल से सज्जित चौखट पर रख दिया और गाना आरम्भ कर दिया। गाना बड़ा आकर्षक था। घाट बाट के लोग इकट्ठे हो गये। सम पर पहुंचते ही पाँचो दीपक आप से आप जल गये। दर्शक चकित हो गये ॥२॥

अपनी कला में निपुण वह गायक वीणा रखकर विश्राम करने लगा कि भीतर से धीरे धीरे शंख की ध्वनि होने लगी और क्रमशः उच्च स्वर से ध्वनि गूँजने लगी। गायक की हृदय तन्त्री से प्रेरित होकर अनाहत ध्वनि होने लगी। जिसके आनन्द में वह डूब गया ॥३॥

जब शंख ध्वनि बन्द हुई तब वह एक बारगी सचेत होकर कहने लगा 'नाथ! एक बार फिर शंख बजाइये। नहीं तो यह सेवक मर जायेगा। इस पर कुछ ध्यान नहीं दिया गया। गवैया प्रिय ध्वनि के वियोग से कातर हो छटपटाने लगा ॥४॥

मूर्च्छा आगई। और वह ऐसे देश में पहुंचा जहाँ न तारे न चन्द्रमा पर प्रकाश मान। मन्त्रित जल सिंचन से उसकी मूर्च्छा भंग हुई। परदा खुला था, उसे तुरत स्वामी जी के दर्शन हुये ॥५॥

उसको अपने पूर्व रूप का बोध हो गया। उसने कहा "पंचम का ब्राह्मण, बचपन से ही स्वतः गान की ओर प्रबृत्त, निज जन्म दिन वैशाख शुदी ९ को विक्षिप्त दशा को प्राप्त हो जाया करता था। माता पिता हीन होने के कारण विवाह भी नहीं हुआ। सब तरह से आर्त जान शरण में लीजिये ॥६॥

नारायण नाम के एक महा पुरुष ने मुझे श्री चरणों में उपदेश के लिये भेजा है। मेरा नाम तो भायण है पर वे मुझे नारद कहा करते और वर्षगाँठ पर दर्शन देते सो कहिये वे कौन हैं, क्यों मुझ पर अहैतुकी कृपा करते हैं ॥७॥ आज्ञा हुई ये बातें तू स्वयं जान जायेगा और उस महा पुरुष को भी चीन्ह जायेगा। अनन्तर मन्त्रोपदेश हुआ और स्वरसारानन्द उनका नाम पड़ा–वे स्वामी जी के शिष्यों में बड़े तेजस्वी सिद्ध पुरुष हुये ॥८॥ अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टके खेदके झपे हतुं गम चिधा पेणु गम दुरितां विहोसभणेत पेह चै छँ णं ॥ इस अष्टपदी को पाठ करने से कण्ठ दोष दूर होता है। राग रागिनी का भेद विदित होता है। गान वाद्य सीखने के पहिले पाठ करने से सिद्धि होती है ॥

अष्ट पटी ॥ ५३ ॥

दक्किण दुरम्भा आमती आचाइणा वेदान्तपी ।
पौलंब फाहिश आरती तग्गा सती मंथावती ॥१॥

जउसी जुषीतां घुरणिती पगहा उवाणिक सामिती ।
मभिरक भुकुन्टा पंछिती डाकुस जिवाणं पाहिती ॥२॥

हविआ प्रपंचा रचचती पकिताषु सत त्यक सउवती ।
होसीम सुर्दा जणहती मिकुडा जुहैहा दाषती ॥३॥

तवतो सरीरस लच्चणा ऊणीस शेणत धाचणा ।
टउरी सरीरी कच्वणा शेषोत धपती नच्चणा ॥४॥

सामी सुमी साटी छवर विकटी भटी साही लवर ।
पाटी पुटी थाही सवर मफी फुही पाही गवर ॥५॥

हुं राम रामेती रमण सिरकात करउप साटुवण ।
निवषा निषंता जाभरण जटती झसोटा पामरण ॥६॥

दखवा खुरैणा जावजी महतानि मादा पावगी ।
कफणा धुपाणा दावजी झुफा भनेठा छावजी ॥७॥

चौघाणि ताणिप दंदगी जयदोण णाहुस फंदगी ।
कुचराम भीणा संदगी पुच्चार पहुटा पंदगी ॥८॥

अर्थः— दक्षिण देश में एक सज्जन वेदान्ताचार्य जो ज्ञान सागर (उपनिषद्) के मन्थन करने में मन्दर के तुल्य ही थे और जो स्वभाव के शीतल गुणाग्राही और पीयूष पान के लिये तृषित चकोर के समान थे, आसन पर दर्शनार्थ आये ॥१॥

कई दिन तक जब उन्हें दर्शन नहीं प्राप्त हुआ तो चौथे दिन वे आते ही बहुत ही करूण स्वर में सामवेद का गान करने लगे। एकायक पर्दा हटा और उन्हें दिव्य दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अपने को धन्य कृत्कृत्य मान कर बोले ॥२॥

उसने प्रपंच को रचकर उसमें प्रवेश किया और सत् एवं त्यक् हो गया। इस श्रुति के भाव को जैसे जैसे चिन्तन करता हूं। वैसे वैसे बुद्धि संकुचित और कुण्डित होती जाती है। कुछ समझ में नहीं आता। भगवन् इस रहस्य को खोलिये ॥३॥

शरीर का लक्षण तो नियमत्व, धारयत्व और शेषत्व एवं शरीरी का लक्षण नियामकत्व, धारकत्व और शेषित्व बताया है। सो भी समझ में नहीं आता। इनको अनुभवी पुरुष ही जानते हैं। इसी से पूछने आया हूं ॥४॥

स्वामी जी ने कहा किसको समझावें और कौन समझै। जिस बुद्धि ने पक्ष विपक्ष की रचना करके विपक्ष के दूषणों से अपने को दूषित कर लिया है। वह कुछ समझने बूझने की क्षमता नहीं रखती। ठहरिये दुष्ट बृद्धि को चीर कर फेंकता हूं ॥५॥

राम राम कहते हुये मुझ में रमण कीजिये। प्यारी बुद्धि का मोह छोड़िये, दूषित अंश को निकाल देने ही से शेष की रक्षा हो सकती है। यह शल्य चिकित्सा का मर्म है। घबराइये मत धीरज धारण कीजिये ॥६॥

ऐसा कहते हुये स्वामी जी ने अपना शंख फूँक दिया। निनाद सुनकर वह ज्ञानी पृथ्वीमें लोटने लगा। आँखों से अश्रुधारा बहती थी। मुख से उपदिष्ट भगवन्नाम की आबृति होती जाती थी ॥७॥

दो दण्ड तक यह दशा रही। फिर वे निश्चेष्ट हो गये। वेसुध हो गये। जल सिंचन पर चेतना आई। और उठकर बैठे। आँख मलने लगे। मानो स्वप्न से जागे हों ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं को पेतस फोत सणं चेलरो टिकेसु पहितु उजा हे प्रति हुचे ॥

अष्टपदी के पाठ करने से आत्म-विद्या में अधिकार प्राप्त होता है। और गहन तत्त्व बोध गम्य हो जाता है ॥

अष्ट पदी ॥ ५४ ॥

निकवेरिनीगुण बम्हहा भक्ता सगुण सारम्हहा ।
पैधूम जाहुस जम्हहा नखती नुकाटी अम्हहा ॥१॥

लखमी चुशेषी शेषफण जुबदा अरंटा कैवरण ।
टगुरी हुरी हरि हिंडवण जुवखी चुभी हिंगिस सपण ।२।

शेषी हृदयस्थं शेषणा चिदटे चिदात्मा हेषणा ।
लखमी महापा झेषणा लंभा अचिद् सुद सेषणा ॥३॥

औमाणु नीगुण तत्तड़ा सगुणथ बुताडिम भत्तड़ा ।
टुकवारि टठणा सत्तड़ा जुग जुग जुगो परजत्तड़ा ॥४॥

जीवाणु जिउठा दागमी धउखी पिषापुस नागमी ।
नउठी उदापुह डाहमी हुबटा जिवाणी पाहमी ॥५॥

त्रिणिधा पुरुष विश्वानुगा आवतुं आहुम परतुगा ।
तैभूतभू ऊभू उगा ऐवर खवर औसन जुगा ॥६॥

धूसंधिनीसत आमुरी संवित चिदंटा जामुरी ।
ह्यालादिनी झामापुरी आनन्द बधना माहुरी ॥७॥

साखोतरा सा हुज्जरा आवोभरा पानुज्जरा ।
व्याख्यार भावा कुज्जरा नावैत नुक्का मुज्जरा ॥८॥

अर्थः- स्वामी जी ने कहा, सुनिये। ब्रह्म तो वास्तव में निर्गुण ही है। क्योंकि वह त्रिगुणात्मक प्रकृति से परे है। परन्तु भक्तोंने भक्ति के प्रभाव से उसे सगुण बना दिया है। कल्याणादि दिव्य गुणों का मूर्तिमान स्वरूप बना दिया। ("निखिल हेय प्रत्यनीक कल्याण गुण गणाकर") सृष्टि विकास भागवत का लीला विलास है ॥१॥

लक्ष्मी जी शेषी भगवान् और फणीस शेष जी ही सब सृष्टि के मूल में प्रतिष्ठित हैं। कमल नाल और ब्रह्मा की उत्पत्ति तो पीछे हुई। आत्म समर्पण पूर्वक शेष जी और चरण कमल सेवा में तत्पर लक्ष्मी जी विमल भक्ति का उपदेश दे रही हैं ॥२॥

भगवान् शेषी शेष जी के हृदय में विराजमान हैं। चिद् में चिदात्मा का प्रकाश है। चिद् शरीर है और चिदात्मा शरीरी है। लक्ष्मी जो महामाया है। भगवान् उनमें रमण करते हैं। अचिद् के शुद्ध सत्व में भगवान रमण करते हैं। अचिद् शरीर है परमात्मा शरीरी है ॥३।

यह सगुण ब्रह्म ही कृपा करके अपने निर्गुण और उससे परे स्वरूप का रहस्य अपने भक्तों को बता देते हैं। उसे जानने का दूसरा उपाय भी तो नहीं है। चतुर्व्यूह का असली भेद भगवान ही तो जानते हैं ॥४॥

जीव अणु है। और गुणों के वैषम्य से घट घट में अलग अलग है। परन्तु श्रुति में परमात्मा को भी अणु से अणु और महान् से भी महान् कहा है। राग द्वेष जनित चिन्तन की प्रतीति से भी जीव बहु होते हुये भी एक है और व्यापक है ॥५॥

जीवात्मा, प्रज्ञात्मा और परमात्मा तीन पुरुष हैं। जीवात्मा चिदाभास है। प्रज्ञात्मा चिन्मय हैं। और परमात्मा चिदानन्द है। प्रज्ञात्मा ही परमात्मा से अभिन्न हैं, सुषुप्ति में प्रतिदिन इनका मिलन होता है। पर इसे कोई जानता नहीं ॥६॥

सत् भाव का प्रकाश जिस शक्ति में होता है उसे क्रिया शक्ति सन्धिनी कहते हैं। चिद् भाव का प्रकाश जिसमें होता है उसे ज्ञान शक्ति सम्वित कहते हैं। और आनन्द भाव का प्रकाश जिसमें होता है उसे इच्छा शक्ति आह्लादिनी कहते है ॥७॥

न्याय का अर्थ वेदान्त में भ्रमजाल है। उसे छोड़ छाँट कर शुद्ध वेदान्त के मनन से ही ज्ञान की उपलब्धि होती है। शुद्ध मन से परमार्थ की इच्छा से ही वेदान्त का चिन्तन करना चाहिये ॥८॥ अनुष्ठान विधि-इयं चार्पणास्टकेर सिहु तासुणा तरि भुणा खिपाचारज के सुमही ताणु बाजु झगेरे ॥ इस अष्टपदी का रात्रि में अभिषेक करके सोने से अच्छे स्वप्न दीखते हैं और लगातार करते रहने से क्षीरशायी भगवान् के दर्शन होते हैं।

अष्ट पदी ॥ ५५ ॥

वेदान्तड़ा बुच बोहना सैका सुरातुस ओहना ।
पसका पुगंभर टोहना नवसी दुगेणा पोहना ॥१॥

थर डाभणा महगाभणा लुइकासुणा सुण आभणा ।
अकवारिटां सुप छाभणा नुह जाभणा कुण साभणा ॥२॥

तुभणेत प रावर बुकन णुपरोस दईणा मासुवन ।
अभुणा उणासिक मद्धुरन तिरखाव तिघणा झापुरन ॥३॥

मुहलौट मोगा मागुभी छिन्दन्त जुवणा ताजुभी ।
तरहंत तुम्मर वाकुभी दहिरं गहोरं आमुभी ॥४॥

हरिहर हुराउष मित्तिपी सौकारि चूणा जिप्पिड़ो ।
पाघोट सुपरा तिक्किसी लोहाड़ु कइमा विग्गिथी ॥५॥

हुंमाण शंखण हीमुड़ा पसकार पुहटा थीसुड़ा ।
पतलाम पिउणा झीथुड़ा औती उबाती पीपुड़ा ॥६॥

सीता क्षुपेता रामचन मुणि माहुणा सीसंभरन ।
व्पूहादि भुकणा दाहुसन लंभालुभासा साकपन ॥७॥

पाड़ूसि पंसा हंस हुर नउगो भिसंडा जाउफुर ।
पिघना किरंडा हामुसर दिसदेस दइटा फामधुर ॥८॥

अर्थः– वेदान्ताचार्य ने अपने ज्ञान का अभिमान त्याग कर कहा, महाराज ! मैं कैसा अल्पज्ञ हूं । यह बात मुझे आपकी कृपा से अब मालूम होने लगी है । जैसे ऊँट जब तक पहाड़ नहीं देखे है तब तक समझता है कि मुझसे बड़ा कोई नहीं ॥१॥

हे दयालु ! मुझे उस देश में ले चलिये जहाँ उभय लिंगी ब्रह्म विश्वानुग एवं विश्वातिग दोनों से परे भासता है । क्योंकि बिना इसके केवल युक्ति दृष्टान्त आदि से मुझ अल्पज्ञ को उसका बोध हो ही नहीं सकता । मैं विचारते विचारते हार गया हूं ॥२॥

उसका एक पाद प्रपंच के भीतर है, यह हम जान गये हैं । और उसके तीन पाद प्रपंच से परे हैं । यह हम नहीं जान पाये । और न जानने में समर्थ हो सकते हैं । नपुंसक और पुंलिग दोनों उसीके विभाव होने से मैं अल्पज्ञ बहुत हैरान हूं ॥३॥

निर्भिमानता जनित पात्रता पर प्रसन्न होकर स्वामी जी ने कहा निर्गुण के लिये नपुंसक और सगुण के लिये पुंलिग का व्यवहार करने वाली श्रुतियाँ ही उपदेश करती हैं कि सगुण ब्रह्म ही जीव का इष्ट है । निर्गुण तो केवल बोध का हेतु है ॥४॥

हरिहर पद को प्राप्त जीव ही उनके अनुग्रह से उभय लिग (निर्गुण–सगुण) से परे विलक्षण विभु को जो दिव्य चक्षु गोचर होने से सगुण प्रतीत होता है पर सगुण नहीं है, और जो अन्तर्यामी होने से निर्गुण जान पड़ता हैं । पर निर्गुण नहीं है पहचानता है । यही छिपा हुआ अत्यन्त गुह्य ज्ञान है । और मोह-फाँस को तोड़ने वाली भक्ति है ॥५॥ इतना कहकर जल सिंचन पूर्वक शंख बजा दिया । वेदान्ताचार्य समाधिस्थ हो गये । एक मुहूर्त से अधिक देर तक वह समाधि नहीं रही । पर उनको उसी में सहस्त्रों वर्ष बीते से जान पड़े कल्पनातीत दृश्य ही का प्राधान्य था । विश्व रूप दर्शन के भीतर व्यापक रूप से उसकी रमण क्रीड़ा थी ॥६॥

सीता जी के सहित श्रीराम जी ब्रह्मादिक देव व्यूह और मुनि समूह से सेवित देख पड़े । जैसे पतिंगे अग्नि शिखा पर जूझ मरते हैं, वैसे ही उनका मन समस्त संस्कारों के साथ मिट गया, वे अपने स्वरूप में प्राप्त होकर करूणा विग्रहा आदि शक्ति के सहारे जी उठे ॥७॥ अपने मनोराज को पाकर वे स्वामी जी के चरण कमलों को अपने अश्रु जल से धोकर कृतार्थ हुये । कुछ दिन सत्संग में रहकर अपने देश को गये । प्रसिद्ध राम भक्त हुये और उनकी लीक चली ॥८॥ अनुष्ठान विधि–

इयं चार्पणास्टकं तुधिसं वरा जाविणी सुहु जुगाति पय जु सब णुतरे भदीणा सुगता भुगता णुगता सीणिभे ॥ इस अष्टपदी से आग फूकने से मुख की शुद्धि होती है और जल में प्रतिबिम्ब देखने से (मन से पदों का पाठ करते हुए) निज स्वरूप की आभा झलकती है । जिससे धीरे धीरे भ्रम ज्ञान का नाश होता है ।

अष्ट पदी ॥ ५६ ॥

जर फिंदकी महमंदिगी कैवल्य झुज अरहंतिगी ।
मीभेव भुवना चंहिगी मकदाम दीमा ठंभिगी ॥१॥

औसीतड़ा जिन जीवणा भिषुआण पेघा पीवणा ।
पाऊषणा हिण धीवणा बखिआड़ि धौंका हीवणा ॥२॥

चौपेच तत्तं आसया जैनाभि माता वासया ।
लैना कुहा जुह डासया पबती पुदगलं पासया ॥३॥

काभारूकी संबाधकी हौतिगुड़ा पिटु साधकी ।
जौमीरू सीरू जाधकी हैवा पुमैठा नाधकी ॥४॥

जैनागमा तथ गाथुमा पैसाहिसा णखुराधुमा ।
हैराविता मसुता सुमा ट़रणी टुणीसा वातुमा ॥५॥
रिहुरेषुपत्ता जिनगरी पिटुसे पुगत्ता भामरी ।
अचथे उथे सा आभरी निहपन्न कुदड़ा जासरी ॥६॥
धित्तं धिरातं जैनमत निर्गुण निपत्तं सावसत ।
पंवापुवासिक नत उनत हविघा मुघासी जावरत ॥७॥
कोदो कदीसा करवरस झविता जुरैणा अरहरस ।
निपटां नुटांसी सरफरस धिण्णा धिणालुक्क आटरस ॥८॥

अर्थः- एक जैनी मुनि एक अद्वैत वादी परमहंस दस महीने से विवाद में व्यस्त थे। दोनों प्रबल नैय्यायिक प्रकाण्ड विद्वान् थे। अपने अपने पक्ष के कट्टर समर्थक थे। हारा कोई नहीं। बकते बकते दोनों थक गये। तब निपटारे के लिये, और अपने अन्तःकरण के सन्तोष के लिये वे यहीं (आश्रम पर) आये ॥१॥

आश्रम में आते ही उसके प्रभाव से जैनी जीवत्व से जिनत्व को प्राप्त हो गया। और हंस अणु से विभु को प्राप्त हो गया। इस तरह दोनों के हृदय की अशान्ति आप से आप शान्त हो गई। वे बड़े आश्चर्य को प्राप्त हुये। जिसके स्थान का यह प्रभाव उस महात्मा के दर्शन और सम्भाषण की महिमा कौन जाने ॥२॥

नव तत्वों (जीव, अजीव, काल, पुण्य, पाप, आश्रव, सम्वर, निर्जरा, बन्ध, मोक्ष सृष्टि, कर्म, ईश्वर) के मर्मज्ञ को सिद्धावस्था की चेतना प्रदीप्त अग्नि की तरह जाग्रत होने से जैन को तत्वों के साक्षात् दर्शन हुये और एक तत्व को मानने वाले परम हंस को सर्वत्र वही भासने लगा। जैनी कर्म पुद्गलों के बँध से मुक्त हो गया और दूसरा भ्रम जाल से ॥३॥ बहुत प्रतीक्षा करने पर दर्शन की उत्कण्ठा चरम सीमा तक पहुं-चने पर परदा हटा और स्वामी जी के दर्शन हुये। जैसे पतंग दीपक पर जूझने के लिये उत्साहित होकर जाता है। उसी तरह वह दोनों वेग से उठे, और चौखट पर सिर पटक दिया। दोनों के मत्थे पर चोट लगी पर उन्होंने उसकी कुछ परवाह नहीं की ॥४॥ स्वामी जी ने कहा-विवाद तितिक्षु का अलंकार नहीं। मुनियों और परम हंसो को समझ बूझकर रह जाना चाहिये। जिनाचार्य सिद्ध पुरुष को ही मानव लीला की समाप्ति पर ईश्वर मानते हैं। केवली (अद्वैत वादी) भी जीवन मुक्तों और विदेह मुक्तों को तिरोधान पर उपाधि रहित जीव को ब्रह्म ही मानते हैं। तब विवाद किस बात का? ॥५॥ जैनी आकाश, जीव काल और परमाणु को अनादि मानते हैं। आकाश को ब्रह्म जीव को चिद् और काल एवं परमाणु को अचिद् समझने से आध्यात्मिक संगति लग जाती है। एक दूसरे के पारिभाषिक शब्दों पर नहीं लड़ना चाहिये। उनके तात्पर्य को समझना चाहिये ॥६॥ जैन मत में अहिंसा धर्म ही प्रधान है। जो नारायण जी का शुद्ध स्वरूप है। "निर्गुण ब्रह्म के समान ही अहिंसा का विवेक दुरूह है।" मुनियों और परम हंसों को उसे समझना चाहिये। तर्क तो गौतमी विद्या की उपज है। उसके पीछे नहीं दौड़ना चाहिये ॥७॥ ऐसे सुन्दर समाधान को सुनकर दोनों निहाल हो गये। उन्हें परम सन्तोष हो गया और वे बार बार चरणों में पड़ने लगे। अपनी अपनी रहनी पर रहने की शपथ लेकर दोनों विदा होकर अपने अपने स्थान को गये ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके ये जी भणे सि हिटि कोरिवातु वँ साखूण सपेहाग सेहमेह अपहस हुकँ पुटासी ॥ इस अष्टपदी को यन्त्र बनाकर धारण करने से बाचालता दूर होती है। और मृगशिरा के उदयमें इससे होम करके यज्ञ शेष पायस पाने से भेद ज्ञान का नाश होता है। और परम तत्व की परख होती है।

अष्ट पदी ॥ ५७ ॥

सहकम खुरी जपताणिया मइघा मुघासी वाणिया ।
लिउटा उटायस काणिया झभणा घिवाटो टाणिया ॥१॥

ढ़बुरा सियाबी बेबुदी चबुणा सियासी हदहुदी ।
गिनचान चोमा माहुदी झिरुताण डेबहा आमुदी ॥२॥

जमिरण सुहण विसता उमण कोदी कुही भिरतां जुमण ।
रेगणी रूणी साउष चुमण जटहा जुसैणा मादुमण ॥३॥

गभिड़ाड़ गुइठा वाउखे पजियरड़ पुग्गी डामुखे ।
भकडांग हिठणर ठापुखे अतलाम हैहुट धावखो ॥४॥

सहिसानिमे तधिनान में भचिधंवता लंठानमें ।
पहडंपुरा सिउहानमें लोषिक पुहासिक वानमें ॥५॥
कौबोरू सामी सातुला जहनेषु जहता माकुला ।
अहटार सैथा बाबुला णोभं णुमंसा पाहुला ॥६॥
मलुणा णिसाभी झिपतड़ा पटुभी वकाटी सीनड़ा ।
धिगारूणासी थोबड़ा दउगा चनैटी भोहड़ा ॥७॥
पाजीट बउखा बल्लभी तुहिदाणु झिउना अल्लसी ।
घिउधा घिधावण जल्लमी पेषुणा जवासू चल्लपी ॥८॥

अर्थः—लिउटा नामक वैश्य जिसका व्यापार समुद्र पर होता था, और जिसकी साक्ष बाहर के महाजनों में जमी हुई थी। जिसकी अपार सम्पत्ति का भोक्ता कोई आत्मज नहीं था। इसी चिन्ता से दुःखित अपनी स्त्री समेत बादल से छिपे हुये चन्द्रमा की तरह आया ॥१॥

दो दिनों तक उसे दर्शन प्राप्त नहीं हुये। जिससे धन मद रूपी पिशाच उसके शिर से उतर गया। और वह दैन्य भाव से सच्चे आर्त्त की तरह प्रार्थना करने लगा कि दया भण्डार से हमें विमुख न कीजिये। दर्शन देकर कृतार्थ कीजिये ॥२॥

वह बहुमूल्य बस्तुयें भेंट कर चुका था जिन्हें स्वामी जी की आज्ञा से उसके देखते ही देखते गंगा जी में फेंक दिया गया था, इस तिरस्कार भाव से उसकी जीवन ज्योति चमक उठी थी। और उन वस्तुओं में जो उसका मोह था वह भी छूट गया था ॥३॥

इस प्रकार उपदेश के लिये पात्र बनाकर स्वामी जी ने पर्दा हटा दिया। उस वैश्य दम्पति को दर्शन देकर कृतार्थ किया। वे निष्पाप हो गये। और उनके हृदय को औंधा कमल सीधा हो गया ॥४॥

वे एक टक दृष्टि से निहारते ही रहे। तब स्वामी जी ने उनसे अपनी मनोकामना प्रगट करने को कहा। तिस पर भी उनकी स्तब्धता भंग नहीं हुई। वे चकोर की तरह चन्द्र मुख पर दृष्टि जमाये दर्शनामृत का पान करते रहे ॥५॥

स्वामीजी ने फिर चेताया। अबकी वह बनिया सचेत होकर कहने लगा, महाराज! आये तो हम पुत्र की इच्छा से परन्तु बड़ा आश्चर्य है कि हमारे मन में अब किसी बस्तु की वासना ही नहीं रही। अब आप जो चाहें दे दें ॥६॥

स्वामी जी बड़े संकोच में पड़े। उन भाग्यमान व्यक्तियों पर प्रसन्न होकर उन्हें भगवत् सम्मुख कर दिया। उन्हें अपने मन्द संस्कारों का ज्ञान हो गया। जिनकी निबृत्ति से मनुष्य को अपना स्वरूप दिखने लगता है ॥७॥

वे विदा होकर वल्लभी को चले गये। जहाँ उनका घर था। वहाँ उन्हें सम्बत भीतर ही पुत्र प्राप्त हुआ। स्वामी जी के नाम से ही उनका नाम रखा गया। सन्त सद्गुरू की कृपा से दुर्लभ वस्तु भी सुलभ हो जाती है ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर दुसं चिताणि पधा पुणाति भृगोधरे मयि मते मती हुषा भरोसत भाकुवटे आधिम ॥

इस अष्टपदी को माघ के सूर्य में रात को जगावे तो हृदय का औंधा कमल उलट कर खिल जाए। और वासना का क्षय हो।

अष्टपदी ॥ ५८ ॥

तिखुनी तुरम्बस जिम्हड़ा उगनी हुरायम निम्हड़ा ।
थावैत मिउणा तिम्हड़ा उपनैत विंधा हिम्हड़ा ॥१॥

हादाय पुरणी ढांसकथ उघणानुधा ताखैटु भथ ।
कुमैंट् ढिमुणा मारूसथ लहटा हुबैला चित्तरथ ॥२॥

जाजा दिघौड़ा अम्बिका उतरम पुणाटो मस्तिका ।
गंबूत औचा बहलिका हठधा मुखी चरजंपिका ॥३॥

झसणंुबरी तामंथरी होभेत कुहणा संथरी ।
तेऊभ जिंसा गंुथरी अपतेप झाहा खंथरी ॥४॥

तौगंधुरा सामी सुवा घामी घुमामी मेनुवा ।
टिउखी जुवर्रा सेपुवा झड़सां झनैसां बेहवा ॥५॥

ढइ ढिंबरा डाणोतड़ा जम्हुसी फड़ाकित पोमड़ा ।
लहुचुण गरेबा ओपड़ा निखती फतीसा कोमड़ा ॥६॥

बौधूम सनत कुमार सणु आगोण भैहा णेण भणु ।
किचुटा कसैटा मातमणु हबरी हुमंसिल आभतणु ॥७॥

आपं सहापं चैतनी णापं णुगाहं भैसनी ।
नरहर्यानन्दा गौभनी ठरभै डभैटा मैमनी ॥८॥

अर्थः– विन्ध्य क्षेत्र में उपनीत हुआ बालक नर रूपधारी दिव्य पुरुषों के साथ वाराणसी में गंगा तट पर विचरता हुआ बहुत से लोग लुगाइयों का चित्त अपनी ओर आकर्षित करता हुआ आश्रम पर प्रिय शिष्य (श्री अनन्ता नन्द जी) के सन्मुख मन्द गति और विमल भाव से उपस्थित हुआ ।।१।। अभिभावकों की सिखाई हुई बात की तरह नहीं वरन् निजी उद्‌गार के तद्‌वत् उसने कोकिल को लजाने वाले कण्ठ से नत मस्तक और समित्-पाणि होकर कहा–भगवान् ! मैं आप की शरण में प्राप्त हुआ हूं । अपने कर कमलों को मेरे शीश पर फेरिये और मुझे सर्वतो भावेन् अपना चरण सेवक बनाइये ।।२।। फिर अभिभावकों में से एक ने कहा कि दियौड़ा स्थान की अम्बिका भवानी के प्रति वीर भाव से उपासना करने वाले एक सिद्ध पुरुष के औरस और महामाया के गर्भ से उत्पन्न यह संस्कारी बालक हम आपके चरणों में अर्पण करते हैं । आप इसके पिता हैं । इसीलिये ऐसा किया जाता है ।।३।। चकित हुये महात्मा श्री अनन्तानन्द जी ने कहा-ठहरिये मैं आपके प्रस्ताव को आचार्य की इच्छा में अपनी इच्छा मानने के कारण स्वीकार नहीं कर सकता । और न अस्वीकार ही कर सकता हूं क्योंकि आप सिद्ध तपस्वी मालूम पड़ते हैं । और यथार्थ बात कहते हैं । छिपाते हुये भी कुछ नहीं छिपाते हुये भी नहीं छिपा सकते ।।४।। इतने में स्वामीजी ने शंख बजाया जिसके श्रवण मात्र से वह परम पात्र बालक अपने साथियों सहित अनिर्वचनीय अवस्था को प्राप्त हुआ । बहुत दिनों के अवर्षण के अनन्तर एकाएक मेघ गर्जन को सुनकर मोर की जैसी दशा होती है, वैसी ही आनन्द की दशा में निमग्न हो गये ।।५।।

परदा हटा । और प्रिय शिष्य (श्री अनन्तानन्द जी) ने सेवा में उपस्थित होकर सब वृत्तान्त निवेदन किया । आज्ञा हुई । मैंने शंख ध्वनि के द्वारा दिव्य दीक्षा देकर उसे अपना लिया । अब तुम लौकिक वैदिक रीति से उसे मन्त्रोपदेश करके उनकी प्रार्थना को स्वीकार करो ।।६।। वह सनत्कुमार जी का अंशावतार हैं । नवीन नहीं प्राचीन बालक है । अवस्था विचार न करके उसे तुरंत दीक्षा देना ही ठीक है । गुरू की आज्ञा का पालन करने के लिये उत्सुक महात्मा जब लौटे तब देखा कि वे अब तक वैसे ही आनन्द मूर्च्छित पड़े हैं ।।७।। जल सिंचन पूर्वक उन्हें चैतन्य करके उस बालक को प्यार के साथ मन्त्रोपदेश दिया । और नरहर्यानन्द नाम रखा । अपनी सेवा में स्वीकार किया और उसके अभिभावकों को चतुर्थाश्रमी दीक्षा देकर परम सन्तोष हुआ । सब आचार्य के दर्शन के अन्तर्हित हो गये ।।८।। अनुष्ठान विधि–

इां चार्यगास्टके वमगवा उगती सुषाती अनन्तर जुचमुहा त्रिसंवद हुमे सरभु पदीण पारे राजु भीणुत खिखाण ।।

इस अष्टपदी के प्रातः सायं पाठ से हरि सन्मुखता बनी रहती है । विक्षेप से रहित साधना में संलग्नता प्राप्त होती है ।।

अष्ट पदी ॥ ५६ ॥

वियलुम्ब वाहन चन्द्रप्रभ विद्याधरेणापिस करभ ।
मुणिसाप सौला मिनुदरभ चिकुआं नदेसर संसरभ ॥१॥

आरूभ गवैसर झानड़ा मरतिम जिहोवा टानड़ा ।
जड़खिन लहैला जानड़ा खुइला सिहौड़ा आनड़ा ॥२॥

सीफेण दूल्हा दौहरी तइकेप जुगपिप नौहरी ।
बस मासणा हत हौहरी तिगुल दिहासा औहरी ॥३॥

चौभम सुहाका साहिबी जुटडा कणीका कानिबी ।
मकबेसड़ी जमुकारिबी हबथू सथू चारासिबी ॥४॥

उकुमात हति प्रसणेइ जण नियसिक उसिक साटोवमण ।
ममरूण सिकाहुत तरमिकण नहसूद जुल्ला आमहण ॥५॥

जकरूंभरा डिहथी सहे नयना निनारी जीथहे ।
पशडण तिहत्ता तीमहे सटसो समुज्जा दीपहे ॥६॥

तौजीथ डाउस हाणसू जौगीर लैणा भाणसू ।
उकिनाड़ दीणा आणसू मौताणु किसू धाणसू ॥७॥

सामी सवायसु तांतनस उहवेस कन्या दान यस ।
णुकसा जुमानुस देवतस गिब्बाण गोमिल्ला नुहस ॥८॥

अर्थः—लुम्ब वाहन और चन्द्र प्रभ नामक दो विद्याधर मुनि श्राप के कारण नदेसर (नन्दीश्वर) के शून्य प्रदेश में रहते थे, परन्तु उसकी भोग प्रबृत्ति शान्त नहीं हुई थी।१

वे दोनों एक एक कन्या पर मोहित थे। एक विप्र—कन्या पर और एक वैश्य कन्या पर। उन्हें वे भाँति-भाँति के भोज्य पदार्थ खिलाया करते थे। पुष्प माल्य से घर भर देते थे। जहाँ जहाँ वे कन्यायें जातीं, वहाँ वहाँ वे भी जाते थे ॥२॥

उनके दूल्हों को सर्प से डँसवा कर मार डालते थे। और उनका विवाह होने ही नहीं देते थे। जीव जन्तु प्रेत यक्ष सब उनके अधिकार में थे। इसी से ताँत्रिकों का तन्त्र और मान्त्रिकों का मंत्र कुछ काम नहीं करता था ॥३॥

दोनों (विप्र और वैश्य) परिवारों में समान दुःख से दुःखी होने के कारण परस्पर बड़ी घनिष्टता हो गई थी। दोनों का उपचार भी परस्पर के परामर्श से होता था। इसीसे दोनों कन्यायें साथ ही लाई गईं ॥४॥

उनके साथ उनके माता पिता और स्नेही जन थे। और पीछे लगे वे दोनों प्रणयी भी आये थे। बहुत प्रतीक्षा और प्रार्थना करने पर परदा हटा। दर्शन से लोग कृतार्थ हुये ॥५॥

दर्शन के प्रभाव से प्रभावित होकर वे दोनों विद्याधर अपने को छिपा न सके सबके सामने प्रकट हो गये। उनके दिव्य भव्य सुन्दर रूप पर वे कन्यायें मोहित हो गईं। उनके माता पिता की टकटकी बँध गई ॥६॥

स्वामी जी ने कहा इन कन्याओं के लिये ऐसे सुन्दर वर खोजे न मिलेंगे। ये कुलीन हैं देव वंश के हैं। ऐश्वर्य मान हैं। विद्वान् और प्रणयी हैं। पूर्व संस्कार से प्रणय के चिह्न उदित हैं। योग्य पात्र को ही कन्या दान करना चाहिये ॥७॥

स्वामी जी की आज्ञा को स्वीकार करके उसी समम कन्या दान हुआ। देवता और मनुष्य का विवाह हुआ। वर—कन्या आशीर्वाद लेकर बिदा हुंये। देवताओं ने बड़ी तैयारी से उत्सव मनाया ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर हियोस कामिसं वरे तमे चवैसं मुहा सव गुजणे

पति मैह रस बते सा परेद खमी बसा ॥

इस अष्टपदी का होम द्वारा अभिषेक लेकर प्रीति पात्र पर डालने से आकर्षण और वशीकरण दोनों सिद्ध होते हैं। दिगम्बर होकर इसे अर्द्ध रात्रि में अनार की छड़ी काट लो उससे स्पर्श करते ही प्रणय पात्री वश में हो जाता है ॥

अष्ट पदी ॥ ६० ॥

विद्याधर दूं फाकसी फिंकैश कोदव आपसी ।
मुह्यां भुताहिण दाफसी उण्णाव ऊंघा लाफसी ॥१॥

जाफट उहाफट हामरट उज्जीण औसा अम्मसट ।
पथनीप जोणिप सामचट हलकेह कैते जामभट ॥२॥

हौसाणु सूहा वेद धर चुजरौण कहवा चौजटर ।
चपिरामल्युठी अंझरर हैभंट हुमठा आफुहर ॥३॥

हुविशाण जखणा वाणुणा पैहस दुनासा छाणुणा ।
लिटगिज हमैसा णाणुणा छैणाट घमंचा साणुणा ॥४॥

सामी सिगाफी सांजली मीणा भुसट्टा खांजली ।
लकवीस दूहा घांजली मकहूर हिनुआ घाँजली ॥५॥

झिसुआर हेकड़ा हंबुदन हुह्यिआर चेपा नेसुधन ।
भिहरा पसम जुपला मुचन पवितोषु जूणा झरफिसन ॥६॥

महरूक मुक्कप मौमुही निगहाति राटी थैकुही ।
चिंघेसु दीछा वैसवी मुकुराणि डावन कैसवी ॥७॥

चिति सत्ति टं टं चित्त कुट मिस्ताण धैपट भाणउट ।
णिकुड़ा कुड़ाणा धौणचुट आताँ अताताँ चौमहुट ॥८॥

अर्थः–सोने के थाल में सब दिव्य भोग सजा कर और चाँदी के बेला में चन्द्रमा की तरह चमकता हुआ पायस लेकर और मार्ग में भिक्षुओं और कंगालों को दान दक्षिणा से सन्तुष्ट करते हुए वे दोनों विद्याधर चाँदनी रात में आये ॥१॥

स्वामी जी के शील स्वभाव और महत्त्व पर बिके हुए वे दोनों भूमि पर गिर कर नमो नारायण बोले । बैठने की आज्ञा हुई । बैठते ही उन्होंने देव वाणी में स्तुति प्रार्थना की । परदा हटा और उन्होंने बड़े प्रेम से आरती उतारी ॥२।

कनिष्ठ ने कहा–उस दिन श्री चरण के दर्शन से एक बात यह अनुभव में आई कि विषयों की निवृत्ति में ही परम सुख है । और यह हम देवताओं को अत्यन्त दुर्लभ है, क्योंकि हम भोग में उत्पन्न होकर सदा भोग–विलास में डूबे रहते हैं ॥३॥

बड़े ने कहा–वह देव दुर्लभ सुख आपके पास हैं । हे उदार दानी ! हम पर कृपा करके उसे हमें दीजिये । हमें परमार्थ की दीक्षा दीजिए ॥४॥

स्वामी जी ने कहा—आप परम प्रसिद्ध देव ऋषि से दीक्षा ले सकते हैं । ज्ञान का सम्पादन कर सकते हैं । और सिद्धावस्था में पहुंच कर परम सुख को भी प्राप्त कर सकते हैं ॥५॥

जिज्ञासु ने कहा–जिसने हम अपरिचितों के साथ बिना किसी कारण उपकार किया और साथ ही हमारे हृदय क्षेत्र में विराग का बीज बोकर एक ही से दो प्रयत्न सिद्ध किया उसको छोड़कर हम कहाँ को जाँय ॥६॥

स्वामी जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करके उन्हें वैष्णवी दीक्षा प्रदान की । वे उसी समय दिव्य से दिव्य दीखने लगे । दीक्षोत्तर उपदेश में स्वामी जी ने कहा–अब भोग–विलास छोड़कर सुख विलास में रत रहो ॥७॥

वह सुख विलास आत्म दर्शन है । चित्रकूट है जहाँ चिति शक्ति का पूर्ण प्रकाश है। जहाँ वह सनातन ब्रह्म स्वतन्त्रता पूर्वक क्रीड़ा करता है । जहाँ के लता पता चराचर जीव उसी सुख विलास में सुखी हैं ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं मासे हुणा पिघत युसा क्रिणास्ति परूसंपुजे ज्ञापेस तुहा सिवा–झुपसि माति ॥

इस अष्टपदी को नित्य पाठ करने से विषयिकता घटती है । और एकादशी से आरम्भ करके कमल पत्र पर हरिद्रा से लिखते रहने से कामिनी से पिण्ड छूटता है । और कुसंस्कार मिटते हैं ॥

अष्ट पदी ॥ ६१ ॥

टिमवास वाड़ा धायभी तज्ञेश दत्ता न्हायभी ।
निहटाम्या गिह पायभी गंगा गिरासन छायभी ॥१॥

गड़िवी सुमैटा नदवरम निहभा भुभा मिहसन डरम ।
कोहुणा किणा सिहगज ढरम आफेस हुपसा अरलरम ॥२॥

डिउघा जिखा सिघ माफिगा उणवीसु भैणा साफिगा ।
तणणी तणोधा माफिगा झणनी उझाणी दाफिगा ॥३॥

चिभुराउँ जिटुहा अवरूसन मिचिकार पाझट सहरूमन ।
विकहा बुहासिन टसरूजन मणुगर मुघाणा पवरूपन ॥४॥

मिणु मासरा हिटु जंहिरं दिपिथा घिथा की अंभिरं ।
पाहा सिवासिव णंसिरं सुहुरामानन्दा गंथिरं ॥५॥

महणा खणा पिहु पससली णिसुणां महौखा टससली ।
आहुम अनन्ता हससली हिपुरा फुरा हुप बससली ॥६॥

तक्खीर ढाता मानुता ऊधेरणा भिणु कापुता ।
उकरहड़ ओघी वाचुता सिद्धां खुवासी भामुता ॥७॥

सकरास दीच्छा वैसवी भिकुराम मत्ता सैनवी ।
अचिरा उरासिप ऐहवी सिहु योगानन्दा नैरवी ॥८॥

अर्थः– बाँसवाड़ा के रहने वाले यज्ञेश दत्त काशी के नामी विद्वान् थे। न्यायशास्त्र में इतने निपुण थे कि कोई उनका सामना नहीं करता था। वे सिद्धासन से जल पर बैठ कर नित्य गंगा पार जाकर शौच क्रिया करते थे ॥१॥

उनके ललाट पर लक्ष्मी, जिह्वा पर सावित्री क्रीड़ा करती थी। और उनके हृदय में उमा महेश्वर की झाँकी थी। जो धन मिलता था वह ब्राह्मणों को दान कर दिया जाता था। वे आसक्त किसी में नहीं थे स्त्री को छोड़कर ॥२॥

स्त्री पतिव्रता थी। एक दिन हँसी में पण्डित कह कर गये कि अब नहीं आवेंगे। गंगा पार एक सन्त के सत्संग में रह जाने से दिन भर लग गया। बेचारी स्त्री प्रतीक्षा करते करते थक गई और पति के बचन पर विश्वास करके उसने शरीर त्याग दिया, सन्ध्या समम आकर पंडित ने अन्त्येष्ठि किया ॥३॥

प्रिया का वियोग पण्डित को बहुत खला। उन्हें संसार सचमुच असत्य भासने लगा। अपूर्व वैराग्य उनके हृदय में उत्पन्न हुआ। सब लोग समझा बुजाकर हार गये, वे अपने इष्ट (शिव) के ध्यान में तल्लीन हो गये ॥४॥

उसी दशा में नींद आ गई। शिवा शिव के दर्शन हुए। उनकी पत्नी भी वहीं थीं। शिव जी ने उपदेश दिया कि तुम स्वामी रामानन्द जी की शरण में जाकर कृतार्थ हो जाओ। मेरी भक्ति का यही फल है ॥५॥

वे आश्रम पर आकर पुकारे। आज्ञा हुई १०० सौ घड़ी एक पैर से खड़े रहो। पैर काँपने न पावे। उन्होंने वैसा ही किया परन्तु पैर निराहार रहने के कारण एक बार कँपा और वे गिर पड़ते कि अनन्तानन्द जी ने उन्हें सँभाल लिया ॥६॥

स्वामी जी से उन्होंने कांपने का हाल छिपाया नहीं। सब सच कह दिया और सिद्धों ने ऊपर से साक्षी दी। तब स्वामी जी ने उनको अंगीकार किया और कहा– जिन्होंने तुम्हें गिरते हुए सँभाला है उन्हींको तुम प्रथम गुरू समझना ॥७॥

अनन्तर उनको वैष्णवी दीक्षा दी गई और योगानन्द नाम पड़ा। दीक्षा के समय एक झुण्ड पक्षिदों का चोंच मे विचित्र पुष्प लेकर आया था। नवीन सन्यासी के शिर पर पुष्प चढ़ाकर उड़ गया। कहते हैं कि वे सिद्ध थे ॥८॥ अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकेर भा उजसे महेवाता भिलस पी हा दुधप्पे हि मकासिण उमा जिसु तांत मै व ॥

इस अष्टपदी को उपनीत बालक को पढ़ा देने से उसकी मन्द बुद्धि भी तीक्ष्ण हो जाती है। और मूर्ख भी पाठ से बुद्धिमान हो जाता है।

❖ अष्ट पदी ॥ ६२ ॥ ❖

सार्भसि गोहिण नाथ चू सुघिरौप आसण आयकू ।
णिकुता जुरंपा लाथहू जिसुणा मिषंता बाथलू ॥१॥

जैसोल होलासिण उजा घघरेड़ चौछा असणुजा ।
दीठीर जी अछ बहलुजा गोफता ठिहाफिण लपुजा ॥२॥

आक्का सहित सूमर्दटा उज्जीय सीतलि भस्मिका ।
सिट भ्रामरी किट मूरिच्छा णपु केवली संुझाझवा ॥३॥

चहगेब झणिका होबदू मिच्चिखासु झहबाणाबदू ।
इमुरास जुबटण काबदू घुभणार बेमा आबदू ॥४॥

सामी समद कुलतां गदा अप्यास चूणा सांबदा ।
लौकाइ अत उम आँसदा जालधरी वध गांकदा ॥५॥

जोगी जुगी डमणेव फह मगफारू सौणा जाणुवह ।
निच्चिगोणु मंघा तातुसह रघुबीर णौणे आकुरह ॥६॥

णिसिडोगु डिस्टा डिहमसी सामी समंतु लिह्पसी ।
विण्णो गुपैटा इहषसी उकणा उधैवा जिहणसी ॥७॥

कसाटुं हुटंु गिड सिरविरी मकुभा उमा सिय तिम्मिरी ।
काडिसा पुणा फिसा इरसिरी हुटिहा टुखारिम गिरदिरी ॥८॥

अर्थः— हिमालय के गम्भीर गह्वर से गोहिणनाथ नामी योगी आकाश मार्ग से फूल बरसाते हुये आये। कपोल तक लपटी हुई पपनियों को उठाकर वे दर्शन के लिये द्वार पर बैठ गये। उनकी बृत्ति शान्त थी। और प्रणव का जप हो रहा था ।।१।।

मुहूर्त्त भर उसी निष्ठा और यत्न से वे बैठे रहे। परन्तु दर्शन का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ। योगी बेचैन हो गया। उसे शान्त करने के लिये उसने प्राणायाम की युक्ति सोची और क्रमशः उसमें प्रवृत्त हुआ ।।२।।

पहिले सहित प्राणायाम को साधकर सूर्य मर्द एवं उज्जायी पर अधिकार किया। शीतली और भस्मिका से तर कर भ्रामरी में भ्रमण करता हुआ मूर्च्छा की दशा को प्राप्त हुआ। जिसमें केवली प्राणायाम का संचार रहता है ।।३।।

ऐसी अवस्था में एकाएक शंख बजा। जिसके श्रवण मात्र से योगी की ज्ञान इन्द्रियाँ स्तब्ध हो गईं। किन्तु एक सूक्ष्म-प्रकाश राशि उदय हुई। जिसने मोहान्धकार को दूर कर दिया ।।४।।

उसी समय स्वामी जी ने कहा—पंच धारण एवं शाँभवी मुद्राओं का अभ्यासी जालन्धर बन्ध मुद्रा की अपेक्षा नहीं करता। इतने प्रदर्शन की आवश्यकता नहीं थी ।।५।।

उस कालीन योगी ने उत्तर में कहा—जब मैं यहाँ आया और दर्शन में विलम्ब देखा तो इस विद्या में अपने को बालक समझ कर गुरू के समक्ष पुराना पाठ सुनान ही उचित समझा। और किया इसलिये कि आगे का पाठ मिलै ।।६।।

इस उत्तर ने स्वामी जी को निरूत्तर कर दिया और उसकी (योगी की) निरभिमानिता ने वशीभूत कर लिया। मन्द मुस्कान युक्त स्वामी जी ने कहा—कृत्रिम साधन द्वारा प्राप्त इष्ट वस्तु सदा उन्हीं साधनों के आधीन रहती है। किन्तु वही प्रेम द्वारा प्राप्त स्थायी निरपेक्ष और स्वाभाविक हो जाती है ।।७।।

अब वही प्रेम योग—महाभक्ति योग आप को पात्र जानकर प्रदान करता हूं। इसका मन्त्र आँखों द्वारा हृदय में प्रविष्ट होता है। पपनी उठाइये। योगी ने वैसा ही किया, और पलक झपते ही प्रेम योगी होकर नमन करके विदा हुआ ।।८।।

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके जवे खरभे तसागि से फत सा उ कदापि शिउण धायिपी साहु गेपणी ज्ञा प्रेम पाव ।।

इस अष्टपदी के नित्य एकादश पाठ से प्रेम योग का अधिकार प्राप्त होता है। और दिव्य दर्शन भी ।।

✖ अष्ट पदी ॥ ६३ ॥ ✖

चहबह गुरण्णा जाविरी उपहाण समहर काविरी ।
हणु सहसु जावट झाविरी टफसाण दिंगर भाविरी ॥१॥

सिकुचां चुभाची जिंसुरा उकणाभ जरसी हिंगुरा ।
कडफाण अदसी इंपुरा अखणी हुसेवा दिंबुरा ॥२॥

पझपाणु सामी मिउठणस हंदर्द हुवड़ा ताणवस ।
तिभुतैहिणा लंभाणु पस मकसिभ कुणाता जैहुरस ॥३॥

झुपझाम गड़भी दिणकदट हफणार णावसी हेबफट ।
जणि अं उमैहा सिलव पट महबल कुसुढा आविसट ॥४॥

ज़टधास गासप हमहरी चुणिभा दुभा आसंचरी ।
पाणं पिणा उफ कटलरी जोशं भिआणं सगतरी ॥५॥

पहुडंस बुक्का उण बगण लिमसी णुकैटा हण्डसण ।
उमहा जुहा पुम इन्द्र मण भिसकी फिगी साहुंमचण ॥६॥

अबडेण बिकुहा थंभरे हुबुरो हुरोमा पंथरे ।
चिटु जहफरा डम हसरे निघुणो जुणी बहिधं चरे ॥७॥

दिउला दुधण्णा सोहुरत पिसुणा थिभौखी जोहुरत ।
किमुखां विहोखा लीभुरत मचराव टिण्णा पीफुरत ॥८॥

अर्थः– एक बार एक कुलीन ब्राह्मण अपनी युवती कन्या को साथ लेकर आया । उस कन्या के सब अंग तो मनुष्यों की तरह सुन्दर थे । परन्तु उसका मुख बकरी के मुख के समान था । इस कारण उस कन्या का विवाह नहीं होता था । इस कारण उसके पिता बहुत दुखी थे ॥१॥

आश्रम वासी उस कन्या की मुखाकृति देख देख कर चकित थे । और वह भी शाली नता एवं संकोच से पृथ्वी में गड़ी जाती थी । उसका संकोच इतना बढ़ा कि बहुओंकी तरह उसे घूँघट काढ़ने पड़े । जैसे मक्खियों के भय से क्षत ढाकने पड़ते हैं ॥२॥

इतने में परदा हटा । और स्वामी जी के चरणों में उपस्थित होकर दोनों बाप बेटी रोने लगे । हिचकियाँ बँध गईं । बार बार चुप कराने पर भी उनका रोना बन्द नहीं हुआ । तब मानो उनके मोह निवारण के लिये ही शंख बजा ॥३॥

वह शख ध्वनि थिरकती हुई उनके श्रवण रन्ध्र से हृदय में प्रविष्ट हुई । उसने क्रंदन को शान्त कर दिया और उनकी चित् शक्ति को खींचकर सुषुप्ति के गुफा में डाल दिया जहाँ वे सुख पूर्वक रहे ॥६॥

उस सुख निद्रामें पगे हुए उन्होंने देखा कि पवित्र गङ्गा धारा में जलकिंसुक के झाड़ लहलहा रहे हैं । और उसमें बकरी का शिर लटक रहा है । उसे देखते ही निद्रा भंग हुई । उन्हें जगते हुए यही प्रतीत हुआ कि महीनों सोने के बाद उठे हैं ॥५॥

स्वामी जी ने उनकी जिज्ञासा शान्त करने के लिये कहा,–कि देखो यह कन्या इन्द्र-मणि पूर्व जन्म में बकरी थी । संयोग से बाढ़ में बह चली और झाड़ में फँस गई । वहीं उसकी मृत्यु हुई । गंगा के प्रभाव से मनुष्य हुई । पं सुरति मरती बार मुख में लगी रही । इसीसे मुख अजा का प्राप्त हुआ ॥६॥ अतः तुम लोग वहाँ जाओ और उस अजा मुख का संस्कार करके धरती में गाड़ दो तब कन्या का मुख मनुष्य केसमान हो जायेगा पता पूछ कर वे दोनों वहाँ गये अजा पुत्र का संस्कार करते ही कन्या का चेहरा बदल गया ॥७॥

फिर वे दोनों हर्ष पूर्वक बधावा लेकर आश्रम पर आये । आनन्दोत्सव मनाये । साधु ब्राह्मण का सत्कार किया । उनकी जाति के एक विप्र कुमार ने उससे विवाह करना स्वीकार किया । और आशीष लेकर वे घर गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्के तोसे मादुरस्ति मिरुपै च विच भेत चु विभगेण भोता उगताति जासि णिता जिक भाउह के च ॥ इस अष्टपदी को तुलसी वेदिका के पास बैठकर नित्य ५ पाँच पाठ से कुरुपा अकुलीना गुणहीना कन्या का भी विवाह हो जाता है ।

अष्ट पदी ॥ ६४ ॥

दिक दिम्मरा णोची भुआ चाथो थिबुरी मस मुआ ।
चन्द्रेष चउणा मतसुआ ओणीम जिसुहा झंझुआ ॥१॥

अैजेस ऊषा उम्मरी जट जाम मउखा कुम्मरी ।
पदवीस पुरटा डुम्मरी नवथासु जैतँु चुम्मरी ॥२॥

झिमसी झुपी सामुन सुरा ददिणी उजम ससणो उरा ।
केपाज पुइणा समचुरा नवसोधरं फाणंु कुरा ॥३॥

जपणा चिपग्घा आजरी टुभणा सुवैआ माजरी ।
हुबिला छुला सिहु गाजरी इचु वास जैसणु छाजरी ॥४॥

गमिताफ जोझिफ टरभिदठ सुरणस सुघस पटपी विरठ ।
चौणीणु जमफुह धामिरठ णुचखां गड़ा सिव जांघिरठ ॥५॥
कसिमा कुरंमा ताडुमा णंभा बिडंभा चादुमा ।
घप्यास जूसौ आहुमा उपणार हुगा साधुमा ॥६॥
हिब हासिया णिसु पागिया शिण धोक्षिणा चिछु सागिया ।
डुमरंछहा पडुलागिया ढंकर मुणाछी फागिया ॥७॥
मघचो नुघासी बारबाँ उँकटा झरैला हारबाँ ।
मुणका गिलाछी डारबाँ हजता हुजाता णारबाँ ॥८॥

अर्थः– एक साधु ने आश्रम पर आकर कहा–स्वामी जी मेरे घर में चोर सेंध मार कर घुस गये। न जाने किस कोने में ऐसे छिप गये हैं कि दिखाई नहीं देते। घात लगाये रहते हैं। और अवसर पाकर चुपचाप हमारा धन अपहरण कर लेते हैं ॥१॥

गूलर के फूल की तरह कभी भी प्रत्यक्ष न दिखाई देने वाली उषा सुन्दरी अपनी क्षणिक अंग भंगी से वैराग्य के सिंहासन पर आसीन पुरुष के मन को अहीरिन की मथानी की तरह मथा करती है। बल–वीर्य रूपी नवनीत निकलते ही उसे खा जाती है ॥२॥

हे शरणागत पाल! मेरी रक्षा कीजिये। षट् सम्पत्ति को जो चोर चुराले गये हैं उन से मुझे वापिस करा दीजिये। और उस सुन्दरी को पाषाण की पुतली बना दीजिये कि हम गरीबों की जान बचे ॥३॥

स्वामी जी ने कहा–भाई तुम धन्य हो। जो यह समझते हो कि हमारा घर लुट गया और बल-वीर्य जाता रहा। अन्य लोगों को तो इसका पता ही नहीं ॥४॥

अच्छा अब सुनते जाइए और देखते भी जाइये। उन चोरों का सरदार मोह आँखों के तिल में छिपा रहता है। वह खाता पीता कुछ नहीं केवल सोता है। मनुष्य की पूरी आयु उसकी एक नींद है ॥५॥

उस झपकी में जो जगत् स्वप्न प्रकट होता है उसीमें जीव विचरण करता है, और उसकी नाका बन्दी शेष चोर करते हैं और ऐसे घात प्रतिघात करते है कि जीवका उस सीमा के बाहर जाना असम्भव हो जाता है ॥६॥

देखा वह सुन्दरी कैसी वटचवी है। भला उसके तिरिया चरित्र का कहीं आदि अन्त हो सकता है ? उसकी मुसुकान उसकी चितवन जीव को विवश कर देती है ॥७॥

आप सब तमाशा देख लिये और तिल का मर्म पा गये। अब आप उस तिल पर पहुंचिये। मैं मोह का परदा हटाता हूं। उस सन्त ने वैसा ही किया और निहाल हो गया ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकेर छारक सोति पिराऊ वैस विजनिया पारे झाणु
पैकरि पाहुबते चणे पणे चयु उदयेति जंभु दात ॥

इस अष्ट पदी का अन्तिम चार पद पाटाम्बर पर लिखकर शून्य स्थान में होमधूम पर सेरावे और पाठ करता जाए। पूर्णमासी की रात में तो सात बार करने पर मोह निद्रा भंग होगी। रिपुतस्कर भाग जायँगे।

अष्ट पदी ॥ ६५ ॥

भ्रमुम्य भामूणैह जुप मगथोप मुहका जाज झुप ।
कप्पाहु जिउणा जंभिणुप पणवारू बिनिटा हाणहुप ॥१॥

चिघुरा चिथा जिउ भासिणी उफतां उफातां घासिणी ।
लपई लुपैटा गासिणी मिहठा मुहैणा कासिणी ॥२॥

तमज्रीम जुबणा माहिटी उतफांग सोभा थाहिटी ।
तणवीर तुज्जा बाहिटी झरकम खुमंता काहिटी ॥३॥

हहुणी हुणी साणू फबण बिरथी पिथी फरहम जमण ।
खुपखास तुहिणा सोहवण पणभासु झपणालू थपण ॥४॥

धुमहा उबासिर अण्णती उकणा पुजोझा चण्णती ।
बरचस बवीचण तण्णती मउफा झबण्णा जण्णती ॥५॥

आहू बसी थाहूणसी हुमिघा पथट्टा जूणसी ।
ईवत्त छपणा पूणसी हविहामु जत्थू बूणसी ॥६॥

बिनिटा बिघट्टा वैपुवी जपटांगु तौहिप सावुवी ।
त्रसणोर तहिया तामुवी हैहोसु दवणा ठाहुवी ॥७॥

तरभूज बहुण बाहुणी णपधा पधा पिझु सामुणी ।
केसण्ण विधा धापुण संठा ठसाणा चाकुणी ॥८॥

अर्थः- बीनी नाम की एक विप्र कन्या जो तन्त्र विद्या में निपुण थी और जो अमा की रात्रि में चक्र नायिका का काम करती थी जो भोग विलास में कभी तृप्त नहीं होती थी। सुयोग्य नायक की खोज में यहाँ (काशी में) आई ॥१॥

वह थी बड़ी सुन्दरी और युवावस्था के मद से मतवाली होकर विचरा करती थी छत के ऊपर पलँग बिछाकर सोते हुए एक नव युवक पर उसकी दृष्टि पड़ी और उस पर वह मोहित हो गई। उसी निद्रित दशा में उसे उठवा कर माँझा में ले गई ॥२॥

उसे चक्र नायक बनाकर वह कई दिनों तक यक्षिणियों के साथ काम सुख भोगती रही। इधर उसके माता-पिता अपने एक मात्र पुत्र के वियोग से विलाप करते करते उन्मत्त से हो गये। उनके दुःख की सीमा नहीं रही। सब उपाय से थक कर वे आश्रम पर आये ॥३॥

उनके विलाप को सुनकर स्वामी जी का हृदय करूणा से भर गया। सब वृत्तान्त जानकर स्वामी जी ने उन्हें उसी माँझे में भेज दिया जहाँ दिन भर वह युवक मृतक समान पड़ा रहता था ॥४॥

स्वामी जी ने उन्हें बता दिया था कि सिरहाने जो फूल रखा है उसे उठा कर सुँघा देने से वह जीवित हो जायेगा। उन्होंने वहाँ जाकर अपने पुत्र को पाकर वही युक्ति की। वह नव युवक उठ बैठा। उसे वे हर्ष पूर्वक अपने घर ले गये। परन्तु बीनी बहुत कुपित हुई ॥५॥

वह क्रोध में भरी आश्रम पर आई। यहाँ उसका तन्त्र मन्त्र कुछ भी नही चला। उल्टे आश्रम के प्रभाव से उसे निरय के घोर भयानक दृश्य दिखने लगे, अपने दुष्ट कर्मों का परिणाम देखकर वह बहुत भयभीत हुई। और त्राहि त्राहि पुकारने लगी ॥६॥ उसे एक दृश्य तिर्यक तमीचर का दिखाया गया जिसे देखकर वह हाय हाय मारने लगी। और गर्भस्थ जीव की भाँति कहने लगी अबकी स्वामी जी इस संकट से तो बचाइये फिर कभी भी दुष्टाचरण नहीं करूँगी ॥७॥ स्वामीजी ने तत्काल उसका कष्ट दूर कर दिया। वे दृश्य अथैय गये। वह सावधान होकर आई। चरणों में पड़ी। परमार्थ की भिक्षा माँगी। उसे उपदेश देकर विंध्यक्षेत्र में जाकर तप करने की आज्ञा दी ॥८॥ अनुष्ठान विधि-इयं स्वार्पणास्टकं मोधं कुसं पहे णुंता थप्प माकुल मिसंजा पथं च गेया सा भरिणा सुत हिया छिधंता मुचौ लहे ॥ इस अष्टपदी के अक्षरों को एक एक करके तुलसी वा विल्व पत्र पर लिखकर गंगा जी में सिराये देव पक्ष में प्रतिदिन तब यक्षिणी डाकिनी कारमन आदि से रक्षा हो ॥

अष्ट पदी ॥ ६६ ॥

विह सोपणा डापीनसू काबास भाणु समीणमू ।
झुटलौह जुबदा कीणगू चुपिलाणु तौपा हीणजू ॥१॥

तप लैसहा बुद हाफिणी उक टाँगु माथम जैमिणी ।
हुट सुट सुटावण काठिणी पिघु पाहुणी चिद पाणिणी ॥२॥

ढिप ढांप जशुला दगमहर छिभु जंभ तौरी मह गसर ।
लौखम रूणाजी टगमटर औणास कुंभा झग पफर ॥३॥

मिगणर सिणा बिलभामभुर मझतीष डुकणा सामसुर ।
उत्कण्ण लूहा मा बठुर असुणाषि भा उप गामबुर ॥४॥

थोंगाहुणा सिब औमुदी विकरान बथणा सौमुदी ।
टिपटमर गोमिल झौमुदी अविरार बम्हं चौमुदी ॥५॥

तह वीजु डुमका दीदगर उफहाणु जमुई सापुणर ।
तिपु काटु हैं सुप हपुड़ पर क्विउपी गमस पाहव जवर ॥६॥

गफणार ढाहा जंतलू उमिसेर योहुणा मेतलू ।
मबुई भुमत्रा सेतलू चिम्ह मिकणा उकमेतलू ॥७॥

छठु डिंघुणल माणरी बिपलूण करटा धाणरी ।
कचिलेष जुबणा हाणरी मचिधेपु हउशा टाणरी ॥८॥

अर्थः—चिपलूणकर नामक एक मीमांसक यज्ञ कराने के लिये दक्षिण से यहाँ (काशी में) आये थे। वे बड़े भारी विद्वान कर्मनिष्ठ समझे जाते थे। उनके आगमन पर बड़ा सम्मान हुआ था। यज्ञ समाप्त करके वे आश्रम पर आये ॥७॥

पहिले तो उनको दर्शन नहीं हुए। परदे से बातें हुईं। शास्त्री ने पूछा—जैमिन ऋषि ने आम्नायस्य क्रियार्थत्वात् आनर्थक्यम् अतदर्शनम्" लिखकर वेद की ज्ञान गाथा को निरर्थक क्यों कहा है ? इस सन्देह को दूर कीजिये ॥२॥

स्वामी जी ने कहा—वेद से ईश्वर का कोई सम्बन्ध न स्वीकार करने के कारण और जन्म मरण के चक्र को स्थिर रखने के कारण जिससे मन्त्र मूर्ति देवगण का सम्बन्ध नर लोक से बना रहे ऐसा किया गया है ॥३॥

इस उत्तर को सुनकर शास्त्रीजी कुछ देर तक चुप रहे। विचारते रहे। फिर उन्होंने कहा—भगवन् ! इससे तो मैं और भी चक्कर में पड़ गया। कुछ भी समझ में नहीं आया। दया कीजिए ।४॥

स्वामी जी ने पूजा पर से उठकर एक पुष्प दिया और कहा कि इसे देखिये। उन्होंने देखा कि उस आठ पंखड़ी वाले फूल में दो पर किसी सुन्दरी के स्तन, दो पर तराजू के दोनों पलड़े, दो पर नवांकुरित वनस्पति के दोनों दल और शेष दो पर सूर्य और सोम की छटा लहरा रही है ॥५॥ बीच में भगवान् श्याम सुन्दर बालरूप से विराजमान, यह दृश्य चकित चित्त से घड़ी भर देखने के पीछे वे फिर कुछ पूँछना ही चाहते थे कि शंख बजा। उस दिव्य निनाद ने शास्त्रों का अभिप्राय बताकर सब संशय दूर कर दिया, इस युक्ति से गहन विषय का बोध कराने के लिये उन्होंने फिर२ प्रणाम किया ।६। कहने लगे, सुने बहुत थे, जाना और समझा आज। आप इतने बड़े महात्मा हैं यह बात हम अनुमान भी नहीं कर सकते थे। स्वामी जी ने कहा—कर्मवादी काल के प्रभाव को ("बहूनीन्द्र सहस्त्राणि देवानाञ्च युगे युगे। कालेव समतीतानि कालोहि दुरतिक्रमः) जब समझते हैं तब अपवर्ग पर जुटते हैं ॥७॥ इस प्रकार सत्संग करके, बहुत दुर्लभ ज्ञान प्राप्त करके बार बार स्वामी जी की स्तुति करते हुये चिपलूणकर जी विदा हुये। उस समय उनके मुख मण्डल पर अपूर्व तेज था। और उनके हाथ में वही अपूर्व फूल ॥८॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके वे हीभाद्यम से उदे च उभया सतेम जाथुंग से पतेह दस्ति भिरांभितेप ओजही पतीजी सामुपचे ॥ इस अष्ट पदी के नित्य प्रातः पाठ से शास्त्र का बोध होने लगता है, तर्क जन्य संशय मिटते हैं और अन्तमें आत्म बोध भी होता है।

अष्ट पदी ॥ ६७ ॥

विणवी बरंभा बाड़सह कुपणी कुअंभा जीतवह ।
माटी घड़ा झिड़ ट्राट कह धीची जुवर्रा णावपह ॥१॥

पह्नीम जेमटा जाहिबी मपराम जणहा लाहिबी ।
मुणवां मुमैषा ताहिबी भुणबाहु चभणा णाहिबी ॥२॥

टारिफ सुभानिप जायफत ढिण गीच जुहिला सारूकत ।
मिमिधाण जेपुणा वाडुभत तजफीण ठेका बंबिरत ॥३॥

चफरसिस दिण्णा किहमुषट झिपतां पु जौणा सिबपिसट ।
मक एमि टैरो झामिरट मुगलाव तिडड़ी सरसिलट ॥४॥

तभिनोग जकुआ जेम्हणा णुरता मुतासिप हेम्हणा ।
हौबट जफीता तेम्हणा उँचाणु गुचवा ब्रेम्हणा ॥५॥

खघपौत जौपिम ढाबुरं हरूलाभ चौदे आभुरं ।
मतखम्म जाउर गागुरं ठणयारि झुगुता णाचुरं ॥६॥

चौकीम चूची चेचड़ी भगसा अबेला खेचड़ी ।
हम हौस णणकिन बंघड़ी हौंगी हुगी कणि फेचड़ी ॥७॥

विणवीं जहाँ दी खुभ खुसण मिसड़ी लुबादा जाहुसण ।
अलपस उरुसणा झंपुसण णमड़ी लहाटी मंचुसण ॥८॥

अर्थः— विनय मुनि चौरासी वाले ब्रह्म जिज्ञासा के लिये भटकते हुये सिन्ध से यहाँ (काशी में) आये। जहाँ वे जाते थे वहाँ के पण्डितों, यतियों साधुओं से वही प्रश्न छेड़ा करते थे। परन्तु किसी के समाधान से उनको सन्तोष नहीं होता था ॥१॥

प्रसिद्धि सुनकर वे आश्रम पर आये। और चौखट के पास बैठ गये। और कहने लगे—दयानिधे! क्या आप मेरे मन में ब्रह्म की स्थापना कर सकते हैं। पुस्तक प्रमाण नहीं चाहिये और युक्ति प्रमाण निश्चयात्मक हो नहीं सकता ॥२॥

भीतर से आज्ञा हुई-विश्वनाथ जी की पूजा करके यहाँ आइये। तब समाधान किया जायगा। मुनि ने कहा, आपके कहने से पूजन करने जाता हूं। नहीं तो आज तक किसी देवता की पूजा नहीं की ॥३॥

पूजन करके जब वे फिर आये तो एक विल्व पत्र लेते आये उससे यह ध्वनि निकलती थी। येहास्ति यच्चनास्ति सर्वंतदस्मिन् समाहितमिति ॥४॥

वह सिन्धी कान देकर उसे सुनाता था। चकित होकर मुसकराता था और फिर गम्भीरता पूर्वक विचार करने लगता था। इतने में परदा हटा और महाराज के दिव्य दर्शन हुये। वह मुनि उस छबि में तन्मय हो गया ॥५॥

महाराज ने पूछा—बेल की पत्तियाँ क्या पढ़ती हैं। मुनि ने कहा—धर्मावतार शिव जी के स्पर्श से ये दिव्य नायिकाओं की तरह कोमल स्वर से वेद का मन्त्र पढ़ती हैं। गम्भीर उपदेश देती हैं कि जो कुछ है अथवा जो कुछ नहीं भी है उन सबमें वह समाहित है ॥६॥

स्वामी जी ने कहा—अब आप का सन्तोष हुआ कि नहीं। मुनि बोला—पूर्ण सन्तोष में एक मात्रा की कसर है। खेचरी मुद्रा से पूर्ण अनुभव होता है। पर जब वह मोहन मोहिनी डालता है तब ज्ञान की एक रसता जाती रहती है ॥७॥

कसर काहे को रहे। इस विचार से स्वामी जी ने उसके शिर पर जल के छींटे मारे। एक क्षण लिये वे वेहोश होने पर आप्त काम मुनि ज्ञान को प्राप्त होते ही चरणों पर पड़कर विनयी नाम सार्थक करके आनन्द पूर्वक अपने देश को गये ॥८॥

अष्ट पदी ॥ ६८ ॥

गग्गौण गड जो राजणे पीपर पपा पप टाजणे ।
णुखतां गदामी माजणे सत्ति सबैणा आजणे ॥१॥

तगियार ह्वांणा जयतु तं मिहटामिणासिल वयतु तं ।
जनुषा जवैसन लयतु तं झवरी विणीसा पयतु तं ॥२॥

णिपधूस मौ चणु जीपड़ा मेकसुम्म साबुज हीथड़ा ।
बर्वासिगु णाणा तीभड़ा आगोर गमठा सीजड़ा ॥३॥

हिणुआस जोभी जाटुसी उपणंग घाघा आटुसी ।
निउवाणु माकर वण उसी मच्चगाम गोइंमा हुसी ॥४॥

कह्फीणु जनखा गेरूआं ताभदसि घेटा घेरूआँ ।
धमणी जुअइठा लेरूयाँ णखचोर सोढ़ा वेरूयाँ ॥५।

डडचो झमैया कासुया सभिता णुतासिणु हाभुया ।
अमफिल फुलाहुस कागुया जामुश विराणिब जामुया ॥६॥

जिउगी उजागी उम्मगी पावेट पिउटा कुम्मगी ।
ममउक झिवटा जुम्मगी णाकंव जुवणा सुम्मगी ॥७॥

झिउण गि पासा आणरण जिमुटा जिरमहाणा करण ।
हिबहूपिरं मिह जह जरण मक्कुफाखुफा सीतं वरण ॥८॥

अर्थः– गागरौन गढ़ में एक प्रतिष्ठित राजवंश मुकुटधर पीपा जी शक्ति की उपासना में ऐसे तत्पर हुये कि साक्षात् जगदम्बा ने उन्हें दर्शन देकर वर मांगने को कहा राजा पवर्ग से तो सन्तुष्ट था' ही अपवर्ग की याचना करी ॥१॥

देबी ने कहा–वत्स ! तेरा मनोरथ सुफल फलेगा परन्तु तू जान कि अपवर्ग की प्राप्ति जगत्पति भगवान् शेषशायी की आराधना की अपेक्षा रखता है। सो तू चक्र पर स्थित काशी को जा ॥२॥

वहां श्री मन्नारायण नर शरीर धारण करके मुक्ति का सदाव्रत सत्र खोले हुये हैं। उनके द्वार से कोई भी विमुख नहीं फिरता और वही तुम्हारे वास्तविक इष्टदेव हैं। यह कह कर देवी चुप हुई थीं ॥३॥

राजा मुक्ति को भूल कर मुक्ति दाता के दर्शन के लिये बहुत लालायित हुआ। परन्तु केतु के उदय के समान राजसी वैभव आड़े आगया। तब वैष्णवी माया प्रेरित प्रेत प्रपीड़न ने उसे ऐसा सजग औरसचेत कर दिया कि दृढ़ निश्चय रूपी उदयाचल पर सपरिकर प्रस्थान रूपी सूर्योदय हो गया ॥४॥

आश्रम पर टिके हैं। दर्शन नहीं होते। कुछ विनती करते हैं। सुनवाई नहीं होती। प्रिय शिष्य (श्री अनन्तानन्द जी) की प्रार्थना पर आज्ञा हुई। कह दो कूँयें में कूद पड़े। गुरु शासन से विकार रहित हुये पूर्ण रूप से असंग भाव को प्राप्त सच्चा मुमुक्षु विना कुछ विचारे ही कूप में कूद पड़ा ॥५॥

हा ? क्या अनर्थ हुआ। कहते हुये सब लोग जगत पर चढ़गये और झांकने लगे। जितने मुण्ड उतने प्रकार के दृश्य कूप में दिखाई पड़े। परन्तु कोई भी उसके वर्णन करने में समर्थ नही हुआ। यह चरम दीक्षा नहीं तो परम दीक्षा अवश्य थी ॥६॥

कूप से निकल कर श्री चरणों में प्राप्त हुये। गुरू ने कर कमल फेर कर और दीक्षा देकर कृतार्थ किया। उस समय का आनन्द अपूर्ण ही था। सब को स्वामी जी के दर्शन प्राप्त हुये। वे लोग धन्य थे ॥७॥

अनन्तर वे राजर्षि सत्संग और गुरू साधु सेवा का सुख लूटते रहे। उन के त्याग वैराग्य का यहां (काशी में) बड़ा हल्ला था। वे लोग—वह समय धन्य था ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं सेमु पहिजा उण साजुसे हुफे तस उपी मुण उर वासि भरे तरे साणो वीदे थुं मचे महिरो परीचा ॥ इस अष्टपदी के शतशः पाठ से राजसी वृत्ति वाले मुमुक्षु के मन में भी वैराग्य का उदय होता है ॥

अष्टपदी ॥ ६९ ॥

सहजिहृहारू धाहरू आफीत उहुता गाभरू ।
णाचखेम टाणा आमरू हौतीणु डिहुड़ा भासरू ॥१॥

तहविज्जयां णिफ भाभुरण कहटीट कूबहिट चाभुरण ।
णपथेग दिहवां डाभुरण मक्षलीस बेंउटण काभुरण ॥२॥

लबखीर रुहमानू रूही उणडास उसणा चूभुही ।
लहगंति रेका बूचुही लफणेब भागी ऊबुही ॥३॥

किपिलाणि धोरे घावुरे णकभेर हुवितां भादुरे ।
इमुलाकि हुंफी णादुरे उकही रूपाह्ो फादुरे ॥४॥

सामी सुरम्भी भादई मुकुणा घिपाटी कादई ।
णिकुड़ेस तैसठ सादई पिलुतांसु भाभुण च दई ॥५॥
थउसीणु हौरिस हूरिसा मजफूम महवा हूपिसा ।
फटराण दिउणा ऊमिसा णिकुहांबु दाभुण सूमिसा ॥६॥
दर्वालघु ड़ासन झहणुए इस्मण चिणापिण रहणुए ।
पझटांबु धेमा गहणुए कुतभाँ खुमांधी सहणुए ॥७॥
विहगा भुटाडिल डिम्भडू मबवा चुवा क्रप भिउज्जडू ।
पिस खासि जंसप इच्छडू कंणा पगाहण लिच्छडू ॥८॥

अर्थः— एक बार अर्द्ध रात्रि के पीछे सन्निकट वृक्ष से देव वाणी में किसी ने आर्त बचन कहे। दया कीजिये दयानिधान ! मुझ दास पर जो आपके चरणों में पहुंच नहीं सकता। क्योंकि वहाँ प्रेत पलायन मन्त्र का अखण्ड निनाद होता रहा है ॥१॥

हे दक्षिण से उत्तर ले जाने वाले ! मुझ दीन पर दया कीजिये। बहुत दिनों से पड़ा हूं। कृपा की बाट जोह रहा हूं। जब नहीं पूँछ हुई तब आज विकल होकर पुकार मचाई है ॥२॥

जागने वाले सुनते रहे पर समझ नहीं सके। अकेले स्वामी जी ने समझा और तुरत उस पर दया दृष्टि फेरी गई। वह उस योनि से छूटकर पुण्य भोगने के लिये स्वर्ग को गया ॥३॥

अनिष्ट की गई कल्पना के कारण प्राप्त हुई प्रेत योनि से मुक्त होते हुये देखकर एक ब्रह्म राक्षस उसके बिमान के पास जाकर उसे भी साथ में चलने के लिये बड़ी प्रार्थना करने लगा ॥४॥

स्वामी जी के चरणों में जावो "वही तुम्हारा उद्धार करेंगे" यह कह कर उस कवि ने अपना पीछा छुड़ाया तिस पर भी जब वह नहीं मानता था। तब विमान चालकों ने मार भगाया ॥५॥

वह राक्षस हार कर मार खाकर रेती में गिरा। उस समय एक साहु का लड़का वहाँ शौच को गया था। वह राक्षस उसीके शिर पर बैठकर उसके घर आया और तंग करने लगा ॥

उसके घर की सब स्त्रियों को नंगी करके उनके वस्त्र फुँक दिये। साहु बड़ा धनी था। उपद्रव शान्ति के लिये बहुत खर्च किया पर कुछ लाभ नहीं हुआ ॥७॥

अन्त में उस प्रेत के कहने से वह बालक आश्रम पर लाया गया। यहाँ उस की मनोकामना पूरी हुई। वह प्रेत योनि से छूट गया। और मिश्रित कर्म भोगने के लिये जन्मा ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टके बीहं उदी हन्ते मचु मिणा पुरेम सह खुचा मतुंग

भी हारू जुंक पेक थिले पसण जहीरा ॥

इस अष्टपदी को पितृपक्ष में पीपल के पत्ते पर लिखे और प्रेत योनि में प्राप्त अपने प्रिय सम्बन्धी का नाम भी एक पत्ते पर लिखे गोरोचन से और गंगा में सेरावे तो महालय के दिन उसका उद्धार हो जावे ॥

अष्ट पदी ॥ ७० ॥

आंकि फुणा झूपोरिसां काटेय पौंघा धोहिसा ।
नचटा खुटा पुण बोहिसा असराक उसटा कोहिसा ॥१॥

हरफुण जिहोटर सामभर तुघिलाम झौरा झाससर ।
अभुहिपु जुपैंटा गामघर तहतीह किउरा नामबर ॥२॥

तामे दिघर गूँ बासुनत झिवड़ा हुगातं थामुसत ।
किपटा किटा हिण गाभुरत बिचपा पुपरटी आमुहत ॥३॥

टिकुणा वुणा भी साभुरम् बुकणा हुणाफिल जाणुरम् ।
अघुआ पुगासिल छातुरम् णिषुत्तं सुपंढो माजुरम् ॥४॥

फिहदोथुड़ा गाणी मझा खहणो जुणौयत णाकझा ।
टमखीस जुरांगी तझा उझबुक णुगा रिंगा फझा ॥५॥

टफगाभिरम्मा झवरि अणा मसगारू गभणा डामरण ।
णिचुका फिरंया मद गहण अलकाभि दैंबा जत घपणा ॥६॥

जिलगी जिगीटा हमदुदी बिजुटा भुठाढणा चमहुवी ।
टिपरा टिरैंता खम खुदी पगपी पुरंबा टम जुदी ॥७॥

चौमस चितंबर सूदमा अपसर गुसर काऊदमा ।
णाप सिहुरा पिग बूदमा अफहाणु गुमया जूदमा ॥८॥

अर्थः— असराक नामक देश के रहने वाले, कभी झूठ न बोलने वाले, पृथ्वी पर सोने वाले और केवल यव की चपाती खाने वाले परमार्थ की खोज में निकले हुये मार्ग में संस्कृत का अभ्यास करते हुये एक अमीर आये ॥१॥

उस अमीर के दाढ़ी मूँछ नहीं थे। अभी नवयुवक मालुम होता था। परन्तु उसकी आँखे अभी विकार दर्शन से कलुषित नहीं हुई थी। वह घोड़े की सवारी करता था। और उसका नाम "नामवर" था ॥२॥

उससे कहा गया कि स्वामी जी का दर्शन तुमको नहीं प्राप्त हो सकता। हाँ शंख ध्वनि को सुन सकते हो और सत्संग में बैठकर परमार्थ की जिज्ञासा कर सकते हो इतना भी कुछ कम लाभ नहीं है ॥३॥ उसने उत्तर दिया।

कुछ देर तक प्रतीक्षा करने के अनन्तर शंख ध्वनि हुई। श्रोताओं को स्व, स्व प्रवृत्ति और प्रकृति के अनुसार अमित लाभ हुआ। अमीर तो उस आनन्द में इतना निमग्न हुआ कि एक पहर बाद वह वास्तविक दशा में आया, जब सत्संग का समय आ गया।४

उसने अभ्यास की हुई देव वाणी का आश्रय लेकर उस आनन्द की यथा शक्ति महिमा गाई। और प्रश्न किया। उस सच्चे स्नेही (महबूब हकीकी) के साथ तन्मयता प्राप्त करने का सबसे सरल उपाय क्या है। इसके उत्तर में परदे से यह आवाज आई हे भाई—उस सच्चे स्नेही के साथ तन्मयता सच्चे स्नेह से ही प्राप्त हो सकती है। यही सबसे सरल उपाय है ॥५॥

यह उपाय सबको मालूम भी है। क्योंकि लौकिक व्यवहार में जहाँ जहाँ तन्मयता की आवश्यकता होती है वहाँ वहाँ मनुष्य इसी उपाय का अनुसरण करता है। उसे इस उपाय में पूर्ण विश्वास भी है। प्रपंच के मूल स्वरूप कामिनी कांचन में तनमयता की अद्भुत छटा का दर्शन सभी करते हैं ॥६॥

समुचित उत्तर को सुनकर वह अमीर बहुत प्रसन्न हुआ। और फिर पूछा—भगवत् के सम्बन्ध मे जीव-ईश सम्बन्ध स्थापित करने में इस सरल उपाय का अनुशीलन कहाँ कहाँ हुआ है। परदे से फिर ध्वनि सुनाई पड़ी। सर्वत्र हुआ है। क्योंकि दूसरा उपाय भी नहीं है। भारत में इसका पूर्ण विकास हुआ है ॥७॥ अन्त में उसने कहा—क्या मैं आप की छत्र छाया में रह कर इस विद्या को प्राप्त कर सकता हूं। इस पर आज्ञा हुई हाँ कर सकते हो। इस पर निहाल होकर वह गया और काशी में स्थायी रूप से बस कर नित्य सत्संग में आने लगा। और एक बार दर्शन का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।८।

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर वातुं कुराय टिच धामिणी सहोजुपाते हपेत कुसुमे कुजं सभि जीहूस महेइवार केण थिकाह पजास ॥ इस अष्टपदी का अभ्यास सत्यनिष्ठ होकर उषा में करने से भगवत से वास्तविक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है ॥

अष्ट पदी ॥ ७१ ॥

निम्मात डाणुग द्यायबी भजणोक भाणुक सातवी ।
जैखूर मिजगा लामबी तभिणेर डिगसर तापबी ॥१॥

होतेम हुबहा णगिणकर उपजंसु काणा चपिणकर ।
इगलाज उसवण दछिणकर उफसा फसारिप पठिणकर ॥२॥

हटिकस तणाघिन फाहिसा चरिबा गिबाबुण गाहिसा ।
धणिफुर सिवणगा माहिसा लैउण उसंसा थाहिसा ॥३॥

डिरूणा विघंडा पंुजिरस उहमम उमम जवझंुविरस ।
अघटण गिदंपा संुतिरस मझबिह रूफंटा हुसिरस ॥४॥

हिमुरार जोउआ जमिकधा णिचुबा सिबाजइ बमिकधा ।
खुरताण जहबर अभिकधा इफराज दिअमा गमिकधा ॥५॥

किबराणिया हिबराणिया पुतणाणिया संथाणियय ।
विसुभाणिया जुवताणिया पिच्चुणागिया हंविसाणिया ॥६॥

पसिघाटिणप उझपाणु अप ढिकुरंसिभा हुपटाणु जप ।
कवली कुटी कुटवाणुसप अमरेथ डंडा याणुरप ॥७॥

णिउटा मुटाणिस धातुणत किभु जिभु गुताखट मासुपत ।
चिण गु भिजावण सापुरत घिवसार काहट मापुसत ॥८॥

अर्थः— निम्बार्क सम्प्रदाय के एक भजनानन्दी सन्त बहुत बड़ी यात्रा तय करके स्वामी जी के दर्शनार्थ आश्रम पर पहुंचे। ध्यान में उनके गुरू ने उन्हें उपदेश दिया कि भगवान् के साक्षात् दर्शन से तुम कृतार्थ हो सकते हो ॥१॥

परन्तु ऐसा संयोग लगा कि औरों को जहाँ कई दिन प्रतीक्षा करने पर दर्शन की प्राप्ति होती थी वहां उन सन्त के पहुंचते ही पट हटा और दर्शन पाकर उनकी सारी थकावट दूर हो गई। और वे कृतार्थ हो गये ॥२॥

दर्शन के प्रभाव से निज स्वरूप में प्राप्त होकर उन्होंने स्वामी जी को देव-मुनि से सेवित दिव्य सिंहासन पर विराजमान देखा। वहाँ उन्होंने अपने गुरू को भी देखा जो शिष्य को चरणों पर पड़ने के लिये संकेत कर रहे थे ॥३॥

उस संकेत को समझ कर ज्योंही सन्त ने चरणों पर मत्था रखा दिव्य दृश्य एक दम बदल गया। कुन्ज वन में बाँसुरी बजी। गोपियाँ एकत्र हुई। रास विलास आरम्भ हुआ। गोपी मोहन ने छमक कर उस सन्त का हाथ पकड़ लिया ॥४॥

मुरारि के रूप में और स्वामी के स्वरूप में कुछ भेद न पाकर वे विस्मित हुये। तुरत फिर दृश्य बदला आश्रम, का दृश्य उपस्थित हुआ। वे सन्त सँभल कर बैठे। उसी समय परदा आ गया ॥५॥

भीतर से आवाज आई। बाबा जी आप के गुरू महाराज ने जो ध्यान में कहा था और अभी संकेत किया है उसे आपने समझा ही होगा। अब और जो सन्देह रह गया हो उसे प्रकट कीजिये। जिसमें आपको पूर्ण सन्तोष हो ॥६॥

प्रेम-विह्वल-सन्त पहिले तो कुछ बोल ही न सके। बड़ी कठिनता से उन्होंने कहा कृपा निधान! मुझे सब प्रकार से सन्तोष हो गया। कुछ भी सन्देह शेष नहीं रह गया। भला आत्मा-भानु के उदय पर मोहान्धकार कहीं टिक सकता है ॥७॥

हाँ! एक विनय है आज्ञा हो तो कुछ दिन काशी में रहकर भवदीय दर्शन और सत्संग से लाभ उठाउँ। मैंने जान लिया कि इष्टदेव और गुरूदेव में कुछ भी भेद नहीं है। उक्त सन्त की प्राथंना स्वीकृत हुई ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टकं के युन धेणिक सणुगते चभिरदे भेमु मारूले महो-

पहित सुंभरे ख विगमा मूअरि ॥

इस अष्टपदी को पढ़कर मुमुक्षु नित्य गुरुदेव का ध्यान करे तो भेद बुद्धि का नाश हो और गुरु एवं नारायण में अभेद बुद्धि स्थापित होने से परमार्थ पथ सुगम हो ॥

अष्ट पदी ॥ ७२ ॥

कुण कुण कबीरा कापड़ी रौरक जमाभे हःपड़ी ।
नैकुंठि जंठी धापड़ी अबही उहीसा तापड़ी ॥१॥

णिचुखाण कोदा फातिवण तचटा चुपैटा णातिसण ।
हपुटा जहैणा दिकतिथण उच्चुई बगौरा जाति हण ॥२॥

मदसो मदीसो मुणिरधा पहिटा पिटासिण तणिसधा ।
जम्हुई झुविरहा सणिपधा उपहा पही गुस कणिपधा ॥३॥

माडोर हमुटिस आमुरिस पवघी तडंधी सामुरिस ।
हैं हाँ वुदैया गामुरिस चकरा सोणहला फामुरिस ।४।

लायब लयूबा जोषिणी हुस्सा हुसैणा पोषिणी ।
मसहो ममूसा धोषिणी कचभातकी ठाबोषिणी ॥५॥

आजस उझसपस भिस्सुहा जिउघा सिऊघा जिस्सुहा ।
टिउणा दुरंती गिस्सुहा सिवणी सुरंजा सिस्सुहा ॥६॥

मछती मुछंती आउरण डाबोर डिणुटा फामुतण ।
हरणा रमंती लाभु चण कुददी बभूरी जातुपण ॥७॥

ऊबी णबी उम्म आलुते कासीद दिपटां साजुते ।
हसड़ी गड़ी धम धाबुते हिंदा मुसलमां बासुते ॥८॥

अर्थः– "कबीर जुलाहे ने कण्ठी माला तिलक छाप धारण कर लिया है, और आप का शिष्य बतलाता है। क्या यह बात सच है ? यदि ऐसा ही है तो बड़ा अनर्थ हुआ" इस प्रकार कुछ काशी के विद्वानों ने आकर स्वामी जी से निवेदन किया ॥१॥

इसके उत्तर में स्वामी जी ने शंख ध्वनि की जिसके प्रभाव से द्वेष की आग बुझ गई। और उनका क्रोध शान्त हुआ। जब वे सावधान होकर विचित्र मुद्रा में बैठे, तब स्वामी जी ने कहा ॥२॥ यह बात सत्य है और वह मेरा शिष्य है। भगवान सबके हैं और भगवत् शरणागति का अधिकार सदा से सबको है। भगवान् अपनी कृपा से किसी को भी वंचित नहीं करते। भगवत् सम्बन्धी वस्तुओं पर सबका समान अधिकार है ॥३॥ इतने में वे (कबीर जी) स्वयं आ गये। उनके मुख पर ऐसा प्रकाश था कि उससे प्रभावान्वित होकर वे लोग सबके सब उठ खड़े हुये। और परदा भी हटा दिया गया, साक्षात् दर्शन ने उनके अन्तःकरण को स्वच्छ और प्रकाशित कर दिया ॥४॥

जो दिव्या से पैदा हुआ, ब्राह्मणी का दूध पिया-हुसेन वंशी माता द्वारा शुद्ध सात्विक भोजन से पला और जिसने तकी के प्याले को अनिच्छा पूर्वक लौटा दिया, उसको हेय दृष्टि से केवल वस्त्र व्यवसाय के कारण देखना मिथ्या अभिमान ही का काम है ।५

ऐसे सत्पात्र को जो शैशवास्था में अपने माता पिता का परिचय दे चुका है मोक्ष मार्गीय दीक्षा से वंचित करना किसी भी समदर्शी जगद्गुरू के लिये उचित कार्य नहीं है। हमने व्यर्थ ही महात्मा को कष्ट दिया। ये बातें उन विद्वानों के शुद्ध हृदय में आपसे आप स्फुरित होने लगी ॥६॥

उन्होंने कहा असंयत बुद्धि के कारण हमारे मन में विकार उत्पन्न हो गया था। जिससे उत्तेजित होकर हम यहाँ आये। परन्तु राम नाम की रमु क्रीड़ा ने हमारी व्यवसायिनी बुद्धि को ठिकाने लगा दिया ॥७॥

अब हमारे हृदय में किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है। और न सन्देह रह गया है, इसलिये उभय महानुभावों से हम क्षमा माँगते हैं। इस प्रकार प्रार्थना करके वे अपने अपने घर गये ॥८॥

अनुष्टान विधि—इयं चार्पणास्टके लचुकरी मातुभि चुमरेणा उजसि पशु माणु परो पिह पाचणा गिर समापदे पिसं भरेमु ॥

इस अष्टपदी को भृगुवार की रात में चन्दन से लिखकर कदली पत्र पर सात बार गंगा में सेरवाने से भगवतापराध का दोष मिटता है ॥

अष्ट पदी ॥ ७३ ॥

कासी धुरहड़ा दातमण मप दूध नाथ पितर पसण ।
धाँधू धवैरी आभतण णूखी णबरदा चाटरण ॥१॥

उमधे फ़ैदारे चागरी पनिऊंश नागर नागरी ।
तेणु गुफा जुश आगरी णौ रोहुता पिह टागरी ॥२॥

जेषा जुपा बस ओरधा उहघा लबरडा भोरधा ।
मिहणण पुगासिर पोरधा तिघुलास जंबा डोरधा ॥३॥

पज्ञताम का डिपलैंणि अस तह फेंज लुगसर रैंभिणस ।
अमरोह झीपाणा सिरस चघदेर डिहणा वाहिचस ॥४॥

विभसं भुसंणा धिरजुटी पँघांबरे बा थिरहुटी ।
चभिसार जे उज्ञाटिर छुटी तमिणोर दीमा गिरमुटी ॥५॥

फिउभस बुकाटिह अहसरी जसुनाप लिहुका परतरी ।
चामुच जमुच भो अगपरी णावा णुवापिर मघज्ञरी ॥६॥

चविलेंह झैमुठ णादसे उगहाट ओपुट थादसे ।
पिउ पितु पखेसा जादसे टमि रीछु णैषा पादसे ॥७॥

तसु दाघ चाफुण थाहरू मिघगाण मौषा काहरू ।
जैणा गमीछा आहरू उजपं णुपं सण गाहरू ॥८॥

अर्थः— काशी के धवरहरा स्थान में दूधनाथ नामक एक ब्राह्मण रहते थे। जो बड़े प्रेम से देव तुल्य सेवा अपने माता पिता की करते थे। उनकी निष्ठा अपूर्व थी। इस पुनीत सेवा में संलग्न रहना ही उनको एक मात्र आनन्द प्रद था ॥१॥

इसी तरह केदारेश्वर पर एक नागर ब्राह्मण की स्त्री बड़ी पतिव्रता थी। वह अपनी अन्तरात्मा को पति की अन्तरात्मा के साथ दुग्ध शर्करा की भाँति मिला चुकी थी।२।

इन दोनों की भाँति घर घर प्रसिद्ध थी और लोग यही कहते थे कि वे निस्सन्देह वैकुण्ठ को जायेंगे। पूर्व कर्म विपाक से उस पितृ-भक्त की मृत्यु आ पहुंची। अन्त समय उसने शोक-सन्तप्त हृदय माता पिता की ओर देखकर कहा, परमात्मन्! मुझे तो सेवा से वंचित होना असह्य हो रहा है ॥३॥

उसी समय स्वामी जी का अपने प्रिय सेवक द्वारा भेजा चरणोदक पहुंचा। उसे पिलाते ही वह भक्त जी उठा। वृद्ध माता-पिता के आँसू बन्द हुये। उनके आनन्द का वर्णन नहीं हो सकता। उन्होंने पुत्र को हृदय से लगाकर कहा बेटा! स्वामी जी के दर्शन करावो ॥४॥ इसी तरह पति प्राणा ब्राह्मणी का पति सर्प दंश से अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ। वह सर्प भी डँस कर वहीं कोने में छिपा हुआ बैठा था। जब जब वह स्नान करने को उठती, तब तब छींक हो जाती ॥५॥

इसी अवसर पर स्वामी जी वहाँ आप रूप प्रकट हो गये। बृहस्पति के उदय के समान। शंख बजा, छिपा हुआ नाग सामने आयो। आज्ञा हुई "तूने क्यों सती के पति को काटा? अपना विष अभी खींचो। नाग ने जहाँ काटा था वहीं फन सटाकर विष खींच लिया। मृतक जी उठा ॥६॥ सर्प चरणों में लिपट गया। जब क्षमा दान मिला तब प्रणाम करके अदृश्य हो गया। सती ने झट आरती उतारी। और काल के मुख से निकले हुये अपने पति को दिखाई। चरणोदक उतार कर पिलाया और स्वयं पिया। अनन्तर स्वामी जी अन्तर हित हो गये, पति और पुत्र दोनों की रक्षा करने वाले ॥७॥ उक्त दोनों परिवार के लोग एक दिन आश्रम पर आये और जब तक दर्शन नहीं हुए, टले नहीं। बड़ी श्रद्धा से पूजा की। आशीष और केला प्रसाद लेकर घर गये। नगर में धूम मच गयी ॥७॥ अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टकं उच्चिणाण जुषा पचेतुं भरे सेहु दयिणु राकुपस माकुल पा सिपि वेण दी।

इस अष्टपदी को पढ़ते हुए घृत से हवन करने से आधि और दूध लावा चढ़ाने से सर्प विष उतर जाता है। पहिले इसे जगा लेना चाहिये ॥

अष्ट पदी ॥ ७४ ॥

खाजा खुतामत खेतरी महबी मुबी पा फेटरी ।
रुक्काणु खुसरो पेंटरी दीणाब झउणा झेटरी ॥१॥

इल्ला बज़िक्रुल्लाह सा तत मैन उल्ल कुलूबला ।
पामैट पहि पूह णणणा गाधैतु छिउला शाणपा ॥२॥

अपखीर घिस्सा सूपजिण तल घाप घिणजा ऊपषिण ।
अलबाल बाखिस छूप सिण पउचास बपणा हूपहिण ॥३॥

अथुसा हुसापिज षेमकण पथुआ बथूआ जेमसण ।
हरि हाप सिमता लेमपण उम्भाणु कैणा ढेम ढण ॥४॥

हुब हात खुसरो भाषिया महबूस णोपिह कासिया ।
पारस दखी बण बाकिया लुणताभ जुबणा माजिया ॥५॥

लौहीम डाबुण जसणवर तगरेज हैबह महणसर ।
एभू सिया किण पपण पर हुंभाव जिपिसा तषण हर ॥६॥

चमुगामि दौणा झापही आभूह उगगण लापही ।
बातापही चंपापही अफटा पही जंभापही ॥७॥

शांडिल्य दिट्ठा मंतड़ा सौधूह खाजा जंतड़ा ।
णापैंदु झिठा अंतड़ा सावंण पीपा पंतड़ा ॥८॥

अर्थ— ख्वाजा (निजामुद्दीन) औलिया ने अपने शिष्य कवि खुसरो के हाथ एक विचित्र पत्र भेजा। सुनहरे वेल बूटों से खूब सजा हुआ था। साधारण दृष्टि से देखने से यह मालूम नहीं होता था कि इसमें कुछ लिखा है क्योंकि अक्षर भी वेल बूटे बन गये थे ॥१॥ ध्यान देकर देखने पर उसमें अरबी भाषा का एक सूत्र लिखा था जो उनके पूज्य ग्रन्थ में उदित है "इल्ला बजिक्र अल्लाह ततमैंनुल, कुलूब" अर्थात भगवत् के सुमिरन भजन से ही आत्मा को शान्ति प्राप्त होती है ॥२॥

सुचतुर कवि ने इसका परिचय दिया और टीका टिप्पणी सहित उसकी पूरी व्याख्या की जिसे सुनकर समुपस्थित सज्जन बहुत प्रसन्न हुये। भगवत भागवत की तन्मयता पर एकता भासित हुई ॥३॥

तब वह बहुमूल्य पत्र स्वामी जी के चरण कमलों में इस प्रकार युक्ति पूर्वक परदे के भीतर पहुंचाया गया कि उसका कोई कोना दबा मुड़ा नहीं और गरद से धब्बा भी नहीं पड़ा। फिर प्रतीक्षा करते देर हो गई ॥४॥

तब कविवर खुसरो ने एक कसीदा प्रेम से पूर्ण सुनाया जिसका प्रथम पाद फारसी भाषा में और द्वितीय चरण (हिन्दी) भाषा में था उसमें गुरुवर की दयालुता को नायिका मानकर उसके प्रति अगाध प्रेम प्रकट किया गया है ॥५॥

इस कविता के समाप्त होते ही एकाएक परदा हटा। सबकी आँखे उस छबि समुद्र में मछलियाँ बनकर आनन्द पूर्वक तैरने लगीं। उस कवि का क्या कहना जो सच्चे गुरु का चेला था। वह तो क्लेशों से रहित और श्रद्धा के सहित आत्म सुख भोगने लगा ॥६॥ इतने में दौना पक्षी चोंच में आभु (तृण विशेष) लिए आया और चबूतरे पर उसे चढ़ाकर मूक भाषा में कुछ कह मण्डलाकार उड़ने लगा। स्वामी जी ने उसे (आभु को) उठा लिया और आचमनी से जल फेंका। जिसे शिर पर धारण करके वह उड़ गया। वह औलिया ही थे ॥७॥

स्वामी जी की प्रेरणा से शाण्डिल्य ऋषि द्वारा देखा गया मन्त्र शुद्ध पाटाम्बर पर अंकित अद्भुत पुष्प लताओं से खचित अभ्रक के मंजूषा में रखकर खुसरो के हाथ ख्वाजा जी के पास भेजा गया। श्री पीपा जी भी उनके साथ भेजे गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इय चार्पणास्टकेर मातु बिबे मिहतुं गिवासुं हो परि सुणेतुं उचिराम ताभिर मुंजे कुंजे विहताम् विस्म येया ॥ इस अष्टपदी के अन्तः जप से मन्द संस्कार का नाश होता है, और लिखकर सिरहाने रखकर सोने से स्वप्न दोष नहीं होता।

अष्ट पदी ॥ ७५ ॥

गमिसा गुमैसा बेमवी उमदाखु जैसम पेमवी ।
कुतराम जवणा देमवी हुमदार काजा छेंमवी ॥१॥

पुहपाहु पीवस करहुणा चुमता पुतासा जरसुणा ।
उफचा भयंता मरसुणा तकबीह कुकड़ा ढरजुणा ॥२॥

दिल्ली कतां लखणौति ढण चिमहा जमूरा तुग्गमण ।
छावीमु ढैटा जागरण विचि खासो वैंहू आमरण ॥३॥

टभिसा पुदण खेमत्तड़ा उंचाभ गहिमे चत्तड़ा ।
चौहिदि किराणं भत्तड़ा जुमटा जिमिसआ सत्तड़ा ॥४॥

हिभु चैटु पेमा आसिमा कभरूण कुसाझी पासिमा ।
चमटुर टपख्या गासिमा हैचूँ हिचूं चुभि वासिमा ॥५॥
पवटाम बासू वासिवण अमहूद णैंइर णासिवण ।
उमखिं कुटैपा चासिवण हे अमउ मुल्ला घासिवण ॥६॥
छपकं चिपै अत उत्त अम णिति सार पैपुट सत्त अम ।
लीपाणु लिउणाजत्त अम आड़ा पुशोपा पत्त अम ॥७॥
टमदम तिरूरडम सित्तुसी अचगै कबीरा इत्तुसी ।
लोघा जुघाणा णित्तुसी पैभापभा लामित्तुसी ॥८॥

अर्थः- एक बार यहाँ (काशी में) पुण्य पर्व पर बड़ा समारोह हुआ। सुदूर पश्चिम दक्षिण, उत्तर और पूरब से बड़े श्रद्धावान सज्जन एकत्र हुए। परस्पर मिलन से उनके भीतर एक महा भाव पैदा हो गया जिससे वे वस्तु स्थिति पर समान भाव से बिचार करने लगे ॥१॥ धर्म ग्लानि दूर करने के लिये पृथ्वी ब्रह्मा के पास जाती है। और ब्रह्मा सब बृन्दारक बृन्द के साथ विष्णु जी की शरण जाते हैं तो पृथ्वी पर रहने वाले हमको भी सिद्ध पुरुष की शरण लेनी चाहिये ॥२॥

वे यहाँ (आश्रम पर) आये और कहे दिल्ली में तीमूर द्वारा किए गए नर हत्या तथा लखनौती (लखनऊ) का उपद्रव और अत्याचार धर्म के नाम पर होते हैं। क्या उन अत्याचारियों को उचित शिक्षा दण्ड रूप से नहीं देनी चाहिए ॥३॥

हे दीन बन्धु ! हम आपकी शरण में हैं। हम पर दया कीजिये। और दुष्टों को दण्ड दीजिये। फिर भिन्न भिन्न प्रान्त के लोगों ने अपने अपने प्रान्त की दुर्दशा का वर्णन किया, बड़ी कारूणीक कथा थी ॥४॥ स्वामी जी ने परदे के भीतर से कहा- धैर्य धारण करने से ही विपत्ति के बादल फटते हैं। आप लोगों के विचारानुसार उचित दण्ड की व्यवस्था पहले ही से कर दी गई है। और वह भारत भर में व्याप्त हो रही है ॥५॥ उसके प्रभाव से जब मुल्ला उच्च स्वर से चेतावनी देकर (अज़ान देकर) लोगों को प्रार्थना (नमाज़) के लिये बुलाने के हेतु गर्जन करने को चिल्लाता है तब उसका कण्ठ खुलता ही नहीं, बन्द हो जाता है। पाँचो समय की प्रार्थना में सर्वत्र यही हाल है ॥६॥ सबकी बुद्धि चक्कर में आ गई है। राजा, रंक पण्डित मूर्ख नर, नारी सब हैरान हैं। क्या सभी मुल्लावों को ज़बान पर उसी समय लकवा मार जाता है। जब वे गर्जन करने को होते हैं। यह किसी सिद्ध की करामात है ॥७॥

राज दरबार (दिल्ली और लखनौती) के मुल्लावों फकीरों और मदान्ध नृपतियों का अभिमान चूर हो गया। सब कबीर को इंगित करते हैं। देखिये क्या होता है? कुछ चिन्ता न कीजिए। सब अच्छा ही होगा। सुखद सुकोमल वार्ता सुनकर सब लोग हर्षित होकर विदा हुए ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं वे उते पिणणमु अहेमतां सुधये मिजा भुण सिहा पेथो मफा दुहमे ॥

इस अष्टपदी के उच्च स्वर से आवृत्तिक पाठ से धर्म ग्लानि दूर होती है।

अष्ट पदी ॥७६॥

किरिमा कुमा झिल जै गलुर मिटषाभ मुल्ला मैस उर ।
पड्णं उपंडिबि तैषदुर सैंदाण सेखं बैतफुर ॥१॥

इबणुर्त कीदा ते मड़ा उकणाह जेबा णेथड़ा ।
अपसाहि क्वीटा मेंवड़ा संकाट खाटं लेछुड़ा ॥२॥

पभराधि धट्ठा लामुझा मिहराणु ते भा जामुझा ।
अछणेर पुब्बी आमुझा पेहे समेहें कामुझा ॥३॥

दलगिर खुणाभी वत्तलस चौटिर चुपंचा सत्तलस ।
मासीभु कुतुसी पत्तलस कोदा कबीरा मत्तलस ॥४॥

भिहगोमड़ा डिहतोमरा चणुसाभताणं कोमरा ।
रुक्खम तुणातो ओमरा मुर्शिद मणिदा थोमरा ॥५॥

चतझिब उसा मतरासिबा सामी सुबासाणा किबा ।
मकराण मुल्लण थातिबा हुशरिर रिशूला घाणिबा ॥६॥

गुमिखा घुमैखा बिघुरिहर पिझुपत्त णुकता सबघर ।
तेथापि सुत्था णीष भर जुप्ता सगुरदा बाणुकर ॥७॥

सामी हिणापुह बे वदी रब्बुल मुसलमीं केवदी ।
णिकटार रब्बुल आलमी हुप मुस्तफा किप बालमी ॥८॥

अर्थः—सैय्यद और शेख़ मुल्ला और मोमिन किंकर्तव्य विमूढ़ हो गये। चारों ओर से कण्ठावरोध के समाचार आते थे। जहाँ सुनिये यही चर्चा। मन ही मन की स्त्रोत करने (नमाज़ पढ़ने) की रीति न होने से उस पर किसी की आस्था ही नहीं थी ॥१॥

इब्न नूर और तक़ी आदि मौलवी ने मिलकर परामर्श किया और यह निर्णय किया यह कि अवश्य किसी सिद्ध पुरुष की करामात है। वह वही है जिसकी ओर सब संकेत कर रहे हैं। उसके पास जाना चाहिये और जैसे वह राजो हो वही करना चाहिये ॥२॥ शीघ्र गामी सवारी पर वे राजाज्ञा के साथ यहाँ भेजे गये। वे भिन्न भिन्न प्रकार के उपहार भी लाये थे। उन बहुमूल्य उपहारों को उपस्थित करते हुये उन्होंने कहा—इसे स्वीकार कीजिये। हम पर दयाभाव का अनुसरण कीजिये ॥३॥

कबीर जी ने उन सब उपहारों को अस्वीकृत कर दिया। और कहा भाई! मैं क्या करूँ? मेरा कुछ वश नहीं है। आप लोगों ने पानी में आग लगाई है। उसको किस तरह ठंढा कीजियेगा ॥४॥ आगतों के प्रमुख ने ठंढी सांस लेकर कहा—जो आज्ञा होगी उसका पालन हम लोग शिर आँखों से करेंगे। यदि आप कृपा न करेंगे तो हम लोग मार डाले जाँयगे। कुछ सोचकर कबीर जी ने कहा कि मेरे गुरू के पास जाइये ॥५॥ उनके आग्रह से वे (श्रीकबीर जी) भी साथ साथ आश्रम पर आये। स्वामी जी ने उसी समय शंख फूँक दिया। जिसके सुनते ही मुल्ला वेहोश होकर सबके सब पृथ्वी पर गिर पड़े। उस अवस्था में उन्हें आकाश पाताल सब देख पड़ा और रसूल ने स्वामी जी की आज्ञा पर चलने का उपदेश किया ॥६॥

होश होने पर वे उठे—सँभल कर बैठे। कुछ चोट और कुछ धूल अंगों में लग गये थे। पर वे ऐसे मस्त थे कि उसे झाड़ा भी नहीं और सब बृत्तान्त अपना सुना गये। और बड़ी उत्सुकता से आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे ॥७॥

स्वामी जी ने कहा-भगवान केवल मुसलमानों के ही नहीं हैं। सम्पूर्ण संसार का ईश्वर एक ही है, सब जगह सबके हृदय में वास करता है। सब देखता सुनता है। उससे ही डरना चाहिये। वह किसी का पक्ष पाती नहीं है। यही मुस्तफा का आदेश है ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इय चार्पणास्टकेर बायू बृह भाति मुजापु वै तिचुसा मते पिऊणं

चू महदाण सोथिप में जुहोसा माति ॥

इस अष्टपदी का धर्म संकट में पड़े हुए प्राणी द्वारा आन्हिक पाठ सम्पूर्ण विघ्न बाधाओं को शान्त करता है।

अष्ट पदी ॥ ७७ ॥

जेदं बिरादन घापरू मुकुफार झिहणा छापरू ।
माकूफ जेजिया थापरू मिचगाम दौणा टापरू ॥१॥

भंपट भुबाणी बाभिड़ा हिकणा हुपैणा आभिड़ा ।
तिझटा सुणैठा गाभिड़ा आणैव ऊफा चाभिड़ा ॥२॥

जण तूरणू राणी जुबां तिलछाह ऐमत जिद हूबां ।
भिक डोर जोरू आसी चुबां आपाह नासह रोरूबाँ ॥३॥

रपगीह हुबटाउण जिणी हुकणार चौआ साटिणी ।
इमकादु औटा तापिणी पवणात मुल्ला गोहिणी ॥४॥

लाधम्म गाथा फूकणो सुअधरम कंडा कूकणो ।
हठुहासि सुन्नत ऊकणो तिह पब्ब मुहर्रम दूकणो ॥५॥

मसगी कलत्ता जावणी दअणं कथा पोथावणी ।
कुंभाणु पब्बा पावणी करका घुणोड़ा चावणी ॥६॥

हिंदव फकीरा कुत्तला ढिउटा जमोड़ा उत्तला ।
णिहु धम्म थित्वा जुत्तला लंघण खुदाधव मुत्तला ॥७॥

मूल्ला मुखवी पीर पह णिषतार थूधा ऊह अह ॥
लिपिणा झिता डिसपाद सह छिपरां निमाजू चंभुजह ॥८॥

अर्थः— हे भाई जब पैदा करने वाला, पालन और संहार करने वाला एक ही परमात्मा है और उसी को सब अनेक नामों से भजते हैं, तो केवल पूजा के विधान में भेद होने से दूसरों पर जज़िया कर लगाना बड़ा ही अनुचित कार्य है ॥१॥

जैसे भोजन वस्त्र शरीर धारण करने के लिये आवश्यक है, उसी तरह उपासना करने का स्थान भी हैं। इस लिये मन्दिर बनाने में जो प्रतिबन्ध हो रहा है, उसे दूर कर देना चाहिये। बल पूर्वक धर्म भ्रष्ट करना भी निंद्य कार्य है ॥२॥

मसजिद के सामने से जाते हुये दुलहे को पालकी से उतर कर पैदल चलने के लिये विवश न किया जाय। क्योंकि यह प्राचीन धर्म नीति के विरुद्ध है और पक्षपात पूर्ण है। पारस्परिक प्रीति का बिगाड़ने वाला है ॥३॥

गाय की कुर्यानी अनावश्यक होने से न होनी चाहिये। जब कि आचार्य ने तृष्णा शान्ति के लिये प्राण रक्षा के निमित्त भी उसे ग्रहण न किया। और मुल्लाओं को आम्नाय के प्रचार में रूकावटें न डालनी चाहिये ॥४॥

धर्मकी पुस्तकें न जलाई जाँय न किसी का जी जलाया जाय। देव मन्दिर ढहाये न जाँय और न मुहर्रम में तिवहार पर्व मनाने का प्रतिबन्ध हो ॥५॥

किसी स्त्री का सतीत्व नष्ट न किया जाय। कथा आदि में शंख बजाना न बन्द किया जाय। कुम्भ आदि पर्वों पर यात्रियों से कर न लिया जाय ॥६॥

यदि कोई हिन्दू श्रद्धा पूर्वक किसी फ़कीर के पास जाय तो उसे उसीके धर्मानुसार उपदेश दिया जाय। यदि इन बारह प्रतिज्ञाओं में से किसी का उल्लंघन करेगा तो राज्य नष्ट हो जायगा ॥७॥

बुजुर्ग विचार वान मुल्लाओं और पीरों ने उसे शिर पर चढ़ाया अर्थात स्वीकार किया और उन्हें लिपि बद्ध करके बादशाह के मुहर दस्तख़त कराये, तब निमाज़ तुरत जारी हो गया ॥७॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं चिमरंहितो भिमदियों कस कुं भिधासु तरं पिचैते सुपजाथणेति हं रा णेति हं रा सिता उप्त गमे चुवंषम ॥

इस अष्टपदी को प्रत्येक भागवत पूजन ध्यान के अनन्तर पाठ किया करे तो नगर का एवं देश का कल्याण हो ॥

अष्ट पदी ॥ ७८ ॥

तिरूभस्तिला जिथुरामिला अबईणु हैणा कामिला ।
भौरंतिदेवा जामिला ओंकार टापुह तामिला ॥१॥

हौयेर माकुसलामगो चाभाण जठवण आमगो ।
णिपणौर जुहरां सामगो हिहटण झुपण पचघामगो ॥२॥

सीचाड़ छूपा बक्कटी ऊफास चूठां अक्कटी ।
हीपी हुपी अरचक्कटी जाणूह पदमा सक्कटी ॥३॥

तिउरा दहिणठा जोगडी भिउरा पणरवा भोगड़ी ।
केवला कपंझा चोगड़ी दीठी देबासे मोगड़ी ॥४॥

काऊछ पिणहा लोतसण मउगी सुगी टभ घोतसण ।
ढिबुणा भकेरा होतसण आरोहणी सा लोतसण ॥५॥

जंकरट सी ऊणरट सी हेरी भुचौगप बरट सी ।
पुघ्'घररिणाछी अरट सी थकड़ी जमीहुल घरट सी ॥६॥

जामेछुवाटण वैसुत्री दीछा जुणंतण कैकुबी ।
पामीड़ कुतुरा लैसुवी मोणाभ भसड़ा टैरूवी ॥७॥

चोऊब जमघा बैसुहर परदेण हूणा दैभुसर ।
हिंग्लाज कौटा छैमुगर हुबरेप किहणो पैपुफर ॥८॥

अर्थः— तिरूभरि ग्राम में कामला नाम की एक पतिव्रता निजपति के साथ श्रीं जी की आराधना में तत्पर रहा करती थी। उस दम्पती का ध्यान कभी भी इस चिन्तन से विचलित नहीं होता था और उन्हें वैकुण्ठ धाम प्रत्यक्ष रूप से भासता था ॥१॥

उनके पूजा स्थान पर एक दिन एक कमल का खिला हुआ फूल दिव्य आकृति और प्रकृति का उन्हें दृष्टिगोचर हुआ । उस दिन पुष्प ने दम्पति के चित्त को सहज ही ध्यान से छुटा कर अपनी ओर खींच लिया ॥२॥

जैसे चन्द्रमा के कर स्पर्श से पंकज की पंखुड़ियाँ संकुचित और सम्पुटित हो जाती हैं । उसी तरह उस विधुवदनी के कर स्पर्श से वह कमलिनी सम्पुटित हो गई । दो मास कम वर्ष भर पर प्रातः काल उसमें से एक कन्या प्रकट हुई। जिसका नाम पद्मा या पद्मावती पड़ा ॥३॥

शिशु के प्रकट होते ही वह कमलिनी अदृश्य हो गई। तिरू दम्पती उसका लालन पालन करने लगे । युक्ति पूर्वक इस रहस्य को उन्होंने गुप्त रक्खा । और उस कन्या को अपना औरस ही प्रकट किया ॥४॥

उष्णता प्रधान देश में श्याम-काय नर नारियों में स्वर्णप्रतिमा की तरह सुशोभित और वाल वस्त्राभूषण से सुसज्जित वह दिव्या सबके वात्सल्य और प्यार से पल कर शनैः शनैः सयानी हुई ॥५॥

जब माता पिता उसके विवाह की चिन्ता करने लगे तब देश की प्रथा के विरुद्ध साड़ी से मत्था ढक कर उसने कहा—मैं लक्ष्मी हूं। निज नाथ चराचर पति की इच्छा से भूतल में भोग करने के लिये नहीं तप करने आई हूं। काशी को चलो ॥६॥

वे यहाँ (आश्रम) पर आये। उस कन्या ने वैष्णवी दीक्षा भक्ति रूपा होकर ग्रहण की उसकी शान्ति मयी छटा से आश्रम वासी शान्त रस में पग गये। आश्चर्य चकित हो लोग कहते—"हरि की रीझ बूझ" ॥७॥

निवृत्ति मार्ग में प्रवृत्त होते देख उसके माता पिता निराश होकर देश को लौट गये, श्री गुरू को आज्ञा से वह घाट पर एक संकीर्ण गुफा में भजन करने लगी ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टके थिपुरा सुअणा जु सिकुं दुस पेह गेह मे अरे जुभि

सं युजे तता भिह गोचिहं भुधापि ॥

इस अष्टपदी को भक्ति पथ पर आरूढ़ प्राणी केवल पाठ ही नहीं भाव को हृदयङ्गम करे तो अपूर्व धृति प्राप्त हो ॥

अष्ट पदी ॥ ७६ ॥

भाईणु झषरा बेबुआ तहचाण तुगड़ा केकुआ ।
उफहाप कहपा पेपुआ जिकाल णामुच चेचुआ ॥१॥

अजलीस कुसटा महकुमस छवणाप पोहिष उहरूमस ।
हचणीहु जपुसा चह पुमस तचघाम धोही बह चुमस ॥२॥

महलेह टहत्रण कामुकी भिथह्लण मउजा धामुकी ।
कह्वेणु दहणप आमुकी तिह बम्म्ह वादण छामुकी ॥३॥

फत्रगीण विसिछा मावली पिछिसां हुरा वादावली ।
झिपुरंय सोजिण धावली वेदांनिणा ठिहु मावली ॥४॥

ढरढेंग जोइषा पातड़ा दिग्घाह बसुजा जातड़ा ।
थुपदेथ दौपा कातड़ा आपिह पुणापिह चातड़ा ॥५॥

कहमा बेठारी जुगुमसी ऐंणा उसाली पुहुमसी ।
शर भाष्य वौखा लुकुमसी णासूत पवणा चुपुमसी ॥६॥

घलुहीर तिउठा बरतिसं अछणेम पंभा अरतिसं ।
पंचूरिया झी परति सं शुक काछ णिभुआ गरतिसं ॥७॥

काऊण पधसा बागसे तभोथ फिकसा तागसे ।
पजगूत टुकचा धागसे महक्किण कुरैणा हागसे ॥८॥

अर्थः—दक्षिण के भाऊ जी शास्त्री अपने प्रति द्वन्दी दार्शनिकों के साथ यहाँ (आश्रम पर) आये। सब लोग सुचित्त होकर जब बैठे तब एक बृद्ध आश्रम वासी ने उनसे ऐसे ऐसे प्रश्न किये कि उनमें से किसी ने उनका उत्तर नहीं दिया ॥१॥

उन्हें निरुत्तर होने का वैसा ही पछितावा हुआ जैसा कि शिवा को सिया रूप धारण करने पर हुआ था। वे अपनी कुण्ठित प्रतिभा को जगा जगा कर थक गये। उन्होंने उस बृद्ध को साष्टांग प्रणाम किया और चरण चूमे ॥२॥

उस बृद्ध ने आशीष देते हुये सबसे कहा, चारूमति वही है जो विचार धारा को समुद्र की तरह मर्यादित रखे। इस समय यतिराज महाराज के दर्शन नहीं होंगे। कह नहीं सकते कब होंगे ॥३॥

इतना कह कर वे बृद्ध लठिया टेकते जैसे आये थे वैसे चले गये। 'वह बृद्ध कौन थ।" । उससे पूछ लेना था । बड़ी भूल हुई । यही बात सब विद्वान बोल उठे । फिर उन्होंने निश्चय किया कि जब तक दर्शन नहीं होंगे तब तक चौखट छोड़कर कहीं न जाँयेगे ॥४॥

उसी दिन अर्ध रात्रि में एक अपूर्व घटना घटी। एकाएक परदा हटा और भीतर से ऐसा प्रकाश पुन्ज प्रादुर्भूत हुआ कि सब की आँखे चौधियाँ गईं। कुछ देर के बाद लोग सावधान हुये ॥५॥

उनमें पाँच मुख्य धारणाओं के पण्डित थे। अद्वैतवादी, विशिष्टाद्वैन वादी, शुद्धा द्वैत वादी, द्वैताद्वैतवादी और द्वैत धारी। उन सबके लिये स्वामी जी ने पृथक पृथक पाँच प्रवचन कहे, जो उन्हीं वादों के साथ अमृत बर्षिणी नाम जोड़कर संग्रह किये गये।६

वे पण्डित गण उन प्रवचनों को सुनकर वैसे ही चकित हो गये जैसे ॠषि मण्डल शुक जी के प्रवचन से। उन्हें सबका सब कंठ हो गया। उनका भ्रम दूर हो गया ॥७॥

परन्तु जैसे कोई मधुर पदार्थ मिलने पर उसे छोड़ने का जी नहीं चाहता वैसे ही ज्ञान प्राप्ति का लोभ वे सम्वरण नहीं कर सके। वे फिर भी वहीं टिके रहे ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकेर मुहुसा वियेरते सुतहा मुरी त्याणु सविते चुक भिहुणा जिफाता सौच भीचा उहे ॥

इस अष्टपदी को एकादशी के जागरण में कीर्तन करने और व्याख्यान करने से भेद भाव का शमन होता है ॥

अष्ट पदी ॥ ८० ॥

उफफांसुधी णहपातता स्वामी चिततसा आतता ।
तिभ सूत कारा छातता रूद्दंम सैणा कातता ॥१॥

पइचै पुआवित वजिहका मांझे बदायण सुतिहका ।
दच्छिण सरीरक पसिहका शकर अधूणी चपिकहा ॥२॥

पुहतः अपत्ता व्यासणं वेदान्त सार मीमांस खं ।
झामे झपैटा काससं विज्ञान भिक्खुहु भासहु ॥३॥

पाची मुहे श्री कंठ शिव बम्म्ह मीमाँसा भासतिव ।
पच्छुम रमापइ लछुमणिव श्रीभा विशिठ्ठाद्वैत लिव ॥४॥

जड़ धौह द्वैती भास्करम इट्ठाभि होणा लापरम ।
अमृकीअ औभिल्लस अरम बम्ह सूत भास्य जियदतरम ॥५॥

हरहई अद्वैतस श्रीपतिम श्रीकर पुणाविजही सतिम ।
समुहे हरिघरा माध्वतिम हसुदैत भास कणी खतिम ॥६॥

अड़ियार सुद्धाद्वैत मुह ताठुंक सामी विष्णु रूह ।
कलपप सुअम मज्झाभि सुह निम्बार्क हपणा चुहुबचुह ॥७॥

तिमिभण्णि वौधायत्तडिस अद्वै विशिष्ठा मझरिसिस ।
वंसूत भासय अवट हिस माभीषु रूपणा धन्नतिस ॥८॥

अर्थः— उन गलिताभिमान विद्वानों को सत्पात्र समझकर स्वामी जी ने एकादश भाष्यकारों के सहित सूत्रकार का आवाहन करके उन्हें गुफा में उचित आसन पर पधरा कर परदा हटा कर उनका साक्षात् दर्शन करा दिया ॥१॥

और बड़े प्रेम से एक एक करके सबका परिचय भी दे दिया। बताया कि मध्य में बैठे हुये ब्रह्म सूत्रकार महर्षि बादरायण हैं। एवं दक्षिण भाग में विराजमान शारीरिक भाष्य के कर्ता श्री शंकराचार्य हैं ॥२॥

व्यास जी के आगे उनके पुत्र (परमहंस शुक्राचार्य) वेदाण्त सार मीमांषा भाष्य के रचयिता सुशोभित हैं। और उनके (व्यास जी के) वाम भाग में किसी देव विशेष के प्राधान्य से हीन जड़ विशिष्टाद्वैत मूलक ब्रह्म सूत्र भाष्य के कर्त्ता विज्ञान भिक्षुजी विराजमान हैं ॥३॥

उभय पंक्ति में पूरब मुंह किये शिव परक विशिष्टाद्वैत बोधक ब्रह्म मीमांसा भाष्य के कर्त्ता श्री कण्ठ शिवाचार्य एवं पश्चिम मुख आसीन विष्णु परक विशिष्टाद्वैत प्रतिपादक श्री भाष्य के रचयिता श्री लक्ष्मणाचार्य हैं ॥४॥

शुकाचार्य जी के समीप सबसे अलग थलग बैठे हुए किसी भी इष्ट के प्राधान्य से हीन केवल जड़वाद मूलक द्वैत प्रतिपादक ब्रह्मसूत्र भाष्य के कर्त्ता श्री भास्कराचार्य हैं ॥५॥ पुनः उभय पंक्ति में आगे आगे बैठे हुये शिवपरक द्वैत सिद्धान्त दर्शक श्रीकर भाष्य के कर्त्ता श्रीपति आचार्य एवं वैसा ही विष्णुपरक द्वैत भाष्य के रचयिता श्री मध्वाचार्य हैं ॥६॥

शुद्धाद्वैत के सिद्धान्त के मानने वाले कंठस्थ ही भाष्य का भाषण करने वाले श्री विष्णु स्वामी एवं द्वैताद्वैत मूलक सरल सिद्धान्त प्रदर्शक वेदान्त पारिजात सौरभ भाष्य के कर्त्ता निम्बार्काचार्य को देखिये ।७॥

धूनी के पास बैठे अद्वैत और विशिष्टाद्वैत के मध्यवर्ती सिद्धान्त प्रतिपादक सूत्र भाष्य के कर्त्ता बौधायण के शिष्य(सारायण)हैं अपूर्व दर्शन से सब कृतार्थ हो गये ।८।

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर रोभि ऐ चुपहे वागुमा साहुणके चाणुग थाहु फुर

झाप तौं धव चुसा बादरायण चु भिहापधे ॥

इस अष्ट पदी का विधिवत् अनुष्ठान (कमलासन से बैठकर पंच प्रकार के पुष्प और श्यामा तुलसीदल हाथ में लेकर बारह बार नित्य पाठ बदरीबन में) करने से बादरायण के दर्शन होते हैं ॥

अष्ट पदी ॥ ८१ ॥

मिचुगासि रौणक णाछली जुमिरा झुराहिष पाछली ।
बउषा बुझा बसु माछली सिप व्यास भाणप बाछली ॥१॥

छौलिस क्रियोणा साधणा उपषाइ जिमटा आधणा ।
टिकसाह चौलुप बाधणा णिप जाभ तौकिक जाधणा ॥२॥

हम्मण हुमासी हाट हिस परखासु टिच णस बाट पिस ।
जंघोण कुथरम साद सिस मुह जोह चष हण णाबलिस ॥३॥

हौरम्मदा पौरस्सुधा हिणबीर जोपह सम्मुधा ।
चिहरन्त हाणुक जंपुधा पणसिप बुआली हंलुधा ॥४॥

पइसा कुणा जिपु तंरुहण अबयास जोसिम वैरुहण ।
हिणुठिर पुधा झिर देरुहण अखती सुमम सा थैरुहण ॥५॥

गमुआड़ जाणिट थाणदे किपलिसु अटा पाणदे ।
तभरिह मुक्कसर णाणदे सहत घिणाविं माणदे ॥६॥

अइलुस पुहासिक संबुदं चिरगाव धुमहारंबुद ।
लौषस पणिण खं बुद गिहरौल पहटा तंबुद ॥७॥

टपचीण आचारज सुही मदकीण कुबाला कैमुही ।
अहराफ उदरा साजुही पसपोस बुल्लम छंछुही ॥८॥

अर्थ:—पपीहे की तरह श्याम घन पर लव लगाये हुये जिज्ञासु-पण्डितों से सन्तोष के लिये तीनों काल के जानने वाले और गुह्य सेगुह्य सिद्धान्तों के प्रकाश करने वाले व्यास जी ने इस प्रकार बचनामृत की वर्षा की ॥१॥

साधना और आराधना की गुप्त परिक्रियाओं में सबसे सूक्ष्म ध्येय का निश्चय करना होता है। और यह निश्चय पूर्वक जन्मार्जित साधनाओं के संस्कार पर निर्भर होने से भिन्न भिन्न हुआ करता है ॥२॥

उस भिन्नता को एकता में परिणत करने वाली भगवदीय बृत्ति ने वेदज्ञ ऋषियों के अन्तःकरण में एक ही ध्येय के पाँच प्रकार निश्चित कर दी हैं। भावनायें चाहे जितनी हों इन प्रकारों में सबका समावेश हो जाता है ॥३॥

मैंने अपने पाँच शिष्यों को पृथक पृथक एक एक मार्ग का उपदेश दिया है। और ध्येय की प्राप्ति पर उनके संशय को भी दूर कर दिया है। उन्हीं के प्रचारित विचारों की उलझन में अज्ञानी पण्डित पड़े हुये हैं ॥४॥

जैसे किसी पर्व-योग पर एकत्रित जनता का कोलाहल दूर से हवं हवं झवं झवं के सिवाय कुछ स्पष्ट सुनाई नहीं देता। परन्तु वहाँ पहुंचने पर उसका लोप हो जाता है। वहाँ का सब व्यापार स्पष्ट दिखाई देता है ॥५॥

उसी तरह जब तक उस ध्येय का सानिध्य प्राप्त नहीं होता तभी तक तर्क और मीमांसा की गड़बड़ी में पड़ा रहना पड़ता है। और जो इस वाग्जाल से दूर रह कर धीरे-२ उस ध्येय तक पहुंच जाता है, उसके सामने सब स्पष्ट हो जाता है ॥६॥

अस्तु ! व्यर्थ के वाद से विरत होकर गुरूपदिष्ट ध्येय की ओर बढ़ते जाना चाहिए। और गुरू-वाक्य में अटल विश्वास रखना चाहिये। क्योंकि तभी उस अलौकिक प्रयत्न में सिद्धि लाभ की सम्भावना है ॥७॥

इस प्रवचन के बाद आचार्यों सहित महर्षि महा ऋषि अदृश्य हो गये। परदा भी लग गया। और जिज्ञासु जन अभिवादन करके अपने भाग्य की सराहना करते हुये स्व स्थान को पधारे ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं खुजलि बासुहिण सुहुतापि चुधापुहै भाजु गुणा पिहमो खुरूचि मणे सुवीहे ॥

इस अष्टपदी को पाटी पर चन्दन से लिखकर स्वयं तीन बार बांचे फिर धोकर मिश्री मिलाकर पी जाय तो अन्तःकरण का कोलाहल शान्त हो ॥

अष्ट पदी ॥ ८२ ॥

दक्किण दुसाकिण ताबही विट्ठल विहौषित लाबही ।
गुजगेछु गुस्सट पाबही अजुभाम चिउमा सावही ॥१॥

तण षुर हुसाइप धामले कुहलोपु चाभुस गावले ।
बोषित जुपोसत सावले किघो किवौरी जावले ॥२॥

अभूहण तिक्ता गमिषमी लचनार दूहा समिषमी ।
प्यातं खुबा जिउ जमिषमी लोलघण चौधा थमिषमी ॥३॥

होपिस मिलिन्दी जनक पिच तभु गौह णुतफा झाबुलिच ।
बम जोसडा बितजाभ किच गपटंग औकानूट रिच ॥४॥

अमरूंबहा डिबहुं जहा खबिसेप बुतड़ा संमहा ।
कसराफ भावा नन्दहा जस्तो सतोवा पेबहा ॥५॥

थाकित खिजाणिप संसती टहणे थणे सादंपती ।
रूकथं लिवातु सपती बझवाल ओणा मंरती ॥६॥

मइजं उजंणो तीकमां चरसस णिकंता पीकमां ।
तरसिहु जिसद्दा लीकमां कवले कुचेछा छीकमां ॥७॥

कैजां पुजाँ झाँमादरी उभसार अतमी छादरी ।
पहजे सुपाणी सादरी हुफता घुमाढर दादरी ॥८॥

अर्थः— दक्षिण देश के विट्ठल नामक ब्राह्मण यहाँ (काशी में) आये । स्वभाव से ही वे विरक्त थे । उनके मन में कोई वासना स्थान नहीं पाती थी । अपने आचरण और सत्कार्य से वे लोक प्रसिद्ध थे ॥१॥

उनकी धर्म पत्नी सरल हृदया सती थीं । जिसने भूलकर भी पर पुरुष को नहीं देखा था और सदा पति की सेवा में तत्पर रहती थीं । धर्म के पवित्र चरण कमल की पूजा करती थीं ॥२॥

ऐसी प्यारी पत्नी को त्याग करके वे ब्रह्म-दीक्षा के निमित्त आये । अग्नि की तरह वैराग्य भी अवसर अनवसर का विचार नहीं करता । वह तो अपना ही अस्तित्व रखने वाला तत्व है ॥३।

महाराज ने उन्हें जनक जी के अंश से अपत्य-शाप से अवतरित जान मान कर दीक्षा दी थी और वे एकान्त में निष्ठा पूर्वक भजन करके कालक्षेप करते थे ॥४॥

उनकी दृढ़ बृत्ति और योग-युक्त आभा से आकर्षित होकर अनेक शिष्य भी हो गये थे । क्योंकि भावपूर्ण भावानन्द जी में यह गुण विशेष जाज्वल्यमान था ॥५।

इसी बीच में वह सती विरह-विधुरा, दाम्पत्य—सुख से वंजित निज पति को खोजती हुई आई । उसने सबसे अपना हाल कहा । पर कहीं पता नहीं चला ॥६॥

अन्तर्यामी स्वामी जी ने उसके प्रणाम करते हुये कातर स्वर से उसे पहचान गये । उसे सन्तान युक्त होने का वर देकर उसके व्यंग पर ध्यान देते हुये उसके पति को बुलाया ॥७॥

उन्हें बहुत समझा बुझाकर दिव्य संतति की बात बता कर—भजन में कोई बिक्षेप न होने पायेगा, ऐसा वर देकर, स्त्री का हाथ पकड़ाकर घर भेज दिया ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टके टेच पघासि पुणाहु जीवाता मुरापि पग चामु चैम पेद्यास मीहुचे ।

इस अष्ट पदी को प्रबृत्ति मार्गी अनुसंधान करता है तो उसे विवेक युक्त वैराग्य की प्राप्ति होगी ॥

अष्ट पदी ॥ ८३ ॥

संपासु जथवा धोगरी अवभीण साउक मोगरी ।
तहणीषु पामस गोगरी सुह जिपुणौ आ ओगरी ॥१॥
पखरेड झौसी मातड़ा तषवीक रौणा कातड़ा ।
हिणु आण टीहा मातड़ा बम्महं वशीता खातड़ा ॥२॥
हुंपाण पिउसं मणग हो उफणोरू हिम्मा पणगहो ।
ममजीणु कुर्रा जणगहो चुणिसासु जिवता मणगहो ॥३॥
उहणपर औसण सुहणदर टिभुझीसु सप्पट कुहणफर ।
बसकी सुभी दह पुहण सर तिमि लिगुड़ा घुह जुहणवर ॥४॥
अपठीणु कंमा रूत्तही फजहीबु अण्णा उत्तही ।
बहकीस तमला जुत्तही तसहीह शमला कुत्तही ॥५॥
कटरम कुरम पुद मावरू उपहिपु णासिक चावरू ।
मफजंतु सिणहा आवरू परगीम चमणा फावरू ॥६॥
ढवरूण गह उस्साम पं जटरं झुरंगा मामसं ।
हुजबक टुवैला षामगं फिहणं फुणंसी रामहुं ॥७॥
अजपा जपा जिमु हाणई ममभा मभीमा छाणई ।
हम्माण डीका ठाणई [illegible] उसाणिहकाणई ॥८॥

अर्थः—कछार में दुष्काल पड़ने के कारण बहुत से लोग जहाँ तहाँ भाग गये । उनमें से विप्र दम्पत्ति यहाँ (काशी में) आये । वे इतने कृश थे कि उनकी चेष्ठा बिगड़ गई थी । और वे कठिनता से चल पाते थे ।।१।।

वे ज्ञानी थे । और अपने आचरण से दूसरों को सन्मार्ग पर चलाने वाले थे । परन्तु काल ने उन्हें महाकाल के मुख का ग्रास बनाने के लिये वाध्य किया था । परिचित विद्वानों ने आश्रय देकर सत्कृत करके उन्हें आत्मघात से बचाया ।२।।

परन्तु आत्म हत्या की वृत्ति से सिंचित होकर अविद्यारूपी विष-लता हृदय-क्षेत्र में फैल गई थी । उसे उखाड़ कर विद्यारूपी सोमलता को रोपकर अमृतत्त्व के पवित्र-जल से सींचना किसी अलौकिक विद्वान का काम है । यह समझकर उन्हें आश्रम पर लाये ।।३।। बात बन गई । सुयोग से उसी समय शंख बजा । श्रवण रन्ध्र से वह ध्वनि जब हृदय में गूँजी, तब टिमटिमाती हुई जीवन ज्योति प्रज्वलित हो गई । और मोह मत्सर आदि शलभ उसमें हुत हो गये ।।४।।

सचेत होने पर उन्हें स्पष्ट ज्ञात हुआ कि पूर्व जन्म में दूसरों का भाग अपहरण करने का ही कटु फल वे इस जन्म में चख रहे हैं । इतने में परदा हटा और नीरद-श्याम-स्वरूप और प्रकाश पूर्ण दर्शन प्राप्त हुये ।।५।।

आज्ञा हुई वत्स! जो दूसरे का भक्षण करने से संकोच करता है और अपने ही भाग पर सन्तुष्ट रहता है वह प्राणी देव तुल्य है । और वह मृत्यु को पार करके अवश्य अमृतत्त्व को प्राप्त होता है ।।६।।

इस शिक्षा को ऐसी युक्ति से हृदय मन्दिर में सुरक्षित रखिये कि जन्मान्तर में भी न भूलिये । क्योंकि कर्मों की पुनरावृत्ति रथ के चाक के समान तीव्र गति से बार बार हुआ करती है । उनकी इस प्रार्थना पर कि वह युक्ति कृपा पूर्वक बतलाई जाय । यति राज ने एक पुष्प दिया ।।७।। उसे लेकर सूँघते ही इन्द्रियों की गति रुक गई । हृदय मन्दिर में निश्चित बैठकर उन्होंने ध्यान देकर कर्म ग्रन्थि को देखा । उसे खोलने सुलझाने की युक्ति उन्हें सूझ गई । नेत्र खुलने पर उन्होंने साष्टांग प्रणाम करके चरणामृत माँगा । उसे पीकर छक गये और वहीं बस गये ।।८।। अनुष्ठान विधि—

इयं चार्पणाष्टकं सोधि उच्छाष्मले रतो उरहा सि मुघा चुघासि हुजमा चामुसे हुपरिसा

इस अष्टपदी के अन्तिम चतुष्ठय के अनुसंधान से संचित मन्द संस्कारों का क्रमशः नाश होता है ।।

अष्ट पदी ॥ ८४ ॥

रैदास राहिस रास्तां कूपिण कबीरा कास्तां ।
झुर सुर सबैणा आस्तां धिगुह गिलैया पास्तां ॥१॥

तह सिवण जम खोवण जुणा मिंकारि वा गिसणा गुणा ।
तरधम पितह धम से फुणा अकरीह अजपीथ घुणा ॥२॥

सणु जुह उफंटा रीजुमस पँधवाक गैहट पोहुपस ।
खंभीर झुट सण मीसुरस धंजीर णिपुह्ण तोपुसम ॥३॥

कभरण सुतीथू जामु किट णचभेरूता भिण मामुहिट ।
असुआण तेवण कापुटिट जंबी रूबी जउणा सुरिट ॥४॥

तमिदुर न हाती विगहती उचणा छुणाहिब सिगहती ।
मसही मुसीफा डिगहती उझ उणा धाधा धिगहती ॥५॥

पंपट उभेमट णाणको जहतेम सभुता काणको ।
टिभरस्स णोरी हाण की मजहिह्द हिब्रां थाण की ॥६॥

सुचधी सुरैतण छब्दड़ी नजणा उपाखडि हब्दड़ी ।
उणसिण उ अँसिण थब्दड़ी फीणूच्च बैकभ टब्दड़ी ॥७॥

इबहडुरा सिख संभणी उचहो छुही लिह थंमणी ।
किबरां कुरीराँ बंमणी सुकरण थतेभुण जमणी ॥८॥

अर्थः—एक दिन यतीन्द्र ने महाभाग रैदास जी और भक्ति पथ में चतुर कबीरदास जी को सम्बोधित करके कहा—इस युग में पहिले के अनधिकारी ही वास्तव में अधिकारी हैं । वे गलित अभिमान हैं जो विमुख करता है ॥१॥

सन्तों ने भी इस कर्मभूमि में शान्ति पूर्वक भजन करने के लिये निम्न श्रेणी के मनुष्यों के यहाँ जन्म लेना उचित समझा है हम देखते हैं कि निम्न कोटि की प्रजा में सामान्य बृत्ति में स्थित सन्त हैं ॥२॥

अतः उनको गुरु मुख की अत्यन्त आवश्यकता है । क्योंकि कुलीनों के गुरू उन्हें उपदेश दे नहीं सकते । उनकी आध्यात्मिक पिपासा शान्त करने का कोई साधन न होने पर "स्वधर्मे निधनं श्रेयः" की बृत्ति उनमें कैसे और कब तक टिकी रह सकती है ॥३

लोक संग्रह का पुण्य कार्य भक्तिमान पुरुषों को करना ही चाहिए । अस्तु हे हमारे प्यारे शिष्य ! इस (लोक संग्रह) कार्य में प्रवृत्त हो जाइये क्योंकि प्रबृत्ति लक्षण युक्त ही भागवत धर्म है । वह प्रबृत्ति केवल भगवत की ओर होनी चाहिये और यह (लोक संग्रह) भगवान का ही कार्य है ॥४॥

उन प्राणियों के लिये ऐसा सुगम पंथ होना चाहिये जो उन्हें बेखटके दिव्यधाम तक पहुंचा दे । उन्हें वास्तविक आधार मिलना चाहिए जिससे उनका कल्याण हो। हृदय की आँखे खुलें और वे परमार्थ पथ को स्वयं देख सकें ॥५॥

सगुणोपासना तो सरस हृदय वाले हरि भक्त ही कर सकते हैं । और निर्गुण का विवेक तो उनकी समझ के बाहर है । इसलिये दोनों के बीच का मार्ग ही उनके लिये उपयुक्त होगा ॥६॥ सुरति शब्द योग का साधन उन्हें बताना चाहिये । यह अन्त में भगवत के दोनों स्वरूपों का बोध कराने वाला है । यदि साधना में अविरोध बृत्ति बनीं रहै । गुरु मूर्ति का ध्यान प्रत्यक्ष प्रतीक का काम देगा ॥७॥

आचार्य की शिक्षा को दोनों महाभागवतों ने सिर पर चढ़ाया और दोनों ने पंथ प्रवृत्त किया । इस प्रकार त्रयीं धर्म से तिरस्कृत, सब तरह से हीन, दीन, खिन्न प्राणियों को अविचल आधार मिल गया ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर धुहि गणे उचंषे णुथा मचिगे वाणं फासु जुल पा अभे सुषुणं पतेझा विणासी ॥

इस अष्ट पदी का अनुसंधान परोपकार में तत्पर प्राणी करे तो निष्कामता निर्ममता, सहिष्णुता अदि दिव्य गुण प्राप्त हों जो भागवत के लक्षण हैं ॥

अष्ट पदी ॥ ८५ ॥

पीपा पभारूस पाहमण जकरीर हुसिया साहमण ।
फकचीर कीणुह आहमण उझणेर तिमुचा बाहमण ॥१॥

नरहरि अनन्तानन्द रूहि सगभेर हिडला दीर कुहि ।
मफरास चिंभा संब उहि णहगिस झुणैहा तेभ सुहि ॥२॥

चपबर गुणंछर हुबुद मह कझरोप जभुण सूरुद मह ।
तियणा तिणा लुल कुसुद हह विगथंधु जिहफा जुगझुँ पह ॥३॥

तउझम जुझारिप हैफड़ी हुमगाण टोणिस फैफड़ी ।
चटसेह बालिल तैफड़ी उकरड़ किमूसा जैकड़ी ॥४॥

चिभुराप बालप बीहरप पजखेह गुझिहा तीहसप ।
णुपचाह बंगुस लीह लप जमुसे रूसेचा डीह कप ॥५॥

घिणुसार मजणप सीहुदा किह खाप जाफप मीहुदा ।
तकलीह संडा दीहुदा हचहोघ धचफच झी हुदा ॥६॥

घौमसस उझटिभ जमणही हंसाम फउसर खमणही ।
अमरेतु उणि ठुह चमणही बाघीबु विचफा कमणही ॥७॥

खतिमण किमच्चा पटरूणा सीता छुता णाजि पारुणा ।
अंतोण उमखं छटरुणा गुमटिस अचंभुह लटरुणा ॥८॥

अर्थः— परम साधु सेवी पीपा की निष्ठा से प्रसन्न होकर गुरुदेव ने उसके गृह राज धानी को पवित्र करने के लिये और कितनों को सनाथ और कृतार्थ करने के लिये द्वार बन्द पीनस में आरूढ़ होकर शुभ मुहूर्त में प्रस्थान किया ।।

श्री नरहर्य्यानन्द और अनन्तानन्द दोनों पार्श्व में चमर लिये चले। सैकड़ों मूर्ति साथ में चले। साधु, ब्राह्मण, भक्त, भागवत सभी चले। किसी ने किसी से न पूछा और न बिचारा ।।२।।

मंगल मयी यात्रा में ग्राम नगर के लोग सम्मिलित होकर जाते थे। श्रद्धा भक्ति की नदी उमड़कर बह रही थी। पड़ाव कई पड़े पर मार्ग में या तम्बू में दर्शन किसी को नहीं हुए ।।३।।

उनमें जो बड़े आस्तिक और श्रद्धालु थे वे साथ नहीं छोड़े। उन सबको राजधानी में पहुंच कर स्वामी जी ने अपूर्व स्वागत के अनन्तर पर्ण कुटीर में विराजते हुए दर्शन देकर कृतार्थ किया ।।४।

उपदेश देते हुए उन्हें बताया—मनुष्य को चाहिये कि अपनी अन्तरात्मा को इतना विशाल बनावे कि अखिल विश्व को अपनी आत्मा में और अपनी आत्मा को सबमें देखै ।।५।। उपदेश पाकर वे चले तो गये परन्तु फिर दस दिन बाद आये और बोले—उस अमूल्य उपदेश को चरितार्थ एवं फलितार्थ करने के लिये हमें क्या करना चाहिए। यही बूझने के लिये हम फिर सेवा में आये हैं। आज्ञा हुई कि—चन्द्रमा को त्रिवेणी में स्नान कराते जाव और महामन्त्र पढ़ते जाव। वे जिज्ञासु मर्म बूझकर चले गये ।।६।।

गुरु-भक्त, साधु सेवी, पीपा जी ने चार महीने तक अच्छी सेवा की गुरु को प्रसन्न करके अत्यन्त दुर्लभ वस्तु वैराग्य प्राप्त किया। जिसके लिये देवता भी तरसते हैं। सब राज पाट छोड़, साथ में चलने को तैयार हो गये ।।७।।

राजर्षियों की उत्कृष्ट रीति के अनुसार उनकी महिषी सीता अनुचीता ने पति के साथ सहगमन किया। लाख समझाने पर भी न रूकीं। पतिब्रताओं के उच्च धर्म का पालन किया ।।८।।

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं णि वि सुवरै यरसा पिघणा टिपुर सिपाझि कतिया कुसुमे णांचुल से भुचिता मुसे ।। इस अष्टपदी को लगातार तीन दिन तक अक्षय तीज से पंचमी तक शून्य मैंदान में खड़े होकर पाठ करने से राग से पिण्ड छूटता है ।।

आष्ट पदी ॥ ८६ ॥

कमरौत लुण जगदीस पुहि मचगैरू सोमण माट ठुहि ।
ततफेट सिपुटा सैथु गुहि अचभर उपैसण वीभ तुहि ॥१॥

चभि जैतु भिखणा भौड़िया तटणी कबीरा हौड़िया ।
महिसमण शाफी लौड़िया पुमघच्च घुपटी टौड़िया ॥२॥

झिणुघा णिघाफी ऊसणप मिभुरंश जोगाणंद अप ।
बझगेटु चंदण सर विशप जभुआ उआ सिमटा हिपप ॥३॥

षणरंचु धहसट मारूही हिहणाधि औझा तारूही ।
मुणगा गुभा भग भारूही चैरपण चाल्ही कारूही ॥४॥

टिकलीह धुरवेशाँ चशाँ विहपेस उणधाराँ हशाँ ।
इबजंत फिणु हापाँ पशाँ चुटणेर चिहड़ाजाँ बशाँ ॥५॥
ढिगुरोर लपषाँ फैरूसी हुमगोर जेणब तैरूसी ।
पमपीह आझुण गैरूसी छहरौंण सिउसा दैरूसी ॥६॥

होलाणुसा पिहगाणुमा धिहमेरूणा छप छाणुमा ।
इफणीप इपसिप साणुमा इर्चारिगु दाणिप पाणुमा ॥७॥
मकमुहुण तोपर तिगुचफर ऊचूम जुगटण लिमुकदर ।
चफकंच चेफुल हिपुणहर साबूम आबुम तिचुसपर ॥८॥

अर्थः— जिस समय श्री जगन्नाथ पुरी में जमात पहुंची उस समय भगवान ने स्वयं बटु रूप धारण पूर्वक पीनस के पास जाकर आत पत्र स्वागतार्थ अर्पण किया । इस मर्म को कोई न जान पाया ॥१॥

समुद्र के आक्रमण का व्यौरा सुनकर श्री कबीरदास जी ने तट पर चिमटा गाड़ दी । और उस जड़ भक्त से कह दिया कि यहाँ से आगे अब मत बढ़ना इस अनु–शासन को वह मान गया ॥२॥

योगानन्द जी घूमते हुए चन्दन तालाब पर पहुंचे जिसका जीर्णोद्धार हो चुका था परन्तु उसमें जल का सोत नहीं फूटा था । वहाँ उनके आसन जमाने और समाधिस्थ होने पर इतना जल भरा कि वे तैरने लगे ॥३॥

इन युगल घटनाओं से वहाँ के निवासी बहुत सन्तुष्ट हुए और अधिक से अधिक श्रद्धा के साथ साधु सेवा में तत्पर हुए और अपने भाग को सराहे ॥४॥

भगवत ने अपने दिव्य कोशपति को आयसु दिया कि साधुओं का सत्कार दिव्य भोगों से किया जाय कोई त्रुटि न हो ॥५॥

सदा शिव ने ऋद्धि को आज्ञा दी कि दिव्य सामग्री से भण्डार भर दो । दिव्य पायस सुगन्धित द्रव्यों से पूरित ठीक समय पर पहुंच जाया करें ताकि किसी चर्य्या में अन्तर न पड़ने पावे ॥६॥

एक दिन उसी बटु रूप से भगवान् स्वयं पायस लेकर पहले ही हवारे उसके पीछे नित्य का पायस भी आया । स्वामी जी ताड़ गये । बटु महाराज को पूजा की खीर खिला कर ही विदा किया ॥७॥

उसके दूसरे दिन श्री आज्ञा से जमात बढी और दक्षिण धाम तक जितने दिन मार्ग में लगे बराबर दिव्य सामग्री और पायस दिव्य हाथों से पहुंचते रहे ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टके लाभुक जाभु कतिणू चिह सुपे सति मयं हि चु थुणा कि वणूच गिधा ॥

इस अष्ट पदी को तीर्थ यात्रा में नित्य एक बार अनुसन्धान करने से यात्रा में अपूर्व सुख मिलता है ॥

आष्ट पदी ॥ ८६ ॥

कमरौत लुण जगदीस पुहि मचगैरू सामण माट ठुहि ।
ततफेट सिपुटा सैथु गुहि अचभर उपैसण वीभ तुहि ॥१॥

चभि जैतु भिखणा भौड़िया तटणी कबीरा हौड़िया ।
महिसमण शाफी लौड़िया पुमघच्च घुपटी टौड़िया ॥२॥

झिणुघा णिघाफी ऊसणप मिभुरंश जोगाणंद अप ।
बझगेटु चंदण सर विशप जभुआ उआ सिमटा हिपप ॥३॥

षणरंचु धहसट मारूही हिहणाधि औझा तारूही ।
मुणगा गुभा भग भारूही चैरपण चाल्ही कारूही ॥४॥

टिकलीह धुरवेशाँ चशाँ विहपेस उणधाराँ हशाँ ।
इबजंत फिणु हापाँ पशाँ चुटणेर चिहड़ाजाँ बशाँ ॥५॥

ढिंगुरोर लपषाँ फैरूसी हुमगोर जेणब तैरूसी ।
पमपीह आझुण गैरूसी छहरौंण सिउसा दैरूसी ॥६॥

होलाणुसा पिहगाणुमा धिहमेरूणा छप छाणुमा ।
इफणीप इपसिप साणुमा इचरिगु दाणिप पाणुमा ॥७॥

मकमुहुण तोपर तिगुचफर ऊचूम जुगटण लिमुकदर ।
चफकंच चेफुल हिपुणहर साबूम आबुम तिचुसपर ॥८॥

अर्थः— जिस समय श्री जगन्नाथ पुरी में जमात पहुंची उस समय भगवान ने स्वयं बटु रूप धारण पूर्वक पीनस के पास जाकर आत पत्र स्वागतार्थ अर्पण किया। इस मर्म को कोई न जान पाया ॥१॥

समुद्र के आक्रमण का व्यौरा सुनकर श्री कबीरदास जी ने तट पर चिमटा गाड़ दी। और उस जड़ भक्त से कह दिया कि यहाँ से आगे अब मत बढ़ना इस अनु–शासन को वह मान गया ॥२॥

योगानन्द जी घूमते हुए चन्दन तालाब पर पहुंचे जिसका जीर्णोद्धार हो चुका था परन्तु उसमें जल का सोत नहीं फूटा था। वहाँ उनके आसन जमाने और समाधिस्थ होने पर इतना जल भरा कि वे तैरने लगे ॥३॥

इन युगल घटनाओं से वहाँ के निवासी बहुत सन्तुष्ट हुए और अधिक से अधिक श्रद्धा के साथ साधु सेवा में तत्पर हुए और अपने भाग को सराहे ॥४॥

भगवत ने अपने दिव्य कोशपति को आयसु दिया कि साधुओं का सत्कार दिव्य भोगों से किया जाय कोई त्रुटि न हो ॥५॥

सदा शिव ने ऋद्धि को आज्ञा दी कि दिव्य सामग्री से भण्डार भर दो। दिव्य पायस सुगन्धित द्रव्यों से पूरित्त ठीक समय पर पहुंच जाया करें ताकि किसी चर्या में अन्तर न पड़ने पावे ॥६॥

एक दिन उसी बटु रूप से भगवान् स्वयं पायस लेकर पहले ही हवारे उसके पीछे नित्य का पायस भी आया। स्वामी जी ताड़ गये। बटु महाराज को पूजा की खीर खिला कर ही विदा किया ॥७॥

उसके दूसरे दिन श्री आज्ञा से जमात बठी और दक्षिण धाम तक जितने दिन मार्ग में लगे बराबर दिव्य सामग्री और पायस दिव्य हाथों से पहुंचते रहे ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टके लाभुक जाभु कतिणू चिह सुपं सति मयं हि चु थुणा कि वणूच गिया ॥

इस अष्ट पदी को तीर्थ यात्रा में नित्य एक बार अनुसन्धान करने से यात्रा में अपूर्व सुख मिलता है ॥

अष्ट पदी ॥ ८७ ॥

रामेश्वरम दिकथा कुणा सबरैत तरसट मापुणा ।
जह खाघ घसणा सासुणा पहजाब अबलिस भामुणा ॥१॥

पिढरौस खैबट धैवठुर इकणाम उंफालह बसुर ।
झबराण झुर्रा अत्त उर, चिभठौत जुहजी सत्त तुर ॥२॥

कौरिम कुरीषा रहस रुह थिबुरेत भेतस जहस उह ।
मिहगा महादेवं भचुहं हमपी मुपीतं पहस छुह ॥३॥

णहला पुपणा पैवसी हुपही हथौठी लैवसी ।
सहबू इटल्ला गैवसी झिमिहा पघत्ता णैबसी ॥४॥

विष्णा विहम्बा रामसिट उह पहसु उसबा ओसहिट ।
चिपऊणादर उंकराम भिट लौकेण हनुमन्ताणु लिट ॥५॥

मगरेझ ओंहउ दडिमडा विविविपा छहसू अडिमडा ।
जहणभी सेफद पडिमडा चरदेश चूरम वडिमडा ॥६॥

वमगेछ झापुह डिमकडू बसहेछ साभुव छिमकछू ।
अमगेछ णिचुला विमकबू मतगीण मुरबी ढिमकढू ॥७॥

तुह गीपु जोगानन्द, सुग, पचफोचु विषणी सैव जुग ।
विजया नगर मम गीप गुग अचणस घुमैसट फामणुग ॥८॥

अर्थः— रामेश्वरम् में तो उल्लेखनीय घटना घटी । वैष्णव अदर्शन से उदासीन शिवजी को निज शिष्यों सहित, योगबल से प्रतिबन्ध हटा कर मन्दिर में प्रवेश कर के स्वामी जी ने प्रफुल्लित कर दिया ॥१॥

उस समय मन्दिर के अधिकारी भौंचके से रह गये। पीछे उन्होंने कड़ा पहरा बैठाया, जिसपर कुपित हो शिव जी ने कपाट बन्द कर दिया । पूजा आदि रुक जाने से वे लोग घबराये ॥२॥

अपरिचित बृद्ध ब्राह्मण के परामर्श से वे शरण में "त्राहि त्राहि" कहते हुये प्राप्त हुये । उन्हें क्षमा करके और शिव विष्णु ऐक्य के तात्त्विक और व्यावहारिक स्वरूप का बोध कराके अपने पुजारी (योगानन्द जी) को भेजकर कपाट खुलवा दिया ॥३।

स्वामी जी ने कहा "यह स्थान हम लोगों (रामोपासकों) का है। आप लोगों के हाथ में तो केवल सेवा पूजा का भार सौंपा गया है। यही अधिकार सब नर नारी को है ॥४॥

उस परम कृतज्ञ के कृतज्ञता प्रकाशन का लघु प्रयत्न यह चिन्ह (स्थान) जिसकी सेवा अनन्य भाव से हनुमान रूप से शिव जी ने की है और स्त्री त्याग की प्रतिज्ञा से जिसे वश कर लिया है ॥५॥

प्रीति मान की बात प्रीतिमान जानते हैं। भक्तिमान की बातें भी भक्तिमान ही जानते हैं। हृदय की विशालता जगत में प्रमाण है। मर्मी जानते हैं ॥६॥

मूर्वी नन्दन की सुधा सिञ्चित वाणी को सुनकर सब लोग गद्गद हो गये । तम्बू के भीतर से ध्वनि आने से आकाश वाणी श्रवण तुल्य आनन्द प्राप्त हुआ ॥७॥

वैष्णव-शैव द्रोह को शान्त करने के हेतु से योगानन्द जी को वहीं छोड़ कर स्वामी जी विजयानगरम् को गये जहाँ चातक की तरह लोग श्याम-घन के प्यासे थे ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं आज्ञु हिते मु चुहुं मारि गते पचे भिपुडिमा संपुच हाजेषं तापि अटा ॥

इस अष्टपदी के अनुसंधान से शिव विष्णु में अभेद बुद्धि उत्पन्न होती है। नामापराध मिटता है।

अष्ट पदी ॥ ८८ ॥

मिसहा विजम नगरम उहा किरदेमुची चाणी कुहा ।
दकणोर दुग्गा धीमुहा अफड़ेर दिप्पा सूजुहा ॥१॥

तपणेप विद्यारण्यधी मछहेम तण्णा रायझो ।
थुपजेरू जथुही सामरी चफछेट उझा आसतो ॥२॥

झिपबेम किभुजा कबतणी पिचुगीथ गबड़ा सबतणी ।
णकरूर जेटड़ा गबतणी उचहा चुहा चिझ रबतणी ॥३॥

सिहुमार जिमणा बुकुरकुत मिहरौड तणखा णुहुरपुत ।
तंभीत साभुण उचुरचुत पबथीप हैभा कतुरझुत ॥४॥

भिमजी भुझीटा बेचुला तभरिणुक धाभु के पुला ।
संझोर डीबुक बेतुला तरपीड झीहण खेमुला ॥५॥

चरंजिम राहुण माकुचे भंखाम भुरिहा साबुचे ।
तहवीस जभरा णासुचें अलबीस काबिर जाउचे ॥६॥

धितुणव मिमंता चारलू मतुही कबीरा वारलू ।
एसी मता विरधारलू चिटुरां सिअंता सारलू ॥७॥

णिगहट मुणी मबु चतसक सिमुजिउट ब्रासह वंपधक ।
विचटेप दचणा दिणु कलक मपधा चुधा थिह थंमणक ॥८॥

अर्थः— विजय नगर में राजा की ओर से स्वागत के लिये बड़ी तैयारी हुई थी। नगर अच्छी तरह सजाया गया था। एक रमणीक उद्यान में जमात के टिकने के लिये प्रबन्ध हुआ था। जिसमें एक स्वच्छ सुन्दर सरोवर भी था ॥१॥

विद्यारण्य स्वामी को प्रमुख करके राय ने नंगे पाँव जाकर नगर के बाहर ही से स्वागत किया। पीनस में आग्रह और प्रार्थना पूर्वक अपना कन्धा लगा कर अपने जन्म को सफल किया ॥२॥

अनेक प्रकार से पहुनई होने लगी। बड़े बड़े भण्डारे हुए जिसमें सभी भेष के साधु और विप्रों ने प्रसाद पाया। पायस भी कई प्रकार के बनते रहे और महल से लेकर विशेष पात्रों को प्रसाद मिलते रहे ॥३॥

बुक्का राय का हृदय रोग पायस प्रसाद पाते ही छूट गया। एक दिन राजा को स्वामी जी का दर्शन भी प्राप्त हुआ और सुन्दर उपदेश भी मिले ॥४॥

राजयोग में भोग निपट हानिकारक है। जहाँ राजा भोग विलास में लिप्त हुआ कि राज्य वंश समेत नष्ट हो जाता है। अतः प्रजा रंजन रूपी प्राणायाम यम नियम पूर्वक साधकर संयम (धारणा ध्यान समाधि) से रहना चाहिये ॥५॥

इस उपदेश को भूर्जपत्र पर लिखा कर सोने के पत्र में मिढ़ा कर सुन्दर अंगद के रूप में धारण करके राय ने अपनी श्रद्धा भक्ति का अच्छा परिचय दिया। वह समझ गया किया कि वह पूर्व में योगी ही था ॥६॥

नव दिन तक जमात रही। दक्षिण पुरी (कांची) को जाते हुये राज्य की ओर से पूरा प्रबन्ध करने के हेतु राज मन्त्री साथ गये जो एसी मत के थे और कबीर दास जी के सत्संगी हो गये थे ॥७॥

मुनि (विद्यारण्य स्वामी) ने काञ्ची में फिर मिलने की बात कह कर और बहुत दूर तक पहुंचा कर स्वामी जी को विदा किया। राजा और प्रजा भी साथ रहे ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर व्यभासूण तापा कुचरणो वीसं भिरूणा पृही वाणु

मोधा सुणा जिमुहा सुणे वटरूगमेच्छा पिछम्भू चभे ॥

इस अष्टपदी के पाँचवें पद को विजया के दिन मध्यान्ह में साही पंख की लेखनी से केसर चन्दन में बोर कर भूर्ज पत्र पर लिखकर स्वर्ण के अथवा तांबे के बीजक में मढ़ा कर बाहु पर धारण करने से राजन्य वर्ग के वैभव यश और वंश का विस्तार होता है ॥

अष्ट पदी ॥ ८६ ॥

कांची सुफैयट पूरपी पझणा सिणा झिस चूरपी ।
अमुताज हातिस ऊरपी छमुहासु पैरव कूरपी ॥१॥

दिघलास बैसम भागवत रैदास चंतज चामवत ।
जमणा कबीरा पाटवत हुबिहा बुहाफी लासवत ॥२॥

झमरी अमरिभा जिपुणुहर इखतस फुचा जिछणू कुहर ।
अलगीस तहसीणा चुहर उफईसु कचुपागी बुहर ॥३॥

चौकम जुहाणिव थाकमू अबिहाम जोपी पाकमू ।
णिगु सिस्त भीजी धाकमू उचिराणु सीचा णाकमू ॥४॥

तंघोचु उत्ता ऊलपा त्रिमणोर आभो मूलपा ।
जटहाप टल्ला कूलपा हिमहाण तबटा पूलपा ॥५॥

छहटाघ पबणा धीगमी मचराव झुबिदा कोगमी ।
णातराप एहुगा चीगमी अबसेछु कबढा लीगमी ॥६॥

लिसबह णपसया झेमुटा अचणेक जुमिसर हेमुटा ।
दगवेफ पउजी सेमुटा इदरीब हुबसण पेमुटा ॥७॥

हइभह हुमाजिणु बोहरे चिघ्घाण चुमसी कोहरे ।
गपू हरेपू डोहरे अमचेभु डाकिस गोहरे ॥८॥

अर्थः— कांची के लोग वर्ण विचार जनित भेद बुद्धि के कारण स्वामी जी के उदार भाव और समान बरताव के बड़े विरोधी थे। वास्तव में अहंकार रूपी ब्रह्म राक्षस उनके मन में बैठा हुआ था ॥१॥

वे भागवत धर्म के महत्त्व को समझ नहीं सकते थे। वे रैदास जी को चर्मकार और कबीर दास जी को मुसलमान कहकर धृणित वाक्य उच्चारण करते थे। कुशा को तृण और गऊ को पशु न समझने की रीति भूले हुए थे ॥२॥

उन्होंने स्वागत और सेवा सत्कार को आकाश की ओर फेंक दिया और दुर्बचन रूपी बाण से श्रद्धा रूपिणी मृगी को आहत करना ही परम पुरुषार्थ माना ॥३॥

श्रद्धालु लोग भी उनके भय से जमात के दर्शन तक को नहीं गये। अपने दुर्भाग्य पर पछता कर रह गये। मन ही मन भगवान् से क्षमा मांगते रहे ॥४॥

यहाँ (जमात में) किसी वस्तु की कमी नहीं रही। पुरी के उत्तर भाग में शून्य क्षेत्र में मूल प्रभ नामक विद्याधर प्रजेश का आबास था। उसने पड़ाव पर विविध अन्न का टाल लगा दिया ॥५॥

अपनी पत्नी के साथ हाथ में दिव्य पायस का थाल लेकर वह नित्य आने लगा, और विनीत भाव से पुजारी को देकर और आशीष लेकर जाने लगा ॥६॥

दुष्ट लोग लुक छिपकर अन्नागार वस्त्रागार आदि सामग्री देख देख कर चकित हुए। डाह से जलने लगे। पुरी में घर घर पूछते फिरे कि किसने सामग्री भेजी ॥७॥

वे क्या पता पा सकते थे ? जो नर दृष्टि से परे है उसका अनुमान भी तो मनुष्य नहीं कर सकता। दुर्जनों की आँख में तो माँड़ा छाया रहता है। वे देख ही नहीं सकते ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणाष्टकं सूणासि आहिम चातिम झिपा सुभिहा सूहजे वाणुगा थिह डाकुलिह हा जिमुणटा ॥

इस अष्ट पदी को देह अभिमान की वृत्ति को क्षीण करने और आतम स्वरूप का पारखी बनने के लिये प्रत्येक भागवत को एक बार अवश्य पढ़ना चाहिये ॥

अष्ट पदी ॥ ९० ॥

टुचरा मुगासर पेहुमा झपवेटु जहरम तेहुमा ।
पझणेस तुर्रम केहुमा सीताणुधीता लेहुमा ॥१॥

लकुणेर टेबुजा जीधरण उमकीण आबुस हो अरण ।
तणु घाटु गोदा चीचरण अमिता चुपीता ीकरण ॥२॥

सधुपंचिरापुट केपरा आधूस उबरम थेपरा ।
पचगाष जामुक छेपरा मचगोसु उरणा मेपरा ॥३॥

तउझप छहीणा ऊपई अहपेठ जाभुच छूपई ।
ललुणा जिराटा दूपई णजदीदणा पिथु पूपई ॥४॥

मकभेह पुजमा गण पुजें सुझवाल सालप उछउचे ।
तिउराइणी चण मचमुचे कापड़ पुपड़ढा हचहुचे ॥५॥
तिचुराष जाबुण जारिणा लभुकं चिभासठ आरिणा ।
फायब जहातिम चारिणा मकहस उपाणप फारिणा ॥६॥
संघं सुघटा टिपटिपा चिमणा सतीणा हिपहिपा ।
मषऊष पिचणा घिपघिपा अगराह कबिर। चिपचिपा ॥७॥

अचवाण जाणिस साउसू पादाप पाचिल काउसू ।
हपचा मुधा पुत्र लाउसू पझ पटह वाचह थाउसू ॥८॥

अर्थ:— इसी कोलाहल रूपी मेघ की छाया में और भागवतापचार रूपी झंझावात में पुरी दर्शनार्थ गये हुए अपने पतिदेव की सह धर्म्मिणी सीता अनुधीता जी उन्हीं की खोज में तत्पर पुरी में विचरती रहीं ॥१॥

उसी मार्ग से परम विदुषी चन्द्रमा की तरह मुख वाली गुरू वानी गोदा देवी राग द्वेष रूपी अग्नि में जलती हुई कबूतर की चाल से आ रही थीं। मुठभेड़ हो गई ॥२॥

मधुमाखी की तरह भिनभिनाती हुई उसने एक दूसरी स्त्री से कहा—"बचके जाना छू न जाइयो। गुलाहे की जोय जा रही है" पूर्वोक्त पतिव्रता ने इसको सुन लिया ॥३॥

कठिन रगड़ से चन्दन में भी अग्नि प्रकट हो जाती है। उस योग माता के हृदय में क्रोध उत्पन्न हो गया। आँखों में रक्तिमा दौड़ गई ॥४॥

काँपते हुए स्वर से बोलीं "तेरे इस भगवतापराध के कारण (जुलाहे के रूप में भागवत की निन्दा करने के कारण)" सारे देश से वस्त्र निर्माण के उपकरण नष्ट हो जायेंगे सब दरिद्र हो जायँगे ॥५॥

तू और तेरे समान विचार वाले म्लेक्ष योनि में पतित होंगे, नक्षत्र तिलमिलाते दिखलायँगे, वायु विषैली बहेगी। पृथ्वी फटे और तू खटे। तत्काल पृथ्वी फटी और वह धस गई। हाहाकार मच गया ॥६॥

जमात में उस पतिव्रता के लौटने पर सर्व सम्मत से धर्म दण्ड चला। जब रसोई बनकर तैयार हो और परसने चलें तब सबके चौके में कबीर दास जी प्रकट दीखें, लोग भोजन छोड़ उठ जाँय और लोग भूखे रह जाँय ॥७॥

जब जब रसोई बने तब तब यही लीला हो। दो दिन और एक रात भूखे रहने पर लोगों के सिर से अभिमान का भूत उतरा, त्रस्त खिन्न और दीन हो सब लोग शरण में प्राप्त हुए ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकेर कूहसे भुसते गलि पिछाडुर तौ हुंग डावर खुवासुद मखे चुहा जुवार पघीतमा ॥

इस अष्टपदी के पाँचवें और छठवें पद को शून्य स्थल में उच्च स्वर और गद्गद कण्ठ से तीन बार पढ़ने से भागवतापराध का समाधान होता है ॥

अष्टपदी ॥ ९१ ॥

मजगासु विद्यारण्य मुणि तपलासु किमुटा काह कुणि ।
लउमाप टेकुआ टार टुणि वहबाल धामिणि पोह पुणि ॥१

सत भभहि जाउण घेतड़ी हुंसाभ जुण आ बेतड़ी ।
पह फोर पचघा णेतड़ी उड़झाम झबणा झेतड़ी ॥२॥

सामी मणातण स्यामदी मिचगार देउणा धामदी ।
परगेप चुबणा गामदी उकटार पभिधा टामदी ॥३॥

चिउरी विणहला जावदां मेपगा गुमाढा मान्दां ।
पधणा सियह उप दावदां पाच्चेस उकमा चावदां ॥४॥

धौवरण पीझा डूतरा सापास धापस कूतरा ।
आदाण मीणा लूतरा होंफारू वहणा ढूतरा ॥५॥

इतवाण ड्यूघा जुतणिहण पफ बचस तूबा हुतसि हणा ।
णमिला उनासिण चतुरिहण हंटी हुटी चासुत पिहण ॥६॥

चमुआर गेहुआ टाणुकी मकपाव जोहा माणुकी ।
अझरंझ किहणा साणुकी सबिदेहडा चुव धाणुकी ॥७॥

तिछघप कबीरा कारूआँ छंदास मोहण गारूआँ ।
विद्यांत सउपड़ फारूआँ रामेति पुहपुण पारूआँ ॥८॥

अर्थः— दूसरे दिन मुनि विद्यारण्य स्वामी अपने शिष्य वर्गों और राजमन्त्री के साथ वहाँ पहुंच गये। उनसे सब स्थानीय वृत्तान्त कहा गया, अघटित घटना को सुन कर उनके चित्त में बड़ा दुःख हुआ ॥१॥

फिर सच्चे शरणागत लोगों के दुःख को सुनकर और भी चिन्तित हुए, उन्हीं ने इस दुःख पूर्ण कथा को स्वामी जी से कह दी। शापानुग्रह के लिये प्रार्थना की ॥२॥

सबके दुःखों को कल्याण की दृष्टि से देखने वाले श्री स्वामी जी ने सबके हितार्थ और भविष्य कल्याण के लिये कहा कि सब लोग अन्न ग्रहण करें अब कोई दृश्य न दीखेगा ॥३॥

अप्रिय बातें योग पाकर हो ही जाती हैं। दैव की प्रेरणा से और ईश्वर की आज्ञा से होती हैं। उन्हें कोई टाल नहीं सकता ॥४॥

पतिव्रता का शाप कभी व्यर्थ नहीं होता, उसको भगवान् भी टाल नहीं सकते। यही इसमें असामञ्जस्य की बात है। जब यह विष वृक्ष फूले फलैगा तब देश वासी बड़े कष्ट में पड़ेंगे ॥५॥

जब शाप के प्रभाव से समुद्र के इसी किनारे से वणिक समाज आवेगा और करघा चरखा घर घर से मिटा कर सब व्यवसाय हस्तगत करके देश को महा कंगाल बना देगा ॥७॥

जब दरिद्रता के कारण धीरज छूट जायेगा और धर्म ग्लानि उपस्थित हो जायगी और जब वैदेही के बरदान को फलीभूत होने का योग लगेगा। ७॥

तब कबीर दास की ज्योति वणिक कुल में मोहनदास नाम से उतरेगी। चरखा का प्रचार करेगी। और राम नाम के प्रताप से सब दुःख दारिद्र भगावेगी।८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टके खं बुधे चुले पुले भूतहि जत इवां चूपले पइटाप टरे सुज हिमा सुदरिता भिरू गिछुव धेपि ॥

इस अष्ट पदी को, सोम—गुरू और रविवार को नियम से तीन बार पाठ करते रहने से, बन्दी को कारागार से बद्ध राष्ट्र को बन्धन से और मुमुक्षु को संसार से मुक्ति मिलती है ॥

अष्ट पदी ॥ ६२ ॥

दिगहर बरा मुणि माकुले चदघासु दैवत ठाकुले ।
अस फोक ओका जाकुले ताभरतु णिउटा फाकुले ॥१॥

सामी तिखंवा तीरती मुचुगासु झिफणा कीरती ।
तउभीस भुकणा हीरती मंडेण मोपलस थीरती ॥२॥

पहिति अति षँच नद सादिषू तहणी विदेहुह कादिषू ।
बंगे पणीता जादिषू राधा रमँणी चादिषू ॥३॥

हिकणार जिमरा माउती इफकार मुणिणा साउती ।
चपकलिस तिण्णा ताउती हउघस कुदाहत चाउती ॥४॥

चंभा सिमा पहुला सहण उझी उदण हाजू जहण ।
पैकम पुचम चाभित लहण अकभेण चौहिपला गहण ॥५॥

हपराम जूड़ा बुण चिया आछा टकी णागिह फिया ।
णचही उरैपघ पिट किया मुणि लुप पैचाणस ठिया ॥६॥

थप थीपु जैहस बेहदल गिजु आर भुअही हेमहल ।
उजषीप उफसा चेटकल आपेह सामी लेबणल ॥७॥

हचुहाम गाउण झपतिणत अधरेप बभुटा कपतिणत ।
चाबुस दिराथण हफतिणत उजवास मुणिका चमतिणत ॥८॥

अर्थः—मुनि "विद्यारण्य स्वामी' ने प्रश्न किया, दरिद्रता सद्गुण का नाश और दुर्गुण की वृद्धि करती है तो क्या उस कठिन समय में निःसीम धर्म ग्लानि की रोकथाम करने के लिये कर्म सूत्रधार की ओर से कोई विशेष आयोजन होगा ॥१॥

स्वामी जी ने मुसकुरा कर कहा "श्री मुख बचन (गीता) परित्राणाय साधूनाम्..." के प्रमाण से आप ऐसा प्रश्न करते हैं । सो आप जैसे सहृदय ज्ञानी पुरुष से छिपा नहीं रह सकता ॥२॥

पंच नद देश में विदेह (जनक) जी और बंग प्रान्त में श्री राधा जी के परम प्रेम का मर्म जानने के लिये स्वयं यादव राज गीताचार्य अवतरित होंगे ॥३॥

कुछ ही दिन पीछे पुरा काल में दिये हुए हनुमान जी के शाप के प्रभाव से महा मुनि (बाल्मीकि) जी और उनके पीछे हनुमान जी भी अवतरित होकर धर्म रक्षा की व्यवस्था कर देंगे ॥४॥

इस प्रकार पूरब-पच्छिम-उत्तर-दक्षिण चारो खूँट में धर्म रक्षा का कंटकाकीर्ण पथ कर्म सूत्रधार भगवान् ही प्रशस्त कर देंगे ॥५॥

मुनि विद्यारण्य स्वामी को परम सन्तोष वचनामृत से प्राप्त हुआ । मन की मलीनता दूर हुई । रहस्य रक्षा की प्रतिज्ञा करके अपने व्यक्तित्व के विषय में पूछा ॥६॥

स्वामी जी ने एक पुष्प उनके हाथ में देकर कहा—इसके दलों पर एकाग्र मन से देखिये तो शायोद्धार के समय आपके व्यक्तित्व का तथा अन्यों का भी प्रतिबिम्ब आप ही दीख पड़ेगा ॥७॥

उस दिव्य दर्शायक पुष्प दर्पण में उन्होंने भविष्य के गर्भ का निरीक्षण किया । सबकी आकृतियाँ दीख पड़ीं । मुनि अद्भुत रस में प्राप्त होकर, बिदा माँग कर अपने आसन पर गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकेर धापुच मगइतो टपसु अंसाओ—इस फुए के उचामरतो दिणा सुक मगो ॥

इस अष्ट पदी को दरिद्रता और दासता से छूटने के लिये ज्ञानी अज्ञानी सबको ऊषा काल में अष्टोत्तरी पर जपना चाहिये ॥

अष्ट पदी ॥ ९३ ॥

तिगधौंत छि़रि रंगम बसय पुणि कमल नाभ सभाणलय ।
वेंकट जणादण पाभु चय अफतेत झणषा मासुमय ॥१॥

चौंखारि द्वारावति जुमै पीपा पगासिप जामुलै ।
दम सति मुरारी कोंकिसै अदरीम आभुण ओमितै ॥२॥

मसजूब उण्णा तासिथौ बहदा उदापिझ बारिसौ ।
भणुही उवैताणिध हिलौ हंचित खुस हणा दापिभौ ॥३॥

उपहेण जिगिणा बिंसुरा माया पुही सामुग चुरा ।
गैतिस धिगबा तिंतुरा वृंदा भिदासिह मंथुरा ॥४॥

कौभरतिका बहिभरलिका अगणेच ताहा झरसिका ।
मइमापु जणपं करहिका थफघेणु चौटा अमसिका ॥५॥

गणुआ पझारा णेचुली झटुभा तुभासिक ले चुली ।
अमसट णिचंपा बेचुली अहथाणु बिचघा तेंचुली ॥६॥

तौरीपु थिहणा थेमुची पपसीर मोमण देखुची ।
ढण तुंच णासी रेलुची हफसेंघ लूई चेहुची ॥७॥

लुपलहिणजा किसणा किता टासी टुसी अइसण गिता ।
तापुरि तिचा हीणंथिता पासीण कुपटिव पहमिता ॥८॥

अर्थः— फिर जमात श्रीरंगम को गई और वहाँ से पद्मनाभ जर्नादन और वँकटेश जी की यात्रा करके सहस्त्रों प्राणियों को कृतार्थ करती हुई आगे बढ़ती गई ॥१॥

शान्ति और गम्भीरता से पूर्ण द्वारिका जी पहुंची जहाँ पीपा जी समुद्र में प्रविष्ट हो गये । श्री कृष्ण चन्द्र जी ने निज रानी समेत दम्पत्ति का बड़ा सत्कार किया ॥२॥

भगवत प्रेम के समुद्र में डूबा हुआ प्राणी स्थल वारिधि में डूब नहीं सकता इस बात को प्रमाणित करने के लिये भगवान ने शंख चक्र का छाप देकर किनारे पहुंचा दिया ॥३॥

फिर मथुरा बृन्दावन होते हुए, वहाँ की विचित्र लीला का अनुभव करते हुए सब लोग चौथे धाम की यात्रा के लिये माया पुरी में (सब लोग) पहुंचे ॥४।

वहाँ दो तपस्वीं बड़ी लम्बी डील डौल के स्वामी जी के तम्बू के द्वार पर आये और भिक्षा पात्र दिखाकर भीख माँगने लगे ॥५॥

शिष्य गण उन्हें भिक्षा देकर विदा करना चाहते थे परन्तु वे कुछ भी न कर सके । उन दोनों का आतंक सब पर छा गया था । वे हटने वाले नहीं थे ॥६॥

तीन पेड़ का फल, पाँच अन्न के दाने और सात प्रकार का मृग मद वे माँगते थे, और बहुत दिव्य संस्कृत वाणी बोलते थे ॥७॥

उनकी आंखे बड़ी बड़ी कभी खुलतीं कभी मुंदती थीं । सामान्य जन को डर लगता था ॥ सन्त ही स्थिर रह सकते थे ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं कैसज्ञता पि गुभरणुं दाहि संचाघिमा हुस थावं कुभुस काहु गिरीम देथा भूइ भजी ॥

इस अष्टपदी को मार्ग सिता एकादशी को जागरण करते हुए गीता पाठ के अनन्तर बारह बार जपने से भागवत धर्म का मर्म समझ में आ जाता है । और स्वप्न में किसी महाभागवत के दर्शन होते हैं ॥

अष्टपदी ॥ ६४ ॥

दिघधास दर गाडिम गुमा चिउरापचे उठसी चुमा ।
अहलेम कौंटा लिभु भुमा चड़तोस था भुतमा णुमा ॥१

काजीम कुजलम खाम जम जँह सेरू णिचढुह राम रम ।
महगीण सुपहिम लामलम टखुरी टुभिस हा फाम खम ॥२

सामी सिमामी साणुमी उथरंज धोहा फाणुमी ।
जिफरंत सिचुडा घाणुमी टिकरात टरबुज बाणुमी ॥३॥

इमुरीम ईमा उसरि मण थंजीम भिकणू तिपरि सण ।
लांडोल णिकभुम टहरिकण दहुअण ठिठारे चभरिमण ॥४॥

चखु रिमरिमा उणमिह दिमा पसउम टुमंटुर जिहदिमा ।
तरदीम किपुसा इहदिमा जासेब जुमइट रिदिमा ॥५॥

झमसी झुमासी झपुरसी डिमरंप णपुता धमुरसी ।
लिट्हं बु रोहण पथुरसी सामी तबंभभ रघुरसी ॥६॥

छभिरं टणं सहकार छित अँतरे तुरेजाँ जोग रित ।
प्राणा पणा पिण पामणित इणुघा उघामद णेकु वित ॥७॥

टरधंतु नर नारायणं इमकी मुकी षामायणं ।
तिहरी टुही धापायणं अच तंगुमैचा चायणं ॥८॥

अर्थः– उन दीर्घ पुरुषों ने जो एक ही रूप-रंग, चाल-ढाल के थे ज्यों ही अपना दण्ड आकाश में घुमाया त्यों ही भीतर से शंख ध्वनि हुई ॥१॥

उस राम नाम से रमी हुई मोहक ध्वनि से खिले कमल की तरह तुरत के खुले हुए नेत्र मुँद गये । और ऐसे मुँदे कि जान पड़ता था कि वे खड़े खड़े सो रहे हैं । और सुषुप्ति का आनन्द ले रहे हैं ॥२॥

ऐसी गहरी नींद में वे खड़े कैसे हैं ? उनके हाथों से दण्ड कमण्डलु छूट कर गिर क्यों नहीं जाते ? इस प्रकार विचारते हुए स्वामी जी के शिष्य गण उन्हें निज अनु-भव से कुछ कुछ पहिचानने लगे ॥३॥

परदा हटा कर स्वामी जी स्वयं बादल फाड़ कर निकले हुए प्रभाकर की तरह बाहर निकल आये । और उन्हें जगा कर बोले "स्वागतम् करूणा निधौ ॥४॥

उसी क्षण उनकी विशाल आँखे खुलीं, इच्छा भर दर्शनामृत पान करने के लिये उत्सुक थी हीं । उनके प्रसाद से जनता को भी दुर्लभ दर्शन प्राप्त हो गये ॥५॥

हृदय से लगा कर वैसे ही मिले जैसे राघव चित्रकूट में मुनि वेष में । स्वामी जी स्वागतम् करुणानिधी उच्चारण करते हुए बड़ी शीघ्रता से बढ़कर उनके बराबर हो गये । और हृदय को हृदय से लगा लिया । अपूर्व आनन्द छा गया ॥६॥

स्वामी जी ने मानस पूजा रसाल-फल–योग रूपी पाकड़ फल और ध्यान रूपी पिप्पल फल–पंच गुप्त प्राण के गुह्य रस रूपी पाँच अन्न के दाने–और सप्त भूमिका ज्ञान रूपी सातों मृग मद से उनका भिक्षा पात्र भर दिया ॥७॥

तब तो वे निहाल हो गये और बोले हमारे दर्शन को आप जा रहे थे, कठिन मार्ग में कष्ट से जमात समेत आपको बचाने के लिये हम नर–नारायण यहीं पर पहुंच कर दर्शन और मधुर बचन से परम सन्तुष्ट हुए, वे तुरत अदृश्य हो गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टके ह्यूमाधोहि तुगंड़ा खे चो ओ भा जाणुं कुरपा मुंगा धुरता ऊपता उणुहा सिमडा साबिणु तुरा जिपु दिभा पुह ॥

इस अष्ट पदी को पीपल के पत्तों पर रक्त चन्दन से लिखकर श्रावणी पर जल में सेरवाने से–मानसी पूजा साम्य योग और निःश्रेयस ज्ञान का द्वार उन्मुक्त हो जाता है ॥

अष्ट पदी ॥ ९५ ॥

ताधीत बुण वृंदाबणे माहीत उल्ला सारणे ।
तजकीह सिझटण कासणे उपताद आहिल जाजणे ॥१॥

ब्रज बेहु साभिर लोहती गणवाथो रहती टोहती ।
मिकवाह तैपम चोहती लंका सुणा सिम छोहती ॥२॥

चमिरंभ दिकुहा धोपुहा उझकाण ओबिल सोपुहा ।
णस काट टामिह लीपुहा जुगराण छुकटा सोपुहा ॥३॥

हमुहार लियणा पसरिबी लुकछाछ चिण्णा हपरिबी ।
अभुलेम झुर्रा मकरिबी डामिल तघंचा कसरिबी ॥४॥

घिवरौंत पोल्हा पस मिजा सकभाण गो आणु धिजा ।
उभिहार दिअचा लूभिजा अकरूह गंजा दूलिजा ॥५॥

कतभास पेखा उस लणं गंटूर किसुरापम जण ।
ओचियार टेहम टिपकणं बझबाट विकुचाटी पणं ॥६॥

तगसोम जोगाणद चू बजबोत विणवम रामुहू ।
सौजिम झपाणी ताभतू अंतेप उचडिघ कामदू ॥७॥

घचिफुण उचापत केरूवाँ णासीत लउधा बेकुवां ।
अछ वारि किणणा केपुवाँ उचफी मुणामिर देतुवां ॥८॥

अर्थः— वहाँ से (हरिद्वार से) जमात वृन्दावन में आई जिसके प्रत्येक रज कण में माखन चोर छिपा हुआ अनुभवी लोगों को स्थूलता से हटाकर आध्यात्मिकता की ओर खींच ले जाता है ॥१॥

वहाँ स्वामी जी ने कुमारावस्था तक प्राप्त सभी जाति के लड़कों को भोज देने की आज्ञा दी । दूसरे दिन यह अपूर्व भण्डारा होने वाला था कि रजनी के द्वितीय प्रहर में ॥२॥

एक शोभनीय कुमारी सिर पर यमुना जल का कलस लिए हुए पड़ाव पर पहुंची, कलस पुजारी जी को देकर उसने कहा—"लड़के भोजन करेंगे फिर लड़कियाँ कहाँ जायँगी ॥३॥

यह कह कर वह चली गई । और इधर स्वामी जी ने सबकी लड़कियों को भी पवाने की आज्ञा दी और धूम से तैय्यारी होने लगी ॥४॥

दूसरे दिन एक ओर लड़कों की और दूसरी ओर लड़कियों की पक्ति बैठी । सब प्रकार के षट्रस मय व्यञ्जन परसे गये । उस मण्डल क नर नारी इस अपूर्व भोज को देखने के लिये एकत्र थे ॥५॥

इतने में आठ वर्ष की एक गोरी कन्या और नव वर्ष का इन्दीवर सरिस श्याम सुन्दर लड़का दोनों साथ ही आ गये । उनकी ओर सब दर्शकों का चित्त खिंच गया, वे निज-२ पक्ति मे बैठ गये, उसी समय स्वामी जी पर्दा हटा कर बाहर निकले ॥६॥

उनके शिष्य योगानन्द जो बहुत पूर्व से वहाँ रहते थे । उन्हें साथ लेकर स्वामी जी पंक्ति में घूम घूम कर बाल–बिनोद देखने लगे । जब उस स्थल पर पहुंचे जहाँ अन्त मे आया हुआ कुमार बैठा था—तब तुरत उस बालक ने कहा ॥७॥

"बाबा पायस पवाओ जो तुम पाते हो ।" स्वामी जी स्वयं दौड़ कर लाये । दोनों पत्तलों पर परस कर जब अन्य कुमारों को देने लगे तब वे दोनों खा पोकर अदृश्य हो गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं बजू बदा रैण उधा कुधा सुहैण जाहु पसिणाथुं

पची णरप मेलछु परागमी हिंगा छिम समात ॥

इस अष्टपदी को वात्सल्य रस आवेशित प्राणी कदली पत्र पर अष्टकोण में केसर मसि और सिरकी के खनीसे लिख कर गंगा पूजन करे तो बाल रूप भगवान् के दर्शन प्रत्यक्ष अथवा स्वप्न में होंगे ॥

अष्ट पदी ॥ ८६ ॥

धउ भाजिणा ठुपडा सिहत तुच चित्रकूट फिला दिहत।
अचगेणु ताडव का पिहत पिहसाटु णोजी तालिहत ॥१॥

कंपा गिणी संथा सिणी बुञ केण हौधा कासिणी।
चिकसाम टहविक घासिणी महकाण कोझा तासिणी ॥२॥

मन्दाकिणी तुबि कामदा थरबीणु जोमिम रामदा।
तुथ्यां बुघातिम छामदा लुक्याट औफुट पामदा ॥३॥

अट्पी भुमौआ झाणुदर पखखी पखीचा सामुहर।
णिपधा हितासुण दापुथर चिपवा बुसंडी लाधुकर ॥४॥

पैंताभिजण कुरई सुमा ब्रसकार बेवहे जिपगुमा।
ठिपुणार बमखा चभचुमा लहटेप इशुणा दै डुमा ॥५॥

लापेलु ठबणा सिदरमे काभूह कुबेचा णिदरमे।
थपचेपु झपहा तिहरमे मतवे मुहालिम पिकरमे ॥६॥

हे तणछि झबछी तावछी पुतराम पिउटर लावछी।
तिहुराबु रौहा गावछी अचनिस प्रयागा चावछी ॥७॥

जालिह मुचुत थारापसी टपि जंथु चावज आदसी।
लेपेचु छकटिम दामसी अभतांपु थुह बाराणसी ॥८॥

अर्थः— वहाँ से अति रम्य वैराग्य, ज्ञान, भक्ति की जन्म भूमि चित्रकूट में भगवत के चरण चिन्हों से महिमान्वित हो चुकी है। और जहाँ उस प्रभु की क्रीड़ा सदा ही होती रहती है जमात पहुंची ॥१॥

स्थानाधिपति आशुतोष ने स्वागत के लिए चन्द्रमा को दिव्य फलों के उपहार के साथ भेज कर यती रूप से स्वयं पायस लेकर पहुंचे, कुमार ब्रह्मचारी रूप से साथ ही थे ॥२॥

मन्दाकिनी जी और कामदानाथ जी के बीच में जमात पड़ी थी। रामजी को प्राप्त कराने वाले स्वामी जी ने वैसे ही गुणों से सम्पन्न यति रूप धारी, कल्याण कारी (शिव जी) के स्वागत सत्कार को नम्रता पूर्वक स्वीकार किया ॥३॥

खिली हुई चाँदनी में गिरिराज की परिक्रमा करते हुए सम्मिलित चरणांक तीर्थ पर स्वामी जी कुछ देर के लिये अचिन्त्य दशा में प्राप्त हो गये थे। दिव्य संगीत ने उन्हें जगा कर वास्तविक दशा में ला दिया ॥४॥

स्वामी जी जमात समेत टिक कर चतुर्मास वहाँ किया। किरात के रूपमें हर गण सब प्रकार की सेवा करते रहे। किरात राज के वेष में महादेव जी सत्संग में नित्य आते थे ॥५॥

सत्संग का महत्त्व सार्थक करने वाले संवाद वहाँ के मुनियों ने हृदय पाटी पर अंकित कर लिया—वह दिव्य रत्न समय समय पर जिज्ञासुओं को प्राप्त होता रहैगा ॥६॥

भगवान् का पुनीत मास चढ़ते ही वहाँ से विदा होकर स्वामी जी जमात समेत तीर्थ पति प्रयाग में पधारे। वहाँ एक ही रात्रि बास रहा ॥७॥

बहुत दिनों के प्रवास से थकित जमात को जान कर स्वामी जी सीधे काशी जी अपने आश्रम पर चले आये। वहाँ के निवासियों ने उत्सव मनाया ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणाऽष्टकेर धिणाहि गाथा भुगे चाणुकर सुचषा भुजे भुण पिछा झिल मिका हिरजा पुणी भा ॥

इस अष्टपदी का पाठ करते हुए कामदा नाथ की परिक्रमा करने से उपासक को दिव्य निनाद का सुख और सत्संग मिलता है ॥

अष्ट पदी ॥ ६७ ॥

दिव चंट तिणुधा कोरिया लमघा उजी फण टोरिया ।
लउ जिग्ध भकुणा ओरिया असुवार हुइणा मोरिया ॥१॥

तह भेच तिपुड़ो आमुरी अतलाभ जैघुव सामुरी ।
पच घैस खुबिला दामुरी हच फीचु बिल्ला पामुरी ॥२॥

लिह षु त सोपिट भंगिरर पइबेप तुल्ला संपिमर ।
हेवर्ट पाजिम दंति वर मटकौण णावमिट चंभि पर ॥३॥

टिठिवस तिसंपा जसुणड़ी पसतां पुसैतां मवु अड़ी ।
थिपुतं थुपैतां रमु रड़ी गियणस मुजस्सा पतुपड़ी ॥४॥

पच फेट फुर्रा णुप सिड़ा कुझपाण सोरा अपतिड़ा ।
विथुमाप तेउघा तपिड़ा चरसेब टेघंड़ा बंबिड़ा ॥५॥

बलजी भुतथरी पतगपी मुचकाटि छुमिहा कतसपी ।
खुहिया वरीणा सत अपी डिबुरंत ढेबा मत लपी ॥६॥

कबइद कुणा पादिस कुमट अंचोलड़ा दिउठा पुरट ।
है झुमिर तांपुस ही तुपट वखणेस विजगाणं उबट ॥७॥

महि हाजु बुणटं मादितं डिगलेमु दसपा छापितं ।
कबषेटु णिहुला पाझितं विकठी वुठी भच चातितं ॥८॥

अर्थः— दर्शन और सत्संग के प्यासे काशी वासी नर नारी आश्रम पर आने लगे, इसलिये झरोखा दर्शन सब समय होने लगा और पूर्व नियमानुसार सत्संग भी जमने लगा ॥१॥

परस्पर लोग लुगाई यही चरचा करते थे कि तीर्थाटन का भोज सर्व साधारण गृहस्थ करते हैं। तब स्वामी जी अवश्य ही करेंगे। उस समय हम दर्शन करके कृतार्थ हो जायँगे। हमारे भाग्य से ही ऐसा होगा ॥२॥

इस चबाव के मर्म को समझकर और शास्त्र की मर्यादा की रक्षा के लिये स्वामी जी ने श्री राम नवमी के दिन फलाहारियों को आश्रम पर बुला कर प्रसाद पवाया, उसमें व्रती भी सम्मिलित थे ॥३॥

दूसरे दिन साधुओं को छप्पन प्रकार भोग आश्रम पर और नगर के भिन्न भिन्न केन्द्रों में गृहस्थों के लिये भोजन का प्रबन्ध हुआ ॥४॥

अन्नपूर्णा जी के मन्दिर में पाँच तुलसी पत्र रात ही को पहुंचा दिये गये। प्रातः काल सभी केन्द्रों में अन्न आदि सभी वस्तुओं के टाल लग गये ॥५॥

सामान तौल तौल कर देने के लिये बड़े बड़े सेठ साहूकार बैठे थे जिनके सुन्दर स्वरूप और व्यवहार को देखकर सब लोग प्रसन्न हो जाते थे ॥६॥

तीन दिनों तक तो जो जिस वस्तु को जितना माँगता था उतना ही दिया जाता था, लोग लेते लेते हार गये ॥७॥

आश्रम पर बड़े बड़े सिद्ध परीक्षार्थ गये हुये थे। जिसने जो हठ किया उसको उसीसे सन्तुष्ट किया गया। ऐसा भण्डारा कभी नहीं हुआ था ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकं हुंजी भुरा णल सिमराणण उटकं कुरा विणी तां सिजिम चा भितु मां च कुरथा मुचे ॥

इस अष्टपदी को बारात के भोज यज्ञ के भण्डारे में और श्राद्ध के अवसर पर कदली पत्र पर घृत से लिखकर चूल्हे के पीछे रख देने से सब योग क्षेम रहता है ॥

अष्ट पदी ॥ ६८ ॥

विविलिम्वरी कासी करी सिहुघास डाउल मा मरी ।
उतखेंचु उदिणा रम सरी सांभेचरी धामे चरी ॥१॥

मचरील डिउहा जोह बब उंफात अचलिम लोचलब ।
तिमुहाटि टिचुटा सोत सब्र अकड़ेड उघरा भिच तडब ॥२॥

सेउगाति वरचम पैचुरी मचगाम फचपा चैंचुरी ।
गिषाण जसरब थैंचुरी उघटाउ तासुव दैंचुरी ॥३॥

चमुपाहु ड़ीदा आमिदा चपणास कुलहा पामिदा ।
चागसामदा तुण खाहिदा चारिछु जुवैथम काहिदा ॥४॥

हुणि चाभ रिंगा हुमपमा उकजाम जणुबासी लसा ।
मणुबेट बकटा सिप गसा णझगोण फौबा रौहसा ॥५॥

सचवार टंभित दायरा मिखवा जगतगुरू आयरा ।
पंसिझ बरैटा णायरा घिछु आप तुइया मायरा ॥६॥

सौगत सेवाड़ुण झमदिणा टुक झाम झापी मादिणा ।
चप वेस बासिक चादिणा धम्मा धुमासा सादिणा ॥७॥

अवयास मर भौणी चुता तकफेण कुझ बाटी बुता ।
तछरं तुरं जइ भिस उता छसि गेंदु चुह हासू पुता ॥८॥

अर्थः— आनन्द कानन काशी में निःशंक विचरने वाले मत्त दिग्गज के समान दिग विजयी सुधी गण विद्या मद से चूर झूमते हुए एक दिन सन्ध्या समय यहाँ (आश्रम पर) आये ॥१॥

आश्रम के प्रभाव से उनका मद उतर गया और वे आत्मानुभव की सीढ़ी तक ऐसे पहुंचे कि वे यह भी भूल गये कि वे किस लिये यहाँ आये थे ॥२॥

पूर्व जन्म की भूली हुई कृतियों की तरह केवल संस्कार मात्र से स्मरण करने लगे । उस हेतु को जिससे प्रेरित होकर वे आये बहुत विचारने पर उन्हें वह बात याद आई ॥३॥

वे स्वामी जी के सम्बन्ध में, उन्नत, श्लिष्ट आदि गुणों से पूर्ण गीर्वाण भाषा में एक प्रशस्ति बना लाये थे । सुनाने के लिये सावधान होने पर पत्रिका निकाली गई और सुनाई गई ॥४॥

उसमें उदित हुआ सुधाकर निष्कलंक था । प्रताप रूपी सूर्य्य की वर्णना भी उत्तम कोटि की थी । अग्नि से तुलना करने में तो प्रशस्ति कारों ने अपनो काव्य का अच्छा परिचय दिया ॥५॥

अन्त में सरलता पूर्वक कहा गया कि आप वस्तुतः जगद्गुरू हैं । शाश्वत हैं, और सदा तुर्य्यावस्था में ही लीन रहा करते हैं ॥६॥

बोध जैन से लेकर समस्त आस्तिक मत पंथ सम्प्रदाय को आप से अनन्त उपकार हुआ है । धर्म की दृष्टि में सब बराबर हैं । इस सत्य को आपने करके दिखा दिया है ॥७॥

महाराज ने उस विशिष्ट पद का कर्मधारय परक अर्थ करके अपने संकोच को प्रकट किया । उसने पण्डितों को भी संकुचित कर दिया ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टकेर दामिति साणु बधूरिम गाति रोषु बहाजुपोति सुभाजितम महि चाचु खर वदल धूण ॥

इस अष्टपदी को पाठ और भाव चिन्तन से (एकान्त स्थल में) अहं बृत्ति का संकोच होता है और मनोनाश की युक्ति सूझती है ॥

अष्ट पटी ॥ ६६ ॥

कुदुलाणसा जिहु देगड़ा उलु पाण डादित थेगड़ा ।
अहतेम ताविस भेगड़ा महसो लसोटा पेगड़ा ॥१॥

अभिहात कुसणा टाजिमट कुकुरास काणप पाटिसट ।
मजुमेर टामण काहि कट जंपरणु घामण गाड़िहट ॥२॥

चविरेर तौसू लामिणी फुचु भाउ टेहता जाणिणी ।
चिषुही चुरीणा गासिणी हसुआहि डिमटा साविणी ॥३॥

चसणेप टिभुरा ओसुबा अपरेड झाभी तोपुबा ।
बिगवा विभासुह लोउबा छमुचा छुथैया कोमुबा ॥४॥

दयिणाषु झपधा तौरहय देदत्त तयणी ताधिव्रय ।
मजुषाणु पासा थाणु रय पिहवे पुजणिहा छपणि.लय ॥५॥

फचुटीम पांचह णामुची अकधापु तुर्हा तामुची ।
लुकु साय बाथा फामुची णिजड़ा डसैहा जामुची ॥६॥

सम धातु धाडिप जाकुपत मकणासु धौवा टापुचत ।
तिमसीप णर्मिच कालु छत मुपराम कोइड़ा गासुणत ॥७॥

थमरेर धुरणासी लुवर पहरीम पिहुणापी टुवर ।
भक मीप चउ मरमी चुवर अदवीच औताझो उवर ॥८॥

अर्थः— विद्वानों के संकोच को शमन करने के लिये स्वामी जी ने पहले तो उन्हें नारिकेल, पटुका, पीताम्बर और एक विचित्र मेवे से सत्कार किया। पीछे उनके हृदय कमल को प्रस्फुटित करने के लिये बोले ॥१॥

श्रुति शास्त्र की विवेचना जब विद्वान् कर चुकता है तब वह अपना हृदय टटोलता है कि मुझे क्या मिला ? यदि उसे सचमुच कुछ प्राप्त हो गया होता है तब तो वह उस रत्न का यत्न विचारने लगता है। नहीं तो पछताने लगता है ॥२॥

आप सब ऐसे विद्वान हैं जिन्होंने आम्नाय सिंधु को मथ कर, नहीं चौदह तो कुछ अमूल्य रत्न अवश्य ही प्राप्त किये होंगे और उनके यत्न के निमित्त एकान्त में मनन शील हो गए होंगे ॥३॥

इस पर सब विद्वान विचार मग्न हो गये। फिर सबने बारी बारी से निज निज रत्नों की परीक्षा करायी। ऐसा पारखी मिलना भी तो कठिन ही था। हृदय खोलकर कह पड़े ॥४॥

उन रत्नों में से पाँच का उल्लेख करते हैं। क्योंकि इन्हीं पाँचों विद्वानों के रत्नों को दिव्य पारखी ने बहुमूल्य बताया। और पारखी जौहरी बना दिया। १—देवता वा प्रयोजयेत् २—तद्विपरीतः श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञ विज्ञानात् ३—यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी। ४—चतुर्थं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः। ५—ता एव स बीजः समाधिः ॥५॥

तुमुल स्वर से हुई शंख ध्वनि ने उन पाँचों तत्वान्वेषियों को ऐसा बोध हो गया कि कृतकृत्य हो गये। और शेष लोगों को पात्रानुसार बोध हुआ। विमुख कोई न हुआ ॥६॥

फिर देश कालानुसार विदाई के तौर पर सन्त के दरबार से उन्हें चार उपदेश दिये गये। धर्म में रति, परमार्थ में मति शुभ गति दायिनी है। समाज रक्षा एकान्तिक विचार से सम्भव है ॥७॥

धर्म नीति में कुशल पण्डित विष्णु का हाथ है। दुराग्रह, दुराव दंभ और दर्प रूपी दानवों का नाश करते रहना चाहिये। विष न पीकर अमृत ही पीना चाहिये ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणाष्टके भे वे चे णे कुरंज भतु धोपहु राम स्माकं भजेप्पुहु तराकी बाहांसु भुधातु मसे जभि रूभ तहा ॥

इस अष्टपदी का पाठ करके शास्त्र परिशीलन से भावार्थ तुरत हृदय में खचित हो जाता है। और सन्देह भ्रम का नाश होता है।

अष्ट पदी ॥ १०० ॥

कुजणोथ थौरस थाम सस उणहांभ झविणा दाठ ठस ।
तुकटेर स्वाफी ताण णस चिट्टवाह जोहुणा लाप पस ॥१॥

मदराम उपटाहण हुई चटखाम मुणहा मह मुई ।
वपिरौण लछुजा चण चुई सिपलेष तरूचा जंबुई ॥२॥

हुज हुज हुजी जाहुर बुही तभषाम तारोणी दुही ।
लौघच अफच मच मा मुही हैं हे हणा पझ पापुही ॥३॥

तरभेह सेह झाणत णुकत अझपण उबैपठ मट बुपत ।
लजही पही झुण लर चुहत लटखे खुपैमझ पट उटत ॥४॥

छभि गंमिला भुर भेमटुर अंढेम अवचट फाबठुर ।
गदरी गुपीचा झब्बढुर लजणेस तइपण चामधुर ॥५॥

केल भिच भटारक आहिदी मिचगारि पहधा साहिदी ।
णिम धाम बलभी लाहिदी असरीम फइहा दाहिदी ॥६॥

लमिरंघ रौणामक झुपू टाणीप जणुदाथी खुपू ।
मफरेंग चइहमधी उपू समुचेंह चौगाणक तुपू ॥७॥

तबरी तुरी चाभी चुबी मपषाण दैवहती रूबी ।
ढलुहा ढुलूहा अट्टमबी इणु इहट रौणाही लुबी ॥८॥

अर्थः— एक दिन गंगा पर्व पर आये हुए भिन्न भिन्न सम्प्रदाय के साधुओं का समागम इसी आश्रम पर हुआ । बड़ा भारी भण्डारा हुआ जिसमें सब भेद भाव त्याग कर सबने एक पंक्ति में बैठ कर प्रसाद सेवन किया ॥१॥

उन साम्प्रदायिकों में कुछ सद् गृहस्थ भी थे । जब सब लोग निश्चिन्त होकर शान्त चित्त से बैठे तब स्वामी जी ने सबको दर्शन देकर कृतार्थ किया और बड़े प्यार से अमृत बाणी बोले ॥२॥

आज भगवान ने सहस्त्र मुख से भोजन किया है । अघा कर भोजन किया है । और अपूर्व आनन्द दिया है । जिसे भूल जाना कठिन है, भगवत्प्रसाद मयी वृत्ति आप की जाति पाँति बड़ाई की जड़ अहंकार को समूल नष्ट करने वाली है ॥३॥

ऐसा कौन मूर्ख होगा जो अहंकार रूपी सर्प को पालेगा और अपने आध्यात्मिक जीवन से हाथ धो बैठैगा । भगवत् भक्त ऐसा नहीं कर सकता ॥४॥

आध्यात्मिक स्वतन्त्रता और सामाजिक बन्धन के बीच की स्थिति भयावह, शोच नीय और दुखदायी है । अपना शिर अपने हाथ से काट कर हथेली पर रख कर चलने वाले ही उस दयामय के चौखट तक पहुंचते हैं ॥५॥

उपदेशामृत पीकर मस्त हुए लोगों में भट्टारक जी गद्‌गद कण्ठ से बोले " नाथ ! आज इस बृद्धावस्था में मुझे महा प्रसाद की महिमा से परिचय हुआ । सारा जीवन भगवत् चरणों से विमुख होकर खपाया ॥६॥

इस पछतावे को कौन मिटा सकता है, यदि सन्त की कृपा न हो । सो मुझे इतना साहस दीजिये कि मैं नंगी तलवार भाँजता हुआ शत्रु के गढ़ में घुस जाऊँ और इन्हें मार कर ढेर कर दूँ ॥७॥

आज्ञा हुई "तलवार तो तेरे पास है नहीं कैसे क्या करेगा ? पहले रसना और उपस्थ के संयम से जो धैर्य तुझे प्राप्त हुआ था वह भी तो रक्षित नहीं रहा, अच्छा! जिसको जैसी इच्छा है सो सब, सबको देता हूं ॥८॥

अनुष्ठान विधि–इयं चार्पणास्टकं वा जिपराउ छे चा मथे लोखम घुसतां मुसतां कणंतु

सुपधां विभ हवै गसेह णो पित्वाम् ॥

इस अष्टपदी को नाग पंचमी के प्रातः काल सूर्योदय के पहले गंगा जी में स्नान करते हुए पाँच पाठ करने से धृति एवं तितिक्षा की प्राप्ति होती है । जो साधक के लिये दुर्लभ है ।

अष्ट पदी ॥ १०१ ॥

बसुयैव योणिभ तारमू थुफलामि दिथहा थारमू ।
लवलेक झिपता कारमू चटभेम पिहुटा पारमू ॥१॥

टाभी उब्बर्रा देघ चण उसमा सुमा सिप लैंथ पण ।
ठचगेर गिबुणा मेथमण फरचिस भुगैंधा गेथगण ॥२॥

महबास मुकुणा रम रूमा तइ बेह मिकजा गम तुमा ।
चोभेल माकिफ फम फुमा हाचार तुभचा चमचुमा ॥३॥

वगिसर मुसा झिणु साहियां तमझाम कुर्वण काहियां ।
ओफाक पूरा गाहियां चघणेपि धट्टा लाहियां ॥४॥

धबिला इला पानत पखा अघिडा दुतै भूसहो सखा ।
लिकुटास तह वुजमा भखा जउभिम उडातहगा हखा ॥५

लहलुज णिबाहत अंठुरे तमुभो जुभीगा थंभुरे ।
चुतची चोहायत जंतुरे ढियमाभु झइटुह हंबुरे ॥६॥

सामी अचभणा सिफुरिता दिस हंबुता फिह किपुरिता ।
चदराम चौणा पिछुरिता हफ झीण धुभिछा लिहुरिता ।७।

मचुभेह ललणा लोलणा टिपि बाभु फियतुँ ओलणा ।
किचि गहपु संघा होलणा मउ भीमु भीमा जोलणा ॥८॥

अर्थः— उस दिन सत्संग से उठने का मन किसी का न चाहे। पापमोचन पुण्य दर्शन के आनन्द को कौन छोड़ना चाहेगा। वहाँ चुपचाप बैठने में भी तो बड़ा आनन्द मिलता था। तिस पर उपदेशामृत की वर्षा ॥१॥

एक सज्जन ने खड़े होकर विनती की "हे सबकी कामना पूर्ण करने वाले ! मेरी भार्या शान्ति जब से स्वर्ग को चली गई तब से नाना प्रकार के क्लेश भोग रहा हूं। उसको यहाँ बुलवा दीजिये या मुझे वहाँ भेज दें ॥२॥

आज्ञा हुई स्वर्ग में भी तेरे नाम पर रो रही है। उसके वास स्थान को शुद्ध करो, उपयोगी द्रायों से तथा सुगन्धित वस्तुओं से उसे सजो तब वह अवश्य आवेगी।३।

झिणु भगत ने पूछा कि जो सुख अभी सबको भोज में प्राप्त हुआ है वह क्या दूसरे भण्डारे में भी हो सकता है ? आनन्द का मूल हेतु क्या है ? ॥४॥

आज्ञा हुई—जिस भोज के मूल में श्रद्धा है, मध्य में सखा भाव अर्थात समानता का व्यवहार है औप अन्त में सत्कार है उसमें अवश्य कुछ आनन्द मिलेगा ॥५॥

अहंकार का अभाव ही आनन्द का मूल हेतु है। उसके अभाव में वहाँ परमेश्वर की प्रतिष्ठा होती है। जो पंक्ति में बैठकर जीमने वालों की जिह्वा पर विराजमान भोज्य पदार्थ का स्वाद ग्रहण करता है। और तृप्त होता हैं। वही उसकी तृप्ति आनन्द का हेतु है ॥६॥

अनन्तर स्वामी जी श्री राम ध्वनि के साथ गुफा में गये। और आश्रम वासियों को छोड़कर और सब लोग अपने अपने स्थान को गये। आनन्द चर्चा होती गई ॥७।

उसी समय ललनाओं की एक टोली एक बच्चे को लिये पहुंची। बेटा बेटी किसी के चिन्ह उसमें उदित नहीं थे। बड़ी प्रार्थना पर आज्ञा हुई। तेरी चाही बात अभी होगी। लवण मत खिलाना ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणास्टके जंभालिरैके मुघासं पचाय जुपां ताम घी चा हुति समरि पुहापे धुणा चे मघो चा पहेणु ॥

इस अष्टपदी को सात बार पढ़ कर रेखा खींचे उस पर आसन बिछा के भजन करे। तो आसुरी बाधाओं से बचे और यदि बच्चों को इसे पढ़ कर पुटी दे तो पसुली रोग दूर हो ॥

अष्ट पदी ॥१०२॥

तबि सलिल सा जुज माणहू सनि सैफरूस्सा हाणहू ।
चिभिधै फकीराँ वाण हू जोगी जुगुण्णा पाणहू ॥१॥

चौका सिमाबब सालु रब हतरीह टेभा चम सुरब ।
अगता चुता तिमुहौ हुरब सत्तांणुतां बी सब कुरब ॥२॥

हचघाण चुघटा जाहिया मघमेड़ मोहसा छाहिया ।
जाविभ विरंटुर लाहिया भुइषी उषी पी पाहिया ॥३॥

छरू मेर सामी दाणिया पझगेर आणी ठाणिया ।
हजुभर उसरता राणिया लगुटैंप जिकड़ा पाणिया ॥४॥

जिमुहार जौहल लाबुकल मतलास किहुणा आबुसल ।
उभियाड़ दिउमस ताबुतल कचणा चुणा पिघया बुहल ॥५॥

लपसिगु विआहुण बासुरण लमधुर लुकंटा का पुरण ।
विरिआ मिछुंभा लाहुरण उणहो लहो सुब जाकुरण॥६॥

मइपी मुपीचा मच्चुई हउफट गणब्बा सच्चुई ।
पुत खाण पिहचा लच्चुई लमणेगु महवा फच्चुई ॥७॥

उर्जहिसु दौकट बुहचुपा झुप सिह तड़ा सह लुह लुपा ।
पटवो पवो सुह जुह जुपा अमुतराम अशाणा तुह तुपा ॥८॥

अर्थः— जगह जगह से दूर दूर से सिद्ध सन्त दर्शन के लिये आने लगे। प्रति दिन इन महात्माओं की भीड़ रहने लगी। फकीरों और योगी यतियों की प्रधानता थी। वे भिन्न भिन्न मत के थे ॥१॥

महाराज ने उदारता पूर्वक परदा हटा दिया। सबको सब समय दर्शन हो सकता था। पूजा के समय को छोड़कर। सन्तों के समागम से हर घड़ी सत्संग छिड़ा रहता था। और अपूर्व आनन्द प्राप्त होता था ॥२॥

उनकी पारस्परिक प्रीति, उनका मधुर भाषण, उनका भव्य दर्शन, सभी बातें आनन्द देने वाली थीं। ज्ञान विराग और भक्ति के दुरूह तत्वों पर गम्भीर विचार सुनकर मन दिव्य लोक में पहुंच जाता था ॥३॥

उदार दानी स्वामी जी षड् दर्शन के साथ ब्रह्म विद्या के गुप्त धन को निकालकर लुटाते जाते थे और सज्जन लोग उत्साह पूर्वक उसे ग्रहण करते जाते थे। वह भण्डार चुकने वाला नहीं था ॥४॥

छाती और मस्तिष्क को एक सीध में साध कर हृदय हाट में प्रवेश करना चाहिए अच्छे अच्छे सौदे करके राजा की कचहरी में जाना चाहिए जहाँ सौदे की निकासी होती है और तुलाधार रहता है ॥५॥

साग पात के क्रय करने वाले बहुत होते हैं। परन्तु हीरा के हेरने वाले जवहरी बाजार में जाते हैं और मणिमाणिक्य की छान बीन करके अच्छा सौदा करते हैं ॥६॥

इस प्रकार की वार्ता सत्संग में हो रही थी, कि जगद्‌गुरु ने हँसकर कहा 'भाई ! एक हीरा मुझे भी चाहिये लेते आना और कचहरी के अध्यक्ष से जँचवाते आना।" यह सुनकर सब लोग संकुचित हो गये ॥७॥

तब उनके संकोच को दूर करने के लिए महाराज ने शंख फूँक कर सबको निद्रित कर दिया और हृदय हाट को सैर करा कर सबका दामन हीरों से भर दिया। वे मालामाल हो गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि

इयं चार्पणाष्टकेर लिहुसा मके चा भुदं पाकि रासि हपरी वाणु संभाजु गासि पुकरां पुह चमे घालु वंति ॥

इस अष्टपदी का चिन्तन पूर्वक जप अन्तर्मुखी बृत्ति का हेतु है। और अर्थो को दीप मालिका की रात्रि में नाग वल्ली पर लिखकर श्री को पूजन करके सुकोश में रख देने से वर्ष भर सुख से बीतता है।

अष्ट पदी ॥ १०३ ॥

गोहम्बिदा भुभकाण उर मंधस मिहा सिब चाकणुर ।
फचिताच हाड़ा बाहकुर रिलिहा जवाषित लाम चुर ॥१॥

दिउपा चुता दह मासिवा लउभी जुमैटा णाकिवा ।
दिकतां धुतंतां हारिवा छहणे कपैया डातिवा ॥२॥

पुतभिम पुखैतह कोलकी मुहमिर कररहत थोलकी ।
लिजगां सुभाँछिर ओलकी धबुणस तवैथत जोलकी ॥३॥

हब हिस्सु पहढ़त जीरवां घचघिमु पिणालुच हीखां ।
रामा रमणथुँ तीर वां धेम्ही जआदन गीरवाँ ॥४॥

सकुभाणड़ा दैकाणऊ तभिरा पिवातुत वाणऊ ।
लचिदेकु जंता ताणऊ फबि हंबुणासी भाणऊ ॥५॥

मझ्गाण बासिम कैरमुण चुबिधाण लासी तैह तुण ।
छिप्रा झिपंटा लैतहुण धिगुब्रा भुगासम बैम चुण ॥६॥

तापी तड़ा इचुही मुही लिचुही लबर टासी कुही ।
झपसी तसीभर मीतुही महगे फगे सरती दुही ॥७॥

चौटेर जाभुव माणसर हाधे हुधे चा आणकर ।
पइटण घुमाचर भाणमर ताहीड़ किबुणा पाण फर ॥८॥

अर्थः— पश्चिम देश से रिलिहा स्वामी के युगल शिष्य सर्पराज चाकणूर और व्याघ्रराज हाड़ा बड़ी तेजी से सन्ध्या समय आये। उनके आगमन से नगर भर में कोलाहल मच गया ॥१॥

कितने सिपाही उन्हें मारने के लिए शस्त्र लेकर दौड़ पड़े—परन्तु उनकी फुफकार और दहाड़ से उन्हें प्राण लेकर भागना पड़ा। आश्रम की भीड़ भी तितर बितर हो गई ॥२॥

केवल स्वामी जी के निर्भीक शिष्य वहाँ डटे रहे। उन्हें किसी प्रकार का खटका नहीं मालूम हुआ। उन्होंने भयभीत लोगों को भी आश्वासन दिया और भय मोचन किया ॥३॥

हिंस्र अतिथियों को सत्संग भवन में आश्रम दिया और श्री जानकी रमण की दुहाई देकर जय जय कार ध्वनि से उनका स्वागत किया और हृदय से सत्कार किया ॥४॥

पूजा का समय होने से महाराज गुफा में रहे। समाप्ति पर शंख ध्वनि हुई जिसे सुनते ही वे दोनों काल स्वरूप जीव मस्त हो गये। व्याघ्र स्वर में स्वर मिलाने लगा, और सर्प नृत्य करने लगा। यह दृश्य अपूर्व कौतूहल बर्द्धक था ॥५॥

जैसे भृंगी नाद से कीट का रूप रंग बदल जाता है उसी तरह शंख-ध्वनि के प्रभाव से देखते वे देव रूप को प्राप्त हुए। स्वामी जी ने बाहर आकर उन्हें दर्शन दे कृतार्थ कर दिया। अपने को धन्य मानकर वे गद्‌गद कंठसे स्तुति करने लगे ॥६॥

हे दया निधान आपकी जय हो! हमारे गुरुदेव ने जिस लिये हमैं यहाँ भेजा था वह कार्य हो गया। तिर्यक् योनि में प्राप्त हमैं गुरू के उपदेश से बोध हुआ। चेते। परन्तु ज्ञान अग्नि में कर्मों के दग्ध हुए बिना हम सिद्ध स्वरूप को नहीं प्राप्त हो सकते थे। सो आपकी कृपा से हो गया ॥७॥

आज्ञा हुई—अब आप लोग अपने गुरू के पास पहले जाइये। तब देव लोक को जाइयेगा। उनसे कहियेगा कि इसी तरह भव सिन्धु में बहते हुये जीवों को उपदेश देकर तारा करैं। साष्टांग प्रणाम करके वे नभ पथ गामी हुए ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकं गिसाणु घुमेहत गुरे सामु तो चिघुरो पियतुणा झबारूक मदीथ चुहै सामु पद्धे बराहे चुभचे ॥

इस अष्टपदी को पढ़कर रेखा खींच देने से हिंसक जीवों से रक्षा होती है। और भजन में बृत्ति बेखटके लग जाती है। भय नहीं लगता ॥

❖ अष्ट पदी ॥ १०४ ॥ ❖

धर जेदु दिक वामारूकी चौमस ममूरा आरूकी ।
पगही लकंडा कारूकी जगिहा जँजीहा भारूकी ॥१॥

तलवण वुहारेंस्ताणिदुम हबिरल उहासिम टाभिकुम ।
जसुधींग टुरण। सीमिरूम हज हासि बह वर माशिबुम ।२

अमरेत उगवाणिप झिहा तिभु चण्ड करां किल किहा ।
हुफिताम धहणा सिल विहा दिक दूण दर माणप फिहा ।३॥

गोभण चुअम्बस पालियर डिप हांगिदा हुम धालिसर ।
मक चूट मिउलिम तालिहर गंजस गुजभरिण मालिमर ॥४॥

दिभुराइ यारप कादखिल हपरप चहप भौहाद हिल ।
सामी समोची फाद फिल पसिणाम झुतथा ताद दिल ॥५।

अजगम जदण्णा तिहु पिहू पघि ओर फालट चिहु चिहू ।
मत लीम रौघा लिहु लिहू गंबी चुमेपट रिहुरिहू ॥६॥

लघिमाणु रीहा मेवरी हुचहाम सापुण केबरी ।
उझियार बगबर जेबरी तणि जोभ लगसर रेबरी ॥७॥

अज ओम रित कित कसि रिवण लंकोर गौसत असहिचण ।
बेहम बगम भिह मस पिकण हभास जियणण कस दिपण ।८।

अर्थः— भारूकी नामक एक प्रकाण्ड पण्डित जो केवल बिल्वपत्र का स्वरस तोले भर पीकर स्वाध्याय करते थे और जिनके दो पुत्र और स्त्री उनकी सेवा में लगे रहते थे, अनायास ही सर्प दंश से मर गये। झाड़ फूंक औषधि आदि से कुछ लाभ न हुआ ॥१॥

तब उनके स्वजन शव को लेकर आश्रम पर आये। और डहक डहक कर रोने लगे। करूणा वरूणालय स्वामी जी ने तुरत शंख ध्वनि से उसको जीवित कर दिया। सब लोग बड़े ही आनन्द को प्राप्त हुए। परन्तु उसी समय सर्प भी आ गया ॥२॥

उसने महान पण्डित की तरह ओजस्वी भाषा में कहा—"यह पण्डित हमारे कुल का बैरी बहुत काल से है। प्रसिद्ध सर्प सत्र इसी चण्ड ने कराया था। तबसे अनेक योनियों में जन्म लेकर हमारे ही दंश से यह मरता चला आया है ॥३॥

अब आपने इसे जीवित कर दिया है। इससे हमारी बड़ी क्षति हुई है। क्योंकि सिद्ध पुरुषों द्वारा जीवित हुए को हम फिर नहीं दंशन कर सकते। उसकी अगति कुगति हो नहीं सकती। वह अकाल मृत्यु से सुरक्षित हो जाता है॥४॥

इस प्रसंग को सुनकर सबलोग चकित हुए। पण्डित परिवार दुःखी हुआ। स्वामी जी ने उस महा सर्प को समझाया—सुमधुर गीर्वाण वाणी में "प्यारे तुम्हारा कहना ठीक है। परन्तु यह कार्य दया वश अनायास हो गया है। इससे जगन्नियन्ता की अभिरुचि प्रकट होती है ॥५॥

जब एक बार भी बैर साधने के कारण परमेश्वर से विमुख होना पड़ता है। तब जन्म जन्मान्तर बैर साधते जाना और उसकी इति श्री कभी नहीं चाहना आप जैसे बुद्धिमानों को शोभा प्रद नहीं है ॥६॥

यदि श्री हरि की प्रेरणा से ऐसा हो गया तो आपको और आपकी जाति मात्र को प्रसन्न होना चाहिए कि उस बेचारे ब्राह्मण के लिए हरि सन्मुखता का द्वार उन्मुक्त हो गया जिसके मुखिया शेष जी हैं ॥७॥

इस उपदेश को सुनकर वह विप्र वेषधारी नाग पानी पानी हो गया। शरणागत हुआ और वह पण्डित भी परिवार समेत शरण में प्राप्त होकर कृतार्थ हुए ॥८॥

अनुष्ठान विधि——इयं चार्पणास्टकं ठिगुणा कुरस्तां गुणाता तीजुसं पीहुणा चे भुसं भा कुहा सुण ऊभा ॥ इस अष्टपदी को सर्वग्रास ग्रहण में १२१ बार पाठ करके रेखा खीचते हुए जगा लेवें तो झारने से सर्प दंश दूर हो ॥

अष्ट पदी ॥ १०५ ॥

फिजिकाण गौभस णूलड़ा आताम तुबणर कूलड़ा ।
पैपाच ऊडा तूलड़ा भसु आभ चीहुणा चूलड़ा ॥१॥

पाचीघ पबणा मत्तती णैफेंज धीपा वत्तती ।
अदहुम विसाचप चत्तती मजकिम बुघपह छत्तती ॥२॥

डह कूलड़ा सिम जालबू लतणेड़ लाउस मालबू ।
दिघराणु जोझिम डालबू पहटा सुबेला लालबू ॥३॥

मपि णूलड़ा दमई मुधर अबवीत उचणा उमहिरर ।
धहतेस दिकणुर आमसर चर्तुरिभ हैमट सस सिपर ॥४॥

मछमीह जभतुर ताहभिचु अघरेंचु लणघा लापरिचु ।
मड़फेचु लपहणणारकिचु गभु आणु चरचिल डासहिचु ॥५

कचुलाम तिरझण दाव दिउ मपहेभ राणिचु मावलिउ ।
अपटिर सुमासिण धावपिउ चकराभि संसत लावणिउ ॥६॥

तं सं कबीरा गुचणिरा लजकं लुपं कुभ टुचथिरा ।
हब इब जमी इव लुचमिरा लझगेणु चारसा मुचाभिरा ॥७॥

रपभइ सबुण विभुराचिमा लग सिहुरिआ तिब धाचिमा ।
हिबु हिसह होसिल हाचिमा जाइर तुबच्छा लाचिमा ।८।

अर्थः— एक हंस आकाश गंगा में मौज से तैरता हुआ, उसके पीछे पीछे एक कबूतर भी पर मारता हुआ, दोनों आश्रम पर उतरे। एक (हंस) तो पृथ्वी पर डुगरने लगा और दूसरा (कबूतर) स्वामी जी के कर कमल पर बैठ गया ॥१॥

जब सरसों के दाने डाले गये तब वह (कपोत) हाथ पर से उतरा और दाने चुगने लगा। फिर शुभ्रगात (हंस) के सामने दूध भरा कटोरा रक्खा गया। उसमें मिले हुये जलांश को छोड़कर वह दूध पी गया। और लोगों को आश्चर्य में डाल दिया।२।

कबूतर दाना चुग कर लौट आया। अबकी श्री चरण कमलों पर लोट गया उन दानों के लिये उसकी अन्तरात्मा कृतज्ञता प्रकट कर रही थी। कई बार लोट पोटकर वह फुर्र से उड़ गया और न जाने कहाँ गया ॥३॥

रह गया हंस, वह भी डुगरता हुआ आया और चोंच से चरण स्पर्श करके हट गया। उसकी मनोवृत्ति विचित्र थी। उसने सांकेतिक भाषा में पर प्रस्थान की बात कही ॥४॥

महाराज के एवमस्तु कहते ही वह (हंस) उड़ गया। यह विचित्र लीला देख कर लोग चकित हो गये। शिष्य मण्डली भी सिद्ध मण्डली थी। रहस्य को मन ही मन कुछ कुछ समझने लगी ॥५॥

परिणाम सोचकर उनके चेहरे पर थोड़ी देर के लिये उदासी छा गयी। स्वामी जी के प्रवचन से वह तुरत मिट गई। महाराज ने कहा "संयोग वियोग से अतीत रहना भी तो धर्म है ॥६॥

कबीर दास ने कहा—'यदि ब्रह्म देव और धर्मराज की प्रार्थना को लोगों के कल्याणार्थ फिर टाल दी जाय तो इसमें क्या हरज है।" स्वामी जी ने कहा "वे स्वयं आकर संकेत कर गये हैं। अब टालना ठीक नहीं ॥७॥

लोक कल्याण के लिये जितने मार्ग खोले गये हैं। सबको जारी रखना और नये नये हितकर मार्ग को प्रचारित करना हमारे परम प्यारे शिष्य समुदाय का कर्तव्य है ॥७॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टके आभुचि तीउ लाहु पतो मिखं भा दुकै—भुराणु गये हि दुरंषा महिग चुते मसा गिहपहा ॥

इस अष्टपदी को अन्त समय पढ़कर सांस लेने से त्रिदोष का शमन होता है। और सद्गति की प्राप्ति होती है ॥

अष्ट पदी ॥१०६॥

मउमी सुमी जाकिण बुकी अभधूह पचणसवा चुकी ।
लकभेद लिपुहा पबधुकी पसहीम धिकुटारा मुकी ॥१॥

असही उही साही लही मचराम चाभुसली अही ।
जग झातुड़ा बत पीचही मल गाह गब्रणासी पही ॥२॥

पचु भचु मधीरा कुँदणी दिगथा थुरंसा बंदणी ।
रूट रौकिणा जिम तुंदणी अहवर हुअरथा चंदणी ॥३॥

बेहुणी हचो पिघ पास भर मुप जीहु औरस केणु चर ।
सिहुलं सुलंभित आप अर माही मुअरिला लूपलर ॥४॥

तैमुद कुसद पद बारू सद पमरिस टिहाणी लोरू मद ।
हचहा भुकरपी जील पद बचुखं पुखं किणुहापरद ॥५॥

अतवार अठमी पाह चिण दीदी दुमीदी आहरिण ।
बिप्पां भुचांसा महकिण तिसुधा मुधाथा लाह लिण ॥६॥

लुह वाचा लंपिग घासुमू बतखाछ भोड़िस चासुमू ।
णवमी अयोध्याँ टासुमू सेगा उगाढिह गासुमू ॥७॥

बगरिब बुचँटा पेमगी चिद्धाम चगपो देमगी ।
लफहिम वुझंटो तेमगी गहुसिण जुआरिस लेमगी ॥८॥

अर्थः— तत्त्व, आकाश, प्राण और मन अर्थात सं० १५१५ के मधुमास की शुक्ला प्रतिपदा शनिवार को प्रातः काल हवन कुण्ड की प्रतिष्ठा हुई और तारक महा मन्त्र का अनुष्ठान आरम्भ हुआ। अच्छे अच्छे कर्म काण्डी उपस्थित हुए ॥१॥

इधर गरीबों अपाहिजों, बेवा बेकस एवं साधु सन्यासी को जो राम जी के परम प्यारे हैं, सेवो सत्कार का उदारता पूर्वक प्रबन्ध हुआ था। बाहर भीतर के प्रेमियों का अलग समारोह था ॥२॥

उधर कामादि को पछाड़ने में बाँकुड़े वीर सन्तों का जत्था अलग सत्संग रूपीदाना पानी के लिए भूखा प्यासा पड़ा था। सब जगह स्वामी जी की ही जरूरत थी। उन्हीं को सब चाहते थे ॥३॥

इसलिए सबकी रूचि रखने के हेतु एक रूप से यज्ञ शाला में, एक रूप से दान क्षेत्र में, और एक रूप से सत्संग में विराजमान होकर स्वामी जी ने सबको कृतार्थ किया ॥४॥

शंख ध्वनि के मोहक स्वरमें मस्त लोग इस अलौकिक लीला को नहीं लख सके। केवल महाराज के मुख्य मुख्य शिष्य इस रहस्य को चुपचाप लख कर आनन्दित होते रहे ॥५॥

अष्टमी रविवार के दिन अनुष्ठान की समाप्ति पर शिष्यों सन्तों और विप्रों को सम्बोधित करके महाराज ने कहा "सब शास्त्रों का सार भगवत स्मरण है जो सन्तों का जीवन आधार है। शिखा सूत्र का आधार पादज और अन्त्यज हैं ॥६॥

भाई ! पैरों को कटाकर समाज को पंगु मत बनाना। कल श्री राम नवमी है। अयोध्या जी जाऊँगा। अकेले जाऊँगा। कोई साथ नहीं जायगा। सब यहीं रहेंगे और उत्सव मनावेंगे ॥७॥

कदाचित मैं न लौट सकूँ क्यों कि उस चिद् धाम में जो जाता है सो लौटता नहीं तो आप मेरी त्रुटियों, अविनय आदि को क्षमा कीजिएगा। यह सुनते ही सबके नेत्र सजल हो गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि---इयं चार्पणास्टकं चाहि पगु पसा भुहेतैं पुतां छुतां हुमेतम फही

वसुंट हा मा भिरं भेणं सामा रूपी ॥

इस अष्टपदी को निबृत्ति मार्ग में चलने वाला पथिक नित्य सायं काल पाठ किया करै तो देहाध्यास छूटै ॥

अष्ट पदी ॥१०६॥

मउमी सुमी जाकिण बुकी अभधूह पचणसवा चुकी ।
लकभेद लिपुहा पबधुकी पसहीम धिकुटारा मुकी ॥१॥

असही उही साही लही मचराम चाभुसली अही ।
जग झातुड़ा बत चीचही मल गाह गबणासी पही ॥२॥

पचु भचु मधीरा कुंदणी दिगथा थुरंसा बंदणी ।
रूट रौकिणा जिम तंदणी अहवर हुअरथा चंदणी ॥३॥

बेहुणी हचो पिघ पास भर मुप जीहु औरस केणु चर ।
सिहुलं सुलंभित आप अर माही मुअरिला लूपलर ॥४॥

तैमुद कुसद पद बारू सद पमरिस टिहाणी लोरू मद ।
हचहा भुकरपी जील पद बचुखं पुखं किणुहापरद ॥५॥
अतवार अठमी पाह चिाण दीदी दुमीदी आहरिण ।
बिप्पां भुचांसा महकिण तिसुधा मुधाथा लाह लिण ॥६॥
लुह वाचा लंपिग घासुमू बतखाछ मोड़िस चासुमू ।
णवमी अयोध्याँ टासुमू सेगा उगाढिह गासुमू ॥७॥
बगरिब बुचँटा पेमगी चिद्धाम चगपी देमगी ।
लफहिम वुझंटो तेमगी गहुसिण जुआरिस लेमगी ॥८॥

अर्थः— तत्त्व, आकाश, प्राण और मन अर्थात सं० १५१५ के मधुमास की शुक्ला प्रतिपदा शनिवार को प्रातः काल हवन कुण्ड की प्रतिष्ठा हुई और तारक महा मन्त्र का अनुष्ठान आरम्भ हुआ। अच्छे अच्छे कर्म काण्डी उपस्थित हुए ॥१॥

इधर गरीबों अपाहिजों, बेवा बेकस एवं साधु सन्यासी को जो राम जी के परम प्यारे हैं, सेवो सत्कार का उदारता पूर्वक प्रबन्ध हुआ था। बाहर भीतर के प्रेमियों का अलग समारोह था ॥२॥

उधर कामादि को पछाड़ने में बाँकुड़े वीर सन्तों का जत्था अलग सत्संग रूपीदाना पानी के लिए भूखा प्यासा पड़ा था। सब जगह स्वामी जी की ही जरूरत थी। उन्हीं को सब चाहते थे ॥३॥

इसलिए सबकी रूचि रखने के हेतु एक रूप से यज्ञ शाला में, एक रूप से दान क्षेत्र में, और एक रूप से सत्संग में विराजमान होकर स्वामी जी ने सबको कृतार्थ किया ॥४॥

शंख ध्वनि के मोहक स्वरमें मस्त लोग इस अलौकिक लीला को नहीं लख सके। केवल महाराज के मुख्य मुख्य शिष्य इस रहस्य को चुपचाप लख कर आनन्दित होते रहे ॥५॥

अष्टमी रविवार के दिन अनुष्ठान की समाप्ति पर शिष्यों सन्तों और विप्रों को सम्बोधित करके महाराज ने कहा "सब शास्त्रों का सार भगवत स्मरण है जो सन्तों का जीवन आधार है। शिखा सूत्र का आधार पादज और अन्त्यज हैं ॥६॥

भाई ! पैरों को कटाकर समाज को पंगु मत बनाना। कल श्री राम नवमी है। अयोध्या जी जाऊँगा। अकेले जाऊँगा। कोई साथ नहीं जायगा। सब यहीं रहेंगे और उत्सव मनावेंगे ॥७॥

कदाचित मैं न लौट सकूँ क्योंकि उस चिद् धाम में जो जाता है सो लौटता नहीं तो आप मेरी त्रुटियों, अविनय आदि को क्षमा कीजिएगा। यह सुनते ही सबके नेत्र सजल हो गये ॥८॥

अनुष्ठान विधि---इयं चार्पणास्टकं चाहि पगु पसा भुहेतै पुतां छुतां हुमेतम फही

वसुंट हा मा भिरं भेणं सामा रूपी ॥

इस अष्टपदी को निवृत्ति मार्ग में चलने वाला पथिक नित्य सायं काल पाठ किया करै तो देहाध्यास छूटै ॥

अष्ट पदी ॥ १०७ ॥

चंदत बवरटा डिस हिमी उकसाण थाभस हिस लिमी ।
तउणासि बेंथत किहपिमी लौगाणु हपणा चिप घिमी ॥१॥

दर दीहुडा थप अचण बसु इस जाण दामू दीण चसु ।
मकबेह मुहला दणस जसु ढुक मास सिभुड़ा तपतरसु ॥२॥

णगजी मुजी मासठ पवच झिगवीछु तैंणा बस लवच ।
उंसार जे पारिह थवच किह लेप धाभिण पा सवच ॥३॥

पञ्जवण बबण मचुली सबण फौसार लिसुणारी लबण ।
लम होत थपुहा चण तबग दिपरा कुबल सारण फबण ॥४॥

तहवर जुणा फिब ताणु गप लुस तीम कंदण सविण रप ।
थिउरा थुराधिह केण सप गउबी कवीरा तंभि चप ॥५॥

कज किहरिया टासण भिसत बह गेसु गुरू हाली सिसत ।
छउ बादि मत पिडुसी लिसत मपधी उधी पपधी तिसत ॥६॥

धमि तीमरा पुसथा मथर हंते हुबंते लाम दर ।
विछु करिहिणा भुतकी मगर सविरं सुर बज गीछ चर ॥७॥

पद पीठ पाहुस तेभु झिट अलमी समी गंगा चुसिट ।
लचुखेह लगवारं उमिट कसुकी मगारू लंपुहिट ॥८॥

अर्थः— सोमवार को (श्रीरामनवमी के दिन) रात्रि के उपदेश से सशंकित जनता बड़े तड़के आश्रम पर जमा हो गई। पठित और मूर्ख सभी श्रेणी के नर नारी उसमें थे। सबकी छाती धड़क रही थी, सभी सतर्क थे ॥१॥

इतने में बड़े उच्च स्वर से शंख ध्वनि हुई। मानो किसी ऊँचे पहाड़ पर से वह ध्वनि गूँजती हुई आ रही हो। सुनकर सब स्तब्ध रह गये। यह अन्तिम ध्वनि थी। इसके मर्म को केवल मुख्य शिष्य ही समझ सके ॥२॥

इस पृथ्वी पर न जाने कितने महापुरुष आये और अपना कर्तब दिखा कर चले गये। कोई रहा नहीं। हाँ! उनकी कीर्ति अचल रही। रचना का रहस्य इसीमें है, सिद्ध पुरुष तो अपनी महिमा में ही विराजते हैं ॥३॥

गुफा का द्वार खुला था मुख्य शिष्यों ने उसमें प्रवेश करके देखा। उसमें दैनिक कृत्यों के लिये सब वस्तुयें ज्यों की त्यों धरी थीं। चरण पीठ भी थे। केवल शंख और उसके फूँकने वाले स्वामी जी नहीं थे ॥४॥

गुरु वियोग के दुःख को ज्ञानी शिष्य गण भी नहीं सह सके। इस भँवरों से भरी सरिता को पार करने में कौन समर्थ हो सकता है? एक मात्र कबीर दास जी सबको समझाने बुझाने के लिये सावधान रहे ॥५॥

रोती हुई प्रजा को कौन चुप करावे। नगर भर में तो हाहाकार मच गया। धीरे धीरे आश्रम पर असंख्य लोगों की भीड़ हो गई। सब लोग सब कृत्य काम धाम भूल गये। अब क्या करना चाहिये सो भी कौन सोचे समझे ॥६॥

मध्यान्ह काल में आकाश से फिर गंभीर शंख ध्वनि हुई जिसने आबाल वृद्ध वनिता के हृदय से सन्ताप को इस तरह खींच ली जिस तरह सर्प दंश के विष को मान्त्रिक खीच लेता है ॥७॥

शिष्य गण चरण पादुका को लेकर गंगा पर गये। ज्यों ही गंगा जल का स्पर्श हुआ वह लकड़ी से पत्थर हो गया। प्रजा समेत स्नान दान कर सब लोग आश्रम पर आये। बड़े प्रेम और समारोह से उस पद पीठ की स्थापना गुफा में की गई ॥८॥

अनुष्ठान विधि—इयं चार्पणास्टकेर तु हसा चणि हुरा मित जर वीम फाहु बिणसंतं

भि पुधा मा चुठिर ढाह पहुपें सुम ॥

इस अष्टपदी को श्रीं हरि की जयन्ती पर जगावे, जागरण पूर्वक, तो प्रस्थान त्रयी का अध्ययन सुफल हो और भागवत धर्म में निष्ठा उत्पन्न हो।

अष्ट पटी ॥ १०८ ॥

अजणी सुहा सामं हुरा सामी अनन्तानँद तुरा ।
अट्ठुष उठप केमुँ लुरा पसगेथ भुरदालं कुरा ॥१॥

लेवाहसी मुस्तंषु तस पेमा विसंतिह चंतुमस ।
दिहकां कुबांसी हंबुलस तिणुही दिणाची जंपुवस ॥२॥

धिप जिम चुणाचू घेमधुर णिपहाभु चेतण दास णुर ।
वितांतवा रिष लेष उर ढिगमर सियाले पम्मढुर ॥३॥

बसुबीट किम्मर्रस मुकै पघि बेहु खुर भासत रूकै ।
उचहाँ चुमण सीजा णुकै हिचुहर हिमर थाणं पुकै ॥४॥

पलु पंभिरा सप चालुली मछुबेहरा गिण बाकुली ।
उझणै वुअर्रा छाभुली मकु मिह कुपा टुह धाकुली ॥५॥

अंजाम झण बासी लुपू देश वाड़ि प्राकृत सुमुतुपू ।
पैशाचि छबदा चिघु छुपू छंदाणु अदणा लिभु णुपू ॥६॥

लौभाणु तासभ जुपुतही थिह भिचु बताभिभु टिषुतही ।
मचुलौ रिवा सुह हिसुतही कपछण पिणसबा इबुतही ॥७॥

वास पटि सिवआ सिण बगी दिति और साहित मिह चगी ।
छुप संग पारीजातुगी हिहणेपु राम चु पातुगी ॥८॥

अर्थः— स्वामी जी के उत्सव (भण्डारे) के अनन्तर स्वामी अनन्ता नन्द जी ने धर्म रक्षार्थ आठों दिशाओं में अष्ट दिग्गज स्थापित किये। वे सब सिद्ध पुरुष शीघ्र ही अपने उपकार कार्य में तत्पर हुये जैसे सूर्य और सप्तर्षि ॥१॥

वहाँ पर सब शिष्य, प्रशिष्य समुदाय एकत्रित हुई। धूम धाम से भण्डारा हुआ जिसकी स्मृति कभी भुलाई नहीं जा सकती। क्योंकि चारों तरफ के सिद्ध सन्त पधारे थे। जिनके दर्शन और सत्संग दुर्लभ हैं ॥२॥

उस महा महती समागम में बुद्धि विवेक से हीन इस चेतन दास को आज्ञा हुई कि संघ में रहकर जो वृत्तान्त का समूह चयन किया है उसे सुनाऊँ सो सुनकर सब परमानन्द को प्राप्त हुये। यह आश्चर्य ॥३।

तब सन्तों की आज्ञा हुई कि इन गुप्त और प्रकट वृत्तान्तों को लिखा जाय, विचित्र छन्द और विचित्र भाषा में जिसे बिना समझाये कोई समझ न सके। सिद्ध जानुक द्वारा रक्षित रहे ॥४॥

क्योंकि इसमें कुछ वृत्तान्त ऐसे हैं जो प्रकट नहीं किये जाने चाहिये और कुछ ऐसे हैं जिनको उस समय तक छिपाना है जब तक वह घटना घटित न हो जाय। इसका निश्चय तत्कालीन सिद्ध ही करेगा ॥५॥

इसी विचार से यह वृत्तान्त माला देश वाड़ी प्राकृत में पिशाच (गण) भाषा के सांकेतिक शब्दों के योग से अदणा छन्द में दिव्य साहाय्य से संग्रथित की गयी।६।

उस समय से पहले जो इन प्रसंगों को खोलेगा वह पागल हो जायगा परन्तु प्रकट होने पर जो इसका पाठ करेगा उसको तत्व ज्ञान की प्राप्ति होगी। चतुर्वर्ग जनित कामनाएँ सिद्ध होंगी ॥७॥

ज्ञान भूमिका चन्द, शिव मुख, सच्चिदानन्द अर्थात् १५१७ (पन्द्रह सौ सत्रह गुरु जन्म दिन माघ कृष्ण सप्तमी भृगुवार को यह प्रसंग पारिजात राम नाम लेकर समाप्त हुआ ॥८॥

॥ इति ॥

॥ स्वामी रामानन्दाचार्य के शिष्य ॥

द्वादश महाभागवत

(१) श्री स्वामी अनन्तानन्द जी महाराज

[ब्रह्मा जी का अंश]

नाम—छन्नू लाल ख्याति नाम अनन्तानन्द जी

पिता—अवधू (विश्वनाथ मणि त्रिपाठी)

माता—"सांऊ" ग्राम के पं० विशाल देव शुक्ल की कन्या "सरस्वती" सौरिया

स्थान—ग्राम महेशपुर (सरयू पार) अयोध्या

आविर्भाव—कार्तिक पूर्णिमा सम्वत् १३६३ विक्रमी, १२२७ शाके
शनिवार सन १३०६ ई०

लीला संवरण—देवोत्थानी एकादशी सम्वत् १५४० विक्रमी, १४०४ शाके
सन १४८३ ईस्वी

(२) श्री स्वामी स्वरसुरा नन्द जी महाराज

[नारद जी का अंश]

पिता—पं० सुरेश्वर शर्मा (भोले भाले नाम से भी पुकारे जाते थे)

माता—श्रीमती सरला जी

स्थान—ग्राम "पंखम (लक्ष्मणपुर) लखनऊ

आविर्भाव—वैसाख कृष्ण नौमी

(३) श्री स्वामी सुखानन्द जी महाराज

[शंकर जी का अंश]

नाम—चन्द्रहरि ख्याति नाम सुखानन्द जी

पिता—पं० त्रिपुरारी भट्ट जी

माता—श्रीमती जाम्बुवती बाई

स्थान—ग्राम किरीट पुर

आविर्भाव—बैसाख शुक्ल नवमी सम्वत् १३७४ बिक्रमी, १२३८ शाके
शुक्रवार सन् १३१७ ईस्वी

(४) श्री स्वामी नरहर्यानन्द जी महाराज

[सनत कुमार जी का अंश]

पिता—पं० महेश्वर मिश्र जी

माता—श्रीमती लक्ष्मी जी

स्थान—बृन्दाबन

आविर्भाव बैसाख शुक्ल तृतीया शुक्रवार सं० १४९१ वि०, १३५५ शाके सन् १४३४ ई०

लीला संवरण सम्वत् १५९९ वि०, १४६३ शाके, सन् १५४२ ईस्वी

(५) श्री स्वामी योगानन्द जी महाराज

[कपिल देव जी का अंश] नाम यज्ञेश दत्त ख्याति नाम योगानन्द जी

पिता—पण्डित मणि शंकर शर्मा (मिश्र)

आविर्भाव बैसाख कृष्ण सप्तमी बुधवार सं० १४५७ वि, १३२१ शाके सन् १४००ई.

(६) श्री स्वामी पीपा जी महाराज

[राजा मनु जी का अँश] नाम—पीपा प्रताप जी ख्याति नाम पीपा जी

पिता—श्री कड़वा राव चौहान (सन्त बप्पा के नाम से प्रसिद्ध)

स्थान—गागरौन गढ़ कोटा-बूँदी के निकट राजस्थान

आविर्भाव—चैत्र पूर्णिमा सं० १४१७ बिक्रमी, १२८१ शाके सन् १३६० ई०

राज्याभिषेक—सम्बत् १४४२ वि०, १३०६ शाके, सन् १३८५ ई०

(७) श्री स्वामी कबीर दास जी महाराज

[प्रहलाद जी का अँश] देवराज बीरानन्द ज्योतिर्मठ एवं दिव्या देवांगना प्रतीची के औरस

पिता—(ख्याति नाम) नीरू

माता—(ख्याति नाम) नीमा वंश जुलाहा दम्पति

स्थान—लहर तालाब काशी

आविर्भाव—ज्येष्ठ शु० पूर्णिमा सोमवार सं० १४५५ वि. तदनुसार सं. १३१९ शाके सन् १३९८ ई०

लीला संवरण—(मगहर में) अगहन सुदी एकादशी सं० १५४९ वि०, १४१३ शाके, १४९२ ई०

]८] श्री स्वामी भावानन्द जी महाराज

[जनक जी का अंश] नाम—विट्ठल पन्त ख्याति नाम भावानन्द जी
पिता—पं० रघुनाथ मिश्र
स्थान—ग्राम 'आलंदी" पंढरपुर महाराष्ट्र

आविर्भाव बैसाख कृष्ण छः चन्द्रवार मूल नक्षत्र सं१३७६ वि०, १२३१शाके, १३१० ई.
लीला संवरण (गढ़मुक्तेश्वर में) ज्येष्ठ पूर्णिमा सं० १५३९ वि० १४०३ शाके, सन् १४८२ ई०

(९) श्री स्वामी सेन भक्त जी महाराज

[भीष्म जी का अंश] नाम—रामसेन ख्याति नाम सेन भक्त जी
पिता—उग्रसेन जी
माता—श्रीमती यशोदा जी
वंश नापित (नाऊ) स्थान बांधवगढ़ कुरुक्षेत्र
लीला संवरण स्थान बांधव गढ़

आविर्भाव—बैसाख कृष्ण द्वादशी रविवार पूर्वा भाद्रपद नक्षत्र तुला राशि

(१०) श्री स्वामी धनानन्द जी महाराज

[राजा बलि का अँश] पिता—श्री पन्ना जी
माता—श्रीमती रेवा जी
वंश—जाट
आविर्भाव—बैसाख कृष्णाष्टमी शनिवार

[११] श्री स्वामी गालवानन्द जी महाराज

(शुकदेव जी का अँश) नाम साधू बाबा (और गोविन्द दत्त)
पिता सांबमूर्ति शर्मा जी
माता श्रीमती भामा देवी जी
आविर्भाव चैत्र शुक्ल एकादशी सोमवार
स्थान ग्राम 'पवाया' (पद्मावती)
लीला संवरण वैसाखी पर्व वैसाख शुक्ल पूर्णमासी

[१२] श्री स्वामी रैदास जी महाराज

(धर्मराज जी का अंश) पिता—श्री रग्घू जी (चर्मकार)
माता - दिव्या ब्राह्मणी
स्थान—"असला" ग्राम काशी
वन्श—चर्मकार
आविर्भाव—माघी पूर्णिमा (शुक्ल १५)

विशेष अनुरोध—यद्यपि मुद्रण में त्रुटियों पर विशेष ध्यान दिया गया है परन्तु पैशाचिक भाषा होने के कारण त्रुटियां होना स्वाभाविक हैं परन्तु गलतियों को छिपाया नहीं गया है क्योंकि यह सब अष्टपदियां अनुष्ठान हेतु है ।

अष्टपदी	पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
,,	३	परमाश्यक	परमावश्यक
१	२	तिर्गति	तिञ्गति
,,	,,	धैंबड़ा	घैंबड़ा
,,	,,	पालतू	पालूत
५	१०	जवी	जंवी
६	१२	कैंवटु	कैंवट
,,	,,	ऐलड़	ऐलड़ा
७	१४	पत्याड़िया	पत्याड़िणा
,,	,,	नैयाड	नैयाड़ु
८	१६	आमोद	ओमाद
,,	,,	गंगोरुंणा	गंगेरूणा
,,	,,	आनोद	आतोद
१०	२०	झणाझणु	झणझाणु
११	२२	माटठाणु	मटठाणु
,,	,,	ददुरी	दंदुरी
,,	,,	साउस	साउद
१२	२४	पैण्णु	पैराणु
१७	३४	सुधावल	सुधावलु
,,	,,	मुकसिर	मुकासिर
,,	,,	घुण्णु	घुराणुज
,,	,,	जेलठी	जैंलठी
१८	३६	तणथा	तंणथा
२०	४०	सौरिन्दरा	सौरिन्दिरा
,,	,,	फौरोष	फैरोष
२१	४२	सउह	साउह
,,	,,	लायास	पालुस
२२	४४	कैंयही	कैंपही
२८	५६	अंघी	अंघी

अष्टपदी	पृष्ठ	शुद्ध	अशुद्ध
"	"	झीणास	झीणस
३१	६२	ज्याफेणा	ज्याफेंण
"	"	हेमूसे	हेमुसे
३२	६४	जजुस्सा	जुगस्सा
"	"	हूपैंटा	हुपैटा
३३	६६	पघणी	पघणी
"	"	पिहपा	बिहपा
३४	६८	टरामदा	टाराँमदा
"	"	बंछी	बछी
४०	८०	जैंखड़ा	जैखुड़ा
४१	८२	पंथोपड़ा	पंथोचडा
"	"	निपक्षंमरा	निपंथमरा
"	"	जफरेहु	जक्षरेहु
४२	८४	रूमयास	रुमयास
४३	८६	जगम	जंगम
"	"	जूरम्मा	जुरम्मा
४७	९४	हदुजा	हंदुजा
५१	१०२	खाजु	खाजुं
५३	१०६	झुफा	झुंफा
५५	११०	सोसमस	सोसंमस
५६	११२	कामारुकी	कौमारुकी
"	"	हौंतिगुणा	हौंतिगुडा
५७	११४	णुमंसा	णुभंसा
"	"	धिगरूणासी	धिगारुणासी
"	"	झनैसाँ	झुनैसाँ
"	"	क्रिचुटा	कुचिटा
"	"	आयसी	आफसी
"	"	पायमी	पायमो
"	"	जिखा	जिघा

अष्टपदी	पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
,,	,,	अभिर	अंभिरं
,,	,,	तषुजा	तंषुजा
,,	,,	मरिच्छा	मूरिच्छा
,,	,,	जालधरी	जालंधरी
६२	१२४	णिसिडोगु	णिसिडाँगु
६३	१२६	कुसुढ़ा	कुसुंढा
,,	,,	,,	बगण
,,	,,	हुसरे	हुंसरे
६४	१२८	णमा	णंमा
,,	,,	हुगा	हुगा
६५	१३०	चिथा	त्रिघा
,,	,,	उतफग	उतफाँग
,,	,,	बहुण	बहुणा
,,	,,	धापुण	धापुणी
६७	१३४	बचडी	बे॰डी
६८	१३६	झिबटा	भिवटा
६९	१३८	चदई	चादई
७०	१४०	जुणीयत	जुणैयत
७१	१४२	हुसिरस	हुंसिरस
,,	,,	अभिकधा	अभिकधा
,,	,,	गुभिजावण	गुंभिजावण
७३	१४६	डिपलौणि	डिपलेणि
७५	१५०	चुभि	चुमि
७६	१५२	सवचर	संबचर
७७	,,	छिपरा	छिपरा
७८	,,	पुधधारिणाछी	पुघवारिणादि
७९	१५८	कामुको	कामुकी
८०	१६०	शकर	शंकर
,,	,,	मासहु	भासहुं
८१	१६२	अटा	अंटा।
,,	,,	रंबुद	रंबुदं
,,	,,	तबुद	तंबुदं

अष्टपदी	पृष्ठ	शुद्ध	अशुद्ध
,,	,,	झीणास	झीणस
३१	६२	ज्याफेणा	ज्याफेंण
,,	,,	हेमूसे	हेमुसे
३२	६४	जजुस्सा	जुगस्सा
,,	,,	हूपैंटा	हुपैटा
३३	६६	पघणी	पघणी
,,	,,	पिहपा	बिहपा
३४	६८	टरामदा	टाराँमदा
,,	,,	बंछी	बछी
४०	८०	जैंखड़ा	जैखुड़ा
४१	८२	पंथोपड़ा	पंथोचडा
,,	,,	निपक्षंमरा	निपंथमरा
,,	,,	जफरेहु	जह्नरेहु
४२	८४	रूमयास	रुमयास
४३	८६	जगम	जंगम
,,	,,	जूरम्मा	जुरम्मा
४७	९४	हदुजा	हंदुजा
५१	१०२	खाजु	खाजुं
५३	१०६	झुफा	झुंफा
५५	११०	सीसमस	सीसंमस
५६	११२	कामारुकी	कौमारुकी
,,	,,	हीतिगुणा	हीतिगुडा
५७	११४	णुमंसा	णुभंसा
,,	,,	धिगरूणासी	धिगारुणासी
,,	,,	झनैसाँ	झुनैसाँ
,,	,,	क्रिचुटा	कुचिटा
,,	,,	आयसी	आफसी
,,	,,	पायमी	पायमो
,,	,,	जिखा	जिघा

अष्टपदी	पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
,,	,,	अभिर	अंभिरं
,,	,,	तषुजा	तंषुजा
,,	,,	मरिच्छा	मूरिच्छा
,,	,,	जालधरी	जालंधरी
६२	१२४	णिसिडोगु	णिसिडाँगु
६३	१२६	कुसुढ़ा	कुसुंढा
,,	,,	,,	बगण
,,	,,	हुसरे	हंसरे
६४	१२८	णमा	णंमा
,,	,,	हुगा	हुगा
६५	१३०	त्थिथा	त्रिघा
,,	,,	उतफग	उतफाँग
,,	,,	बहुण	बहुणा
,,	,,	धापुण	धापुणी
६७	१३४	बचडी	बेचडी
६८	१३६	झिवटा	भिवटा
६९	१३८	चदई	चादई
७०	१४०	जुणीयत	जुणैयत
७१	१४२	हुसिरस	हुंसिरस
,,	,,	अभिकधा	अभिकधा
,,	,,	गुभिजावण	गुंभिजावण
७३	१४६	डिपलौणि	डिपलेणि
७५	१५०	चुभि	चुमि
७६	१५२	सवचर	संबचर
७७	,,	छिपरा	छिपरा
७८	,,	पुधधारिणाछी	पुघवारिणादि
७९	१५८	कामुको	कामुकी
८०	१६०	शकर	शंकर
,,	,,	मासहु	भासहुं
८१	१६२	अटा	अंटा
,,	,,	रंबुद	रंबुदं
,,	,,	तबुद	तंबुदं

अष्टपदी	पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
८२	१६२	किघी	किंघी
,,	,,	होविस	होपिस
,,	,,	गषटंग	गयटंग
,,	,,	पीकमा	पीकमाँ
,,	,,	झाँमादरी	झाँमादरो
८४	१६४	अजपीथ	अजीपीथं
,,	,,	षिगहती	पिगहती
,,	,,	इबहडुरा	इबहंडुरा
,,	,,	जभडी	जंभडी
८५	१७०	चषबर	चपबर
,,	,,	जभुण	जंभुण
,,	,,	जुझारिष	जुझारिप
८७	१७४	अमगेछ	अमगोछ
८८	१७६	उझा	उंझा
,,	,,	चतसक	चंतसक
९०	१८०	युजे	युचे
,,	,,	सुघटा	सुघंटा
९४	१८७	दरधतु	दरधंतु
९५	१९०	जण	जणं
,,	,,	बेकुवा	बेकुवां
,,	,,	मुणामिर	मुणामिर
९६	१९२	बुसडी	बुसंडी
९७	१९४	षुत	षुंत
,,	,,	तपिड़ा	तंपिड़ा
,,	,,	टेघड़ा	टेंघड़ा
१००	२००	षही	पही
,,	,,	षट	पट
,,	,,	अटुमबी	अमटुबी
१०४	२०८	हमास	हंमास
१०५	२१२	मषहेम	मयहेम
१०७	२१४	सुर	सुरं
,,	,,	लगवाार	लगवारं
१०८	२१६	बगी	बुगी

अष्टपदी	पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
८२	१६२	किघी	किंघी
,,	,,	होविस	होपिस
,,	,,	गषटंग	गयटंग
,,	,,	पीकमा	पीकमाँ
,,	,,	झाँमादरी	झाँमादरो
८४	१६४	अजपीथ	अजीपीथं
,,	,,	षिगहती	पिगहती
,,	,,	इबहडुरा	इबहंडुरा
,,	,,	जभडी	जंभडी
६५	१७०	चषबर	चपबर
,,	,,	जभुण	जंभुण
,,	,,	जुझारिष	जुझारिप
८७	१७४	अमगेछ	अमगोछ
८८	१७६	उझा	उंझा
,,	,,	चतसक	चंतसक
९०	१८०	युजे	युचे
,,	,,	सुघटा	सुघंटा
९४	१८७	दरधतु	दरधंतु
९५	१९०	जण	जणं
,,	,,	बेकुवा	बेकुवां
,,	,,	मुणामिर	मुणामिर
९६	१९२	बुसडी	बुसंडी
९७	१९४	षुत	षुंत
,,	,,	तपिड़ा	तंपिड़ा
,,	,,	टेघड़ा	टेंघड़ा
१००	२००	षही	पही
,,	,,	षट	पट
,,	,,	अटुमबी	अमटुबी
१०४	२०८	हमास	हंमास
१०५	२१२	मषहेम	मयहेम
१०७	२१४	सुर	सुरं
,,	,,	लगवार	लगवारं
१०८	२१६	बगी	बुगी